DISTANCE EDUCATION HINDI
M.A. FINAL SCRIPT

Dr. Shaik Moulali

PAPER - 4
COMPARATIVE LITERATURE AND UNIVERSAL LANGUAGE

I 1. Tulnatmak Sodah aur Sameeksha
II 2. Hindi aur Telugu Kaviyonka Tul natmak adhyayan
III 3. Visva Hindi Rachana
(a) कविता
(b) कहानी
IV 4. Visva Hindi Sammelan

ACHARYA NAGARJUNA UNIVERSITY
NAGARJUNA NAGAR
DISTANCE EDUCATION
M.A. HINDI FINAL
PAPER - 4
COMPARATIVE LITERATURE AND UNIVERSAL LANGUAGE

Editor : Dr. Shaik Moulali M.A.,Ph.D.

Department of Hindi : Acharya Nagarjuna University, Nagarjuna Nagagr

Lesson Writers :-

1. **Dr. Shaik Moulali M.A., Ph.D.**
2. **Inampudi Kavitha M.A.**

DISTANCE EUDCATION M.A. HINDI FINAL YEAR
Paper 4 : Comparative Literature and Universal Language Hindi

(a)	**Name of the Book : तुलनात्मक शोध और समीक्षा**	**Page No.**
1.	तुलनात्मक अध्ययन की प्रक्रिया तथा उसकी उपादेयता पर प्रकाश डालिए।	1
2.	भारतीय काव्य साहित्य में उर्वशी की परिकल्पना	7
3.	जयशंकर प्रसाद और विश्वनाथ सत्यनारायण की काव्य प्रतिभा की तुलना कीजिए।	14
4.	सुमित्रानन्दन पन्त की तुलना अंग्रेजी स्वच्छन्दवादी कवियों से कीजिए।	21
5.	भारत की महिला गीतिकार महादेवी वर्मा और चावलि बंगारम्मा की कृत्रियों की समीक्षा कीजिए।	27
(b)	**Name of the Book : हिन्दी और तेलुगु कवियों का तुलनात्मक अध्ययन**	
6.	कबीर और वेमना की कविताओं की तुलनात्मक समीक्षा कीजिए।	32
7.	गोस्वामी तुलसीदास तथा तेलुगु के कवित्रय की तुलना कीजिए।	40
8.	गीतकार तुलसीदास तथा तक संगीतकार त्यागराज की तुलनात्मक समीक्षा कीजिए।	46
9.	सूरदास और पोतना की काव्य-प्रतिभा की समीक्षा कीजिए।	51
10.	मीराबाई और अन्नमाचार्य के साहित्यों का अनुशीलक कीजिए।	57

(a) Name of the Book : तुलनात्मक शोध और समीक्षा

पाठ - 1

तुलनात्मक अध्ययन की प्रक्रिया तथा उसकी उपादेयता

प्र.1. तुलनात्मक अध्ययन की प्रक्रिया तथा उसकी उपादेयता पर प्रकाश डालिए।

1. प्रस्तावना :-

हिन्दी में अनुसंधान की प्रक्रिया अत्यन्त प्राचीन है। गत चार दशाब्दियों से वह अंग्रेजी शब्द 'रिसर्च' (Research) का पर्याय बन गई है। वर्तमान में हिन्दी में अनुसंधान की प्रक्रिया के तीन रूप उपलब्ध हैं -

1. अनुसंधान
2. आलोचना
3. तुलनात्मक अध्ययन

इन तीनों स्वरूपों में समानताओं के साथ भिन्नताएँ भी हैं।

1. साहित्यिक अनुसंधान के तीन विशिष्ट गुण माने जा सकते हैं - (क) नवीन तथ्यों की खोज, (ख) उपलब्ध तथ्यों की नवीन व्याख्या और (ग) ज्ञान-क्षेत्र का विस्तार।
2. 'आलोचना' का शाब्दिक अर्थ है समग्र निरीक्षण। साहित्यिक आलोचना साहित्यिक कृतियों का सांगोपांग (Complete) निरीक्षण करती है। इस प्रक्रिया के पुन: तीन विशिष्ट अंग हैं - (क) प्रभाव-ग्रहण, (ख) व्याख्या और विशेषण और (ग) मूल्यांकन या निर्णय।

अनुसंधान और आलोचना - दोनों साहित्य के दो उपभेद हैं। दोनों की प्रक्रिया में भी साम्य हैं। तथ्यों का संकलन, उनकी व्याख्या और निष्कर्ष का उपयोग दोनों करते हैं। किन्तु, इन दोनों के दृष्टिकोण में भिन्नता है। अनुसंधान अन्वेषण (Search) पर अधिक बल देता है और आलोचना निरीक्षण (observation) पर ।कलापक्ष आलोचना का अनिवार्य अंग है किन्तु अनुसंधान का नहीं, यदि है भी तो गौण रूप में। अनुसंधान का उद्देश्य ज्ञान वृद्धि है। आलोचना का कार्य आत्मा का साक्षात्कार कराना तथा मर्म का उद्घाटन कराना है। हाँ ! उच्च स्तर पर जाने से आलोचना और अनुसंधान दोनों- अभिन्न होते हैं। उच्चतर आलोचना और अनुसंधान में कोई भेद नहीं है।

(3) एक ही साहित्य के या विभिन्न साहित्यों के दो साहित्यकारों या युगों की समानताओं तथा भिन्नताओं पर प्रकाश डालकर उनके कारणों का अन्वेषण करना तुलनात्मक अध्ययन है। अनुसंधान और तुलनात्मक अध्ययन नई अलग विधाएँ नहीं है। अनुसंधान की प्रक्रिया में तुलनात्मक विधान की भी सहायता ली जाती है और तुलनात्मक अध्ययन में भी गम्भीर अन्वेषण, परीक्षण और निष्कर्ष साहित्यिक आलोचना तथा अनुसंधान की प्रक्रियाओं से लाभ उठाया जाता है। तुलनात्मक अध्ययन अनुसंधान (Research) की अपेक्षा आलोचना (criticism) के ही निकट पडता है।

2. तुलनात्मक अध्ययन का महत्त्व :-

तुलनात्मक अध्ययन की प्रक्रिया अनुसंधान तथा आलोचना से भी महत्त्वपूर्ण है। वह साहित्यकार के ज्ञान-क्षेत्र का विस्तार कर प्रान्त, भाषा, साहित्य एवं देश के बन्धनों से ऊपर ले जाता है। पाश्चात्य विद्वान मेक्समुलर के अनुसार, ''सभी उच्चतर ज्ञान जी प्राप्ति तुलना से हुई है और वह तुलना पर ही आधारित (All higher knowledge is gained by comparison and rests on comparison) । तुलनात्मक अध्ययन साहित्य के क्षेत्र में एक ही साहित्य के या विभिन्न साहित्यों के लेखकों या प्रवृत्तियों की तुलना कर उनके बीच के साम्य या वैष्मय का उद्‌घाटन करता है और उनके कारणों की भी खोज करता है।''

विश्व के विभिन्न देशवासियों के बीच जाति, वर्ण और धर्म आदि के वैमनस्य (difference)होते हुए भी उनके मस्तिष्क एवं हृदय में प्राय: समानता भी पायी जाती है। चिरन्तन काल से मानव हृदय एवं मानव मस्तिष्क विकास के पथ पर अग्रसर होते आये हैं। विश्व-मानव के सतत प्रयासों के फलस्वरूप विश्व-जीवन के सतत प्रयासों को फलस्वरूप विश्व-जीवन प्रशस्त बना है। विश्व साहित्य में अभिव्यक्त मानव-चेतना एवं मानव-हृदय एक ही है। मानव-मन अपने देश, काल, भाषा एवं साहित्य के अपने सार्वभौम एवं चिरन्तन स्वरूप का परिचय देता आ रहा है। वातावरण, आचार-विचार, संस्कृति एवं सभ्यता आदि विषयों में भिन्नता होते हुए भी मानव-मन एक की साँचे में ढ़ला है। मानव की यह एकता साहित्य एवं कलाओं में अपना समग्र स्वरूप ग्रहण करती है। महाकवि वर्ड्सवर्थ के अनुसार 'थल और वातावरण, भाषा और रहन - सहन शासन और रीति-रिवाज आदि में भिन्नता होते हुए भी विश्व-समाज के साम्राज्य को कवि अपने आवेग और ज्ञान के सूत्रों में बाँध देता है।'

विभिन्न साहित्यों के अध्ययन से साहित्य के दो प्रधान महत्व दिखाई देते हैं-

1. विभिन्न साहित्यों में व्यक्त मानव-चेतना की एकता।
2. भाषा, जन-समुदाय के सामाजिक एवं प्राकृतिक वातावरण, सभ्यता, संस्कृति आदि के कारण विभिन्न साहित्य में भिन्नता।

भाषा केवल साहित्य की अभिव्यक्ति का माध्यम है। साहित्य के द्वारा मानव-समुदाय के भाव-जगत एवं विचार-जगत अभिव्यक्त होते हैं। हर भाषा की अपनी विशेषता होती है। सभी भाषाओं में भावों का अस्तित्व है। भाव मानव-निष्ठ (हृदय-निष्ठ) है और भाषा जाति-निष्ठ।

(1) भिन्न साहित्यों की भाषागत विशेषताओं में से साहित्यगत एकरूपता का निरूपण तुलनात्मक अध्ययन का मुख्य उद्देश्य है। (2) विभिन्न प्रादेशिक साहित्यों के बीच विभिन्नताओं के कारणों की खोज करना भी उसका दूसरा उद्देश्य है। तुलनात्मक अध्ययन का लक्ष्य हमारे सीमित ज्ञान का विस्तार करना है और अन्य साहित्यों की उपलब्धियों से हमें अवगत कराना है। मानव अपने देश, भाषा जाति और काल के बन्धनों को पार कर विश्व साहित्य एवं विश्व-मानव के उच्चतर साहित्यिक एवं कलात्मक रस-सिंधु में लीन होता है। मानव अपने भाषा, प्रान्त एवं जातिगत अहं को त्याग कर विश्व भावजगत में विचरने लगता है।

3. तुलनात्मक अध्ययन की प्रक्रिया के स्थूल एवं सूक्ष्म रूप :-

(क) स्थूल रूप :

तुलनात्मक अध्ययन के स्थूल रूप में भिन्न साहित्यों या एक ही साहित्य के दो प्रवृत्तियों के वर्ण्य-विषय, काल-विभाजन, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियाँ और उसके अन्तर्गत आनेवाले कवियों एवं उनसे प्रयुक्त अलंकारों तथा छन्दों की लम्बी सूची आदि का उल्लेख हो। यह तथ्यों का संकलन मात्र होता है। आगे चलकर किसी सत्य के उद्घाटन में यह सहायक हो सकता है।

(ख) सूक्ष्म रूप :

साहित्यों में मानव के उच्चतर मूल्यों, विचारधाराओं, चिन्तन-प्रणालियों एवं अनुभूतियों की अभिव्यक्ति किस प्रकार हुई है उद्घाटन करना तुलनात्मक अध्ययन का सूक्ष्म रूप है। तुलनात्मक अध्ययन के सूक्ष्म रूप के उद्घाटन करने में स्थूल रूप साधन बन जाता है।

सम्पूर्ण साहित्यिक प्रक्रियाओं की परीक्षा करना, उनकी तुलना करना, उनका वर्गीकरण करना, उनके कारणों का अन्वेषण करना एवं उनके परिणामों को निर्धारित करना तुलनात्मक अध्ययन का वास्तविक ध्येय है।

4. तुलनात्मक अध्ययन के प्रकार :-

तुलनात्मक अध्ययन की प्रक्रिया को तीन प्रकारों में बाँट सकते हैं-

(1) एक ही साहित्य के अन्तर्गत तुलनात्मक अध्ययन। विषय की सीमा के अनुरूप इसे भी तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है।

(अ) दो लेखकों या कवियों की तुलना : उदा : 'कबीर और जायसी के रहस्यवाद का तुलनात्मक अध्ययन'

(आ) दो प्रवृत्तियों की तुलना : उदा : 'द्विवेदी-युगीन कविता और छायावाद का तुलनात्मक अध्ययन'

(इ) दो युगों की तुलना : उदा : 'हिन्दी के भक्तिकाल और रीतिकाल के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन' ये तीनों विधाएँ एक ही साहित्य के अंतर्गत की तुलना पर चलती हैं।

(2) एक साहित्य का अन्य साहित्यों पर प्रभाव। यह प्रभाव तीन रूपों में हो सकता है।

(अ) एक साहित्य का दूसरे साहित्य पर प्रभाव। उदा : 1. हिन्दी साहित्य पर संस्कृत साहित्य का प्रभाव 2. हिन्दी भाषा और साहित्य पर अंग्रेजी का प्रभाव

(आ) एक साहित्यिक व्यक्तित्व का अन्य साहित्यों पर प्रभाव। उदा : हिन्दी कवियों पर रवीन्द्र का प्रभाव।

(इ) एक साहित्यिक प्रवृत्ति या काव्य धारा का दूसरे साहित्य की प्रवृत्ति या काव्य धारा पर प्रभाव। उदा : 'अंग्रेजी स्वच्छन्दतावाद का हिन्दी कविता पर प्रभाव।'

यहाँ एक साहित्य का प्रभाव अन्य साहित्यों के दृष्टिकोणों भावों, विचारों एवं चिन्तन प्रणालियों को कैसे प्रभावित करता है, पता चलता है। यह प्रक्रिया एक साहित्य के विद्वान को अपनी संस्कृति के अतिरिक्त अन्य संस्कृतियों की प्रशंसा करने को बाध्य करती है।

विशाल संस्कृत साहित्य का प्रभाव विश्व के सभी सभ्य साहित्यों पर प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से दिखाई पडता है। जर्मन और अंग्रेजी साहित्यों पर तो यह प्रभाव और अधिक स्पष्ट है। प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्राचीन काल से भी पाश्चात्य तथा भारतीय साहित्यों के बीच विचारों का आदान-प्रदान रहा है। अत: तुलनात्मक अध्ययन पश्चिमी और भारतीय साहित्यों की एकरूपता, भिन्नता और एक दूसरे पर प्रभाव स्पष्ट करता है।

(3) दो या उससे अधिक साहित्यों का तुलनात्मक अध्ययन। इसे चार भागों में बाँट सकते हैं-

(अ) दो कृतियों की तुलना । उदा : 'कम्बन और तुलसी'

(आ) दो विशिष्ठ कवियों की तुलना। उदा : 'वाल्मीकी रामायण और रामचरित मानस का तुलनात्मक अध्ययन'

(इ) दो प्रवृत्तियों या युगों की तुलना। उदा : 'हिन्दी और मलयालम के भक्त कवियों का तुलनात्मक अध्ययन'

(ई) हिन्दी साहित्यिक विधा की तुलना। उदा : 'आन्ध्र-हिन्दी रूपक (हिन्दी और तेलुगु नाटक-साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन)'

इस प्रकार का तुलनात्मक अध्ययन समग्र रूप में प्रकट होता है। अनुसंधाता को दो साहित्यों का समुचित अध्ययन एवं अनुशीलन करना पडता है। उन साहित्यों के मूल स्वरों के साथ साहित्यिक भाषा-प्रान्तों की संस्कृति, सभ्यता एवं वातावरण का सम्यक ज्ञान होना चाहिए।

तुलनात्मक अध्ययन में संलग्न अनुसंधाता को निम्न लिखित विषयों पर ध्यान देना चाहिए-

(क) दोनों आलोच्य साहित्यों तथा उनकी भाषाओं का अच्छा ज्ञान होना आवश्यक है।

(ख) किसी एक साहित्य के प्रति अधिक आदर या पक्षपात की दृष्टि न हो।

(ग) तुलना सभी दृष्टियों से करनी चाहिए।

(घ) अन्य साहित्य के उद्धरणों को अनूदित करके रखना अधिक उपयोगी सिद्ध होगा।

5. भारत के प्रादेशिक साहित्यों के बीच तुलनात्मक अध्ययन की आवश्यकता :-

भारत बहु भाषाओं का देश है। हर भाषा का अपना समृद्ध एवं विकसित साहित्य भी है। इन साहित्यों के बीच अयिधिक समानताएँ मिलती हैं। सारे भारतीय साहित्यिक, सांस्कृतिक तथा विचारों के सूत्र से बन्धे हुए हैं। प्रादेशिक साहित्यों के अन्तर्गत बिखरी हुई भारत की सांस्कृतिक एकता का अध्ययन होना चाहिए। भारत के विभिन्न प्रादेशिक साहित्यों में प्राप्त समानताओं एवं भिन्नताओं पर प्रकाश डालना अत्यन्त आवश्यक हैं। सभी प्रादेशिक साहित्यों की तुलना कर उनमें व्याप्त भारत की सार्वभौम सांसकृतिक एकता को निर्धारित कर उसके आधार पर मूल स्वरों के साथ-साथ सांस्कृतिक हृदय को भी स्पष्ट किया जा सकता है। भारत की सांस्कृतिक मूलवर्ती एकता का सम्यक अनुसंधान होना चाहिए। यह कार्य हमारे अध्ययन और अनुसंधान की प्रणाली में परिवर्तन की अपेक्षा करता है।

किसी भी प्रवृत्ति का अध्ययन केवल एक भाषा के साहित्य तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए। भारतीय साहित्यों के बीच तुलनात्मक अध्ययन महत्त्वपूर्ण होता है। अनादिकाल से भारतवर्ष में एक ही विचारधार का, एक ही जीवन-दर्शन का, एक ही महान आदर्श का प्रसार एवं प्रचार है।

6. निष्कर्ष :-

भारतीय दर्शन तथा उसके अध्यात्मिक दृष्टिकोण का प्रभाव सभी साहित्यों पर है। भारतीय साहित्य विभिन्न प्रादेशिक साहित्य-सुमनों से भरा हुआ सुन्दर उपवन है। जिस प्रकार पुष्पों के अपने पृथक रूप-रंग होते हुए भी उन सब में एक ही रस का और एक ही सुगंध का अस्तित्व होता है। उसी प्रकार विभिन्न प्रादेशिक साहित्यों के बाह्य रूप-रंगों में भिन्नता और आन्तरिक चेतना की समानता दिखाई देती है। अत: भारतीय साहित्य के समग्र स्वरूप का आकलन करने के लिए, पहले उसके विभिन्न प्रादेशिक साहित्यों के बीच तुलनात्मक अध्ययन का होना अत्यन्त आवश्यक है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

पाठ - 2

भारतीय काव्य-साहित्य में 'उर्वशी' की परिकल्पना

प्र.2. भारतीय काव्य-साहित्य में 'उर्वशी' की परिकल्पना की समीक्षा कीजिए।

रूपरेखा :

1. प्रस्तावना :

युग-युगों से भारतीय साहित्य में यौवन तथा अतुलित सौन्दर्य की साकार प्रतिमा अप्सरा 'उर्वशी' अनेक कवियों के मनोजगत में स्वच्छन्द विहार करती आ रही है। प्रत्येक कवि उसे अपनी भावना से देखकर अपने दृष्टिकोण के अनुरूप उर्वशी की रूप-कल्पना करता है और अपनी भावना-मूर्ति उर्वशी विविध कवियों में प्रसुप्त सौन्दर्य-बोध का उन्मीलन कर देती है।

2. उर्वशी : स्रोत

उर्वशी और पुरूरवा की कथा सर्व-प्रथम ऋग्वेद में प्राप्त होती है। तत्पश्चात् शतपथ ब्राह्मण में और पुराणों में इसका उल्लेख मिलता है। रामायण, महाभारत, हरिवंश, विष्णुपुराण आदि काव्य-ग्रन्थों में उर्वशी की कथा का उल्लेख हैं। कविकुल-गुरु कालिदास कृत 'विक्रमोर्वशीय' में उर्वशी का अधिकतर नर्तकी के रूप में चित्रण हुआ है।

अनेक आधुनिक कवि उर्वशी के सौन्दर्य की ओर आकृष्ट हुए हैं। उनमें अरविन्द, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, देवुलपल्लि कृष्णशास्त्री और रामधारी सिंह दिनकर अत्यन्त प्रमुख हैं। अरविन्द की उर्वशी मानव को अपने कर्त्तव्य से विचलित करनेवाली सौन्दर्य की प्रतिमा है। उर्वशी के सौन्दर्य-मोह में स्विनबर्न की जलदेवी (Perilous goddess) भी समुद्र से ही उत्पन्न होती है। उसके एक हाथ में अमृत-कलश और दूसरे हाथ में विष-कलश शोभित होते हैं। इसके अतिरिक्त ऋग्वेद के उर्वशी - पुरूरवा के संवाद का प्रभाव भी रवीन्द्र पर लक्षित होता है। पौराणिक गाथाओं की उर्वशी अवस्था भेद के अनुसार वधू, पत्नी तथा माता के रूप में दिखाई देती है। लेकिन रवीन्द्र के अनुसार न वह माता है, न कन्या है और न वधू। वह तो केवल सौन्दर्य की रूपसी एवं आदर्शमयी नारी के रूप में चित्रित हुई है -

न हो माता, न हो कन्या, न हो वधू,
सुन्दरी रूपसी, हे नन्दन वासिनी ऊर्वशि।

- रवीन्द्र

उर्वशी उषा की भाँति अनवगुंठिता है -

उषार उदव सम अनव गुंठिता, तुमी अकुंठिता ।

- रवीन्द्र

रवीन्द्र की उर्वशी प्रथम मिलन के अवसर पर प्रिय के पास में संकोच एवं लज्जा का अनुभव करनेवाली ममतामयी नारी भी है। प्रिय समागम के लिए जानेवाली उर्वशी का मनोहर रूप अंकित किया गया है –

द्वधाय जडित-पदे, कम्पवक्षे

नम्र नेत्र-पाते, मंदहास्ये नाहि चल

सलज्ञित वासर शय्याते, स्तब्ध अर्ध राते ।

-रवीन्द्र

वास्तव में रवीन्द्र की उर्वशी स्वर्ग और पृथ्वी को पकडकर विक्रम का कर्त्तव्यच्युत होना स्वयं अरविन्द भी नहीं चाहते थे। इसी कारण उन्होंने उर्वशी की कल्पना मनुष्य में वासना की वह्नि को उद्दीप्त करनेवाली कामिनी के रूप में की है। इसी प्रकार वासना की मूर्ति उर्वशी का विलक्षण रूप प्रदान करनेवाले कवि रवीन्द्र भी हैं।

उर्वशी के जन्म सम्बन्धी दो गाथाएँ प्रचलित हैं। 1. उर्वशी देव दानवों के क्षीरसागर–मंथन के समय सागर से उत्पन्न हुई है।2. विष्णु के 'ऊरु' से निकली है। इसी कारण वह उर्वशी कहलाती है।

3. रवीन्द्र की उर्वशी :

कविवर रवीन्द्र ने एक हाथ में विष–कलश और दूसरे हाथ में अमृत कलश लेकर क्षीरसागर – तरंगों पर खडी होनेवाली चिर यौवना एवं वृन्तहीन पुरुष के रूप में उर्वशी की कल्पना की है। रवीन्द्र की उर्वशी कल्पना पर ऋग्वेद तथा कालिदास के प्रभाव के अतिरिक्त यूनान की पौराणिक गाथाओं का प्रभाव भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। सागर–तरंगों पर खडी होनेवाली उर्वशी का रूप यूनानी–देवी अफ्रडैट (Aphrodite) का स्मरण दिलाता है। यह देवी भी फेन से जन्म लेती है।

रवीन्द्र की उर्वशी–कल्पना पर अंग्रेजी कवि स्विनबर्न की 'ओड आन अफ्रडैटी' शीर्षक कविता का प्रभाव लक्षित होता है। स्विनबर्न ने अफ्रडैटी को सागर से समुद्रभूत अमूल कलिका से कडवे फूल में परिणत होनेवाली नारी के रूप में देखा है –

A bitter flower from the bnd spring from the sea without roots without

- Swin Burne

अपने सौन्दर्य से संधान करनेवाली स्वर्ण-सेतु है।

4. कृष्णशास्त्री और दिनकर से परिकल्पित उर्वशी :-

रवीन्द्र के पश्चात् लावण्यमयी उर्वशी का मनोहर चित्रांकन करनेवाले तेलुगु के स्वच्छन्दतावादी कवि देवुलपल्लि कृष्णशास्त्री और हिन्दी के प्रगतिवादी कवि रामधारी सिंह दिनकर आते हैं। किन्तु समय की दृष्टि से शास्त्री और दिनकर उर्वशी विषयक काव्यों में पर्याप्त अन्तर है। कृष्णशास्त्री की 'उर्वशी' सन् 1925 की रचना है, तो दिनकर की उर्वशी सन् 1961 की रचना है। कृष्णशास्त्री की उर्वशी-कल्पना पर रवीन्द्र का प्रभाव है, तो दिनकर की उर्वशी पर रवीन्द्र के साथ कालिदास आदि कवियों का प्रभाव भी है। शास्त्री और दिनकर की उर्वशी एक आदर्श नारी होते हुए भी एक आदर्श प्रेयसी है । दोनों कवियों की साकार प्रतिमा के रूप में चित्रित किया है। इन कवियों की उर्वशी विश्व-सौन्दर्य की उज्ज्वल भावना की रूप-सृष्टि मात्र है। कवियों की दृष्टि में वह युग-युगों से मानवों के मन-मन्दिरों में निवास करनेवाली एक दिव्य गन्धर्वानुभूति है।

शास्त्री और दिनकर ने उर्वशी के अलौकिक सौन्दर्य का वर्णन प्रस्तुत किया है। शास्त्री अनेक उपमाओं के माध्यम से उर्वशी का सौन्दर्य-दर्शन कराने के साथ-साथ अनन्त अह्लाद का अनुभव करने लगते हैं। वे उर्वशी के सौन्दर्य को अनेक रूपों में व्यक्त करते हैं-

नीवु तोलि प्रोद्दु नुनुमंचु तीव सानेवु
नीवु वर्षा शरत्तुल निबिड संगममुन
बोडमिन सन्ध्या कुमारि।

- कृष्णशास्त्री

(तुम प्रथम उषा के ओस-कणों की लतिका हो, तुम वर्षा और शरद के बीच उगनेवाली सन्ध्या-कुमारी हो।)

कृष्णशास्त्री की उर्वशी विश्व-मानव की चिरन्तन प्रेयसी के रूप में चित्रित की गयी है।

तोलि वियोगिनि नेने, तोलि प्रेयसिनि नेने

-कृष्णशास्त्री

(प्रथम वियोगिनि हूँ मैं, प्रथम प्रेयसी हूँ मैं।)

5. **दिनकर की उर्वशी :-**

(क) मनोहर सौन्दर्य की राशि, अप्सरा :-

दिनकर की उर्वशी दिगन्त व्यापिनी सौन्दर्य की राशि है। उसका रूप मनोहर तथा अतुलित है। सारी सिद्धयाँ उसमें सिमट गयी हैं। वह निखिल भुवन की आभा है। वह 'स्वर्ग लोक की सुधा' और 'नन्दन-वन' की शोभा है। उसकी रूप कल्पना अत्यन्त स्पष्ट एवं मांसल है। वह विश्वमानव की चिरन्तन प्रेयसी है।

एक मूर्ति में सिमट गयीं किस भाँति सिद्धियाँ सारी?
क्या था ज्ञात मुझे, इतनी सुन्दर होती है नारी?

× × ×

नहीं, उर्वशी नारि नहीं, आभा है निखिल भुवन की;
रूप नहीं, निष्कलुष कल्पना है, स्रष्टा के मन की।

दिनकर की उर्वशी सुर, नर, किन्नर या गन्धर्व कुल में जन्म लेनेवाली कोई युवती नहीं है। वह विश्व-मानव के अतृप्त कामना-समुद्र से उत्पन्न होनेवाली अप्सरा है। वह स्वयं कहती है ---

मैं नाम-गोत्र से रहित पुष्प
अम्बर में उडती हुई मुक्त आनन्द शिखा
इतिवृत्तहीन
सौन्दर्य चेतना की तरंग
सुर-नर-किन्नर-गन्धर्व नहीं,
प्रिय! मैं केवल अप्सरा
विश्व नर के अतृप्त इच्छा-सागर से समुद्रभूत।

(ख) देश-काल बन्धनों से मुक्त नारी :-

दिनकर की उर्वशी देश और काल के बन्धनों से मुक्त नारी है। वह यौवन-सुषमा-दीप्त चिरन्तन

सुकुमारी है। प्राकृतिक सीमाओं को पार कर त्रिकालों का अतिक्रमण करनेवाली विश्वप्रिया के रूप में उसका चित्रण हुआ है। मंदिरों (देवालयों) में देवता के बदले उर्वशी रहती है। अर्चना में उसी का नूपुर बजता है।

मैं देश-काल से परे चिरन्तन नारी हूँ।
मैं आत्मतंत्र यौवन की नित्य नवीन प्रभा,
रूपसी अमर मैं चिर-युवती सुकुमारी हूँ।
सरिता, समुद्र, गिरि, वन मेरे व्यवधान नहीं,
मैं भूत, भविष्यत् वर्तमान की कृत्रिम बाधा से विमुक्त,
मैं विश्वप्रिया ।

× × ×

देवालय में देवता नहीं, केवल मैं हूँ।
मेरी प्रतिमा को घेर कर उठ रही अगरु-गन्ध,
बज रहा अर्चना में मेरी मेरा नूपुर।

(ग) भौतिक जगत तथा निष्काम कर्मयोग की भावना :-

दिनकर की उर्वशी सागर की आत्मजा है और नारायण की मानसिक तनाया है। लेकिन वह प्रकृति की भाँति निस्सीम तथा असीमित है।

सागर की आत्मजा, मानसिक तनया नारायण की।

× × × ×

मेरा तो इतिहास प्रकृति की पूरी प्राण-कथा है,
उसी भाँति निस्सीम, असीमित जैसे स्वयं प्रकृति है।

उर्वशी नारी को प्रार्थना की कोई कविता बताती है। वह कविता, कुसुम या कामिनी है। पुरूरवा उर्वशी से कहता है –

रूप की आराधना का मार्ग
आलिंगन नहीं तो और क्या है?

स्नेह का सौन्दर्य को उपहार

रस-चुम्बन नहीं तो और क्या है?

उर्वशी पुरूरवा के भौतिकवाद का भी समर्थन कर कहती है। फिर उसका कारण भी बताती हैं

अप्सरा स्वर्ग से आती है, अधरों का चुम्बन पाने को

× × × ×

रक्त बुद्धि से अधिक बली है और अधिक ज्ञानी भी,

क्योंकि बुद्धि सोचती और शोणित अनुभव करता है।

इसी कारण पुरूखा को रक्त की भाषा पढ़ने के लिए वह प्रचोदित करती है -

पढ़ो रक्त की भाषा को

उर्वशी विश्वप्रिया होने के कारण वह सिंधु की सुता के ही रूप में सीमित रहना नहीं चाहती।

मैं नहीं सिंधु की सुता,

तलातल-अतल-बितल-पाताल छोड

नीले समुद्र को तोड शुभ्र

झिलमिल फेनांकुश में प्रदीप्त

नाचती उर्मियों के सिर पर

मैं नहीं महतल से निकली।

उर्वशी विश्वप्रिया है। रसचुंबन तथा भौतिक-जगत से कर्मयोग की ओर अग्रसर होती है। फलासक्ति रहित कर्म वह चाहती है। निष्काम कर्म-धारा में वह निरत रहती है। वह कहती है -

कर्म स्वयं आनन्द, कर्म ही फल समस्त कर्मों का।

× × × ×

निष्काम काम-सुख वह स्वर्गीय पुलक है।

इस कर्मयोग की भावना में दिनकर की प्रगतिवादी विचारधारा व्यक्त होती है। उर्वशी का यह विशेष रूप है।

6. निष्कर्ष :-

ऋग्वेद से लेकर कालिदास तथा आधुनिक कवियों की वाणी में उर्वशी प्रेमिका के रूप में पल्लवित होती है। आचार्य आदेश्वर रावजी ने अधिकांश रूप में कृष्णशास्त्री और रामधारीसिंह दिनकर से सृजित उर्वशी की तुलना की है।

कृष्णशास्त्री और दिनकर की उर्वशी-विषयक कल्पना में पर्याप्त साम्य होते हुए भी दोनों की प्रतिमाओं में भिन्नता भी है। कृष्णशास्त्री की उर्वशी पर रवीन्द्रनाथ का प्रभाव होने के कारण वह कहते है कि वह हलाहल के अनल तथा अमृत के शीतल रस के साथ जन्मी है। वे उसी के आजन्म सहचर हैं। दिनकर ने भी कथावस्तु तथा कुछ घटनाओं को परम्परा से ग्रहण किया है। किन्तु उन्होंने अपनी उर्वशी को नये साँचे में ढ़ाल दिया है।

कृष्णशास्त्री की उर्वशी विश्व-नर चिरन्तन प्रेयसी होने के साथ-साथ वह स्वयं कवि की भी प्रेयसी है। कालिदास एवं रवीन्द्र की भाँति कृष्णशास्त्री इस सौन्दर्य की देवी के प्रति तटस्थ न रह सके। उर्वशी स्वयं अपने को कवि की प्रेमिका बताती है-

आनाटि कोनाटि केनु नीदान ने।

(चिरन्तन काल से मैं तुम्हारी रही हूँ)

कवि उर्वशी के विरह में दिन-रात व्यथित होता रहता है। उर्वशी का प्रेम के लिए वह सतत संतप्त रहता है। यही दशा उर्वशी के प्रेम में मग्न हुए दिनकर के पुरूरवा की भी है। वह उर्वशी के विरह में तड़प उठता है। इस प्रकार कृष्णाशास्त्री तथा दिनकर की उर्वशी-परिकल्पना में पर्याप्त साम्य दिखाई देते हैं।

उर्वशी विश्वप्रिया होने के साथ-साथ कृष्णशास्त्री और पुरूरवा की प्रेयसी भी है।

इस प्रकार 'भारतीय काव्य' साहित्य में उर्वशी के विविध रूप हमारे समक्ष आते हैं।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

❋ ❋ ❋

पाठ - 3

जयशंकर प्रसाद और विश्वनाथ सत्यनारायण : एक तुलना

प्र.3. जयशंकर प्रसाद और विश्वनाथ सत्यनारायण की काव्य-प्रतिभा की तुलना कीजिए।

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना :-

जयशंकर प्रसाद और विश्वनाथ सत्यनारायण आधुनिक हिन्दी और तेलुगु साहित्यों के दो आलोक-स्तम्भ हैं। इन दोनों कवियों ने अपनी काव्य प्रतिभा से दोनों साहित्यों की प्रत्येक विधा को नया प्रकाश दिया है। दोनों आधुनिक स्वच्छन्दवाद की परिधि में आने पर भी, वे उस वाद से बन्धे नहीं गये। दोनों ने महाकाव्य, खण्डकाव्य, गीतिकाव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी एवं समीक्षा आदि सभी साहित्यिक विधाओं में अपनी अतुलित रचना प्रतिभा का परिचय दिया है।

जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रवर्तक हैं तो विश्वनाथ सत्यनारायण कवि सम्राट के रूप में विख्यात हैं और वे भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार से आभूषित हैं।

2. भारतीय संस्कृति के महान उपासक :-

जयशंकर प्रसाद और विश्वनाथ सत्यनारायण भारतीय संस्कृति के महान उपासक हैं। इसी कारण उन्होंने अपनी कृतियों का आधार भारतीय संस्कृति ही बनाया। प्रसाद पर बौद्ध-दर्शन तथा शैव दर्शन का प्रभाव अधिक है और उन्होंने वेदों का गहन अध्ययन किया। सत्यनारायण पर उपनिषदों तथा पुराणों का प्रभाव अधिक है। इतिहास तथा भारतीय दर्शन को आधार बनाकर उनकी रचनाएँ चली। भारतीयता और भारत-संस्कृति दोनों की रचनाओं में पल्लवित होती है। दोनों के विचारों पर कहीं भी पाश्चात्य विचारधारा का प्रभाव बिलकुल दिखाई नहीं देता। दोनों कवियों ने आत्म-सम्मान सहित भावावेग बह कर अनेक महान काव्यों की सृष्टि की। दोनों में अदम्य आत्म-विश्वास तथा काव्य पर पूर्ण आस्था सर्वत्र पायी जाती है।

3. साम्य तथा अन्तर :-

जयशंकर प्रसाद और सत्यनारायण अपनी-अपनी दिशा में महान कवि होते हुए भी उन दोनों में कुछ साम्य तथा पर्याप्त अन्तर भी हैं। भारत की सांस्कृतिक चेतना दोनों की कृतियों में मिलती है।

जयशंकर प्रसाद विद्वत्कवि, दार्शनिक, विश्वजनीन, अनुभूति-प्रधान तथा आत्मद्रष्टा हैं। सत्यनारायण में पंडित, कवि, भक्त, देश-काल के बन्धनों के सीमित, काव्य-चमत्कार तथा स्वाभिमान लक्षण हैं।

प्रसाद की विचारधारा तथा चिन्तन-प्रणाली का स्वाभाविक विकास हुआ है। सत्यानारायण की विचारधारा पाण्डित्य प्रकर्षण के कारण पूर्णतया विकसित हो न पायी। प्रसाद ने अपने समय एवं प्रान्त की सीमाओं को पार कर विश्व-मानव की चिरन्तन समस्याओं पर प्रकाश डाला है। गहनशीलता, दूरदर्शिता, सन्तुलित दार्शनिकता एवं जागरूकता के कारण प्रसाद विश्व के महान कवियों के साथ गौरवमय स्थान प्राप्त कर सके। प्रसाद के लिए ऐतिहासिक धरातल एक आधार मात्र है। उसके माध्यम से वे मार्मिक अनुभूतियों, उदात्त भावनाओं तथा दार्शनिक विचारों को व्यक्त करते हैं। वे अपने काव्य में मानव-जीवन तथा उसकी अनन्त समस्याओं का अंकन कर उनके समाधान भी प्रस्तुत करते हैं। प्रसाद के प्रौढ़ काव्यों में काव्यत्व, अनुभूति, दर्शन तथा मनोविज्ञान का समन्वय या एकाकार प्राप्त होता है। उदाहरण के लिए कामायनी महाकाव्य में कथानक को एक विश्वजनीन अनुभूति तथा वस्तु के रूप में परिणत करने में वे अधिक सफल हुए। मानव चेतना के उस महाकाव्य में अन्नमयकोश से लेकर आनन्दमय कोश तक जीव का परिणाम क्रम बताया गया है।

हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर,
बैठ शिला की शीतल छाँह,
एक पुरुष भीगे नयनों से,
देख रहा था प्रलय प्रवाह

- अन्नमय कोश का प्रतीक

समरस से जड या चेतन
सुन्दर साकार बना था;
चेतनता एक विलसती
आनन्द अखंड घना था।

-आनन्दमय कोश का प्रतीक

सत्यनारायण ने अपनी काव्य-धारा को विभिन्नदिशाओं में मोड दिया उन में आन्ध्र के प्रान्तीय वैभव के साथ भक्ति की परवशता रही है। 'रामायण कल्पवृक्षम' केवल रामचरित के आधार पर रचा

गया महाकाव्य है। किन्तु वे आन्ध्र के वातावरण को पार कर बाहर न जा पाये। इतिहास को आधार बनाकर उनकी कलम चली। किन्तु उनकी वह रचना विश्वजनीन न हो पायी। कतिपय वर्णनों तथा क्षणिक आवेगों के अतिरिक्त और कुछ देने में वे असमर्थ रहे। वे केवल भावनाओं के आवेग में सीमित रहे। अपने प्रान्तीय सीमित दृष्टिकोण के कारण विश्वनाथ सत्य नारायण की कृतियाँ आन्ध्रों के अतिरिक्त अन्यों के लिए अधिक उपयोगी सिद्ध नहीं होती। वे अपनी प्रान्तीयता को पार न कर पाये।

भक्त होने के नाते वे अपना हृदय शिवजी से संलग्न करना चाहते हैं और रामचरित की रचना करना उनके जीवन की वेदना थी।

ना एद नीतो राचेदनु,
जन्माद्युपायमु तप्पिंचु शिवा।
× × × .... ता
चेसिन तंड्रियाज्ञयुनु जीवुनि रेंडुनेकमै
नासकलोह वैभव सनाथमु रामकथन् रचिंचदन्॥

4. आँसू एवं किन्नेरसानि पाटलु :-

प्रसाद और सत्यनारायण दोनों मूलतः प्रेम तथा श्रृंगार के कवि हैं। विप्रलम्भ श्रृंगार में दोनों कवियों में असाधारण समानता पायी जाती है। हाँ! जहाँ प्रसाद अधिक भावपरिपुष्ट हैं वहाँ सत्यनारायण शब्दगाम्भीर्य प्रधान हैं।

आँसू जयशंकर प्रसाद का खण्डकाव्य है और किन्नेरसानि पाटलु विश्वनाथ सत्यनारायण का खण्डकाव्य। दोनों विरह-प्रधान काव्य हैं। मिलन का वर्णन विप्रलंभ श्रृंगार के अन्तर्गत ही हुआ है। आँसू एक आत्माश्रयी विप्रलंभ काव्य है और कवि प्रसाद ही काव्य का नायक है। किन्नेरसानि पाटलु में कवि नायक तथा नायिका के साथ तादात्म्य प्राप्त कर लेता है।

आँसू नायक अपनी अतीतकालीन स्मृतियों में डूब कर विह्वल क्रन्दन करने लगता है। उसकी स्मृतियों की माध्यम से ही नायिका का स्वरूप पाठकों के समक्ष प्रस्तुत होता है। परन्तु नायिका कभी भी प्रत्यक्ष रूप से प्रकट नहीं होती। कवि, आँसू का नायक अतीत की स्मृतियों में डूब कर अनन्त पीडा का अनुभव करता है। वह कहता है -

इस करुणा कलित हृदय में
अब विकल रागिनी बजती
क्यों हाहाकार स्वरों में
वेदना असीम गरजती ?

किन्नेरसानि पाटलु में नायिका स्वयं एक पात्र के रूप में दृष्टिगोचर होती है। नायक और नायिका दोनों विरह-जन्य विह्वलता प्रकट करते हैं। आँसू में प्रकृति अप्रस्तुत के रूप में आती है और किन्नेरसानि पाटलु में प्रस्तुत के रूप में। दोनों काव्यों में नायक अपनी प्रेयसियों के वियोगभार से दब जाते हैं। दोनों प्रयेसियों के वियोग को सह नहीं सकते।

किन्नेरसानि पाटलु का नायक रूठ कर चलनेवाली पत्नी का आलिंगन करने से उसके हाथों में ही वह पिघलकर सरिता बन जाती है। इस प्रकार सरिता बनकर बह जानेवाली प्राणप्रिया की वेणी पकड कर रोकने का असफल यत्न करता है। दु:खातिरेक में नायक की वाणी रुदन करती है।

परुगेत्तेडु नीवेणी-बंधमु पूनिति चेतनु
करमुन वेणिकि बदुलुग काल्वगट्टे नीटि पोरलु।

(हे प्रिया! मुझ से दूर कर भागनेवाली तुम्हारी वेणी को मैं ने हाथ से पकड लिया है, परन्तु मेरे हाथ में वेणी की जगह जल-धाराएँ ही उमड कर बहने लगी हैं।)

इस प्रकार कहते हुए नायक दु:ख के अतिशय भार से घनीभूत होकर पत्थर के रूप में बन जाता है। नायिका किन्नेरसानि भी अपने पति की प्रस्थेर प्रतिमा का लहरों के हाथों से आलिंगन करती है। वह अपने प्रियतम को छोड कर जाना नहीं चाहती, किन्तु विवश होकर उसे प्राकृतिक नियम का अनुसरण कर बहना पडता है। वह आपने आचरण पर पछताती भी है। वह पुन: मानवी बनना चाहती है, लेकिन बन न पाती। वह अपने प्रियतम के साथ बिताये मिलन की घडियों का स्मरण कर अधीर हो उठती है-

नीलि मब्बुल बोलु
निडिविनी चेतुल्ल
नन्निंक कौगिलिंचगरावु काबोलु
कडु, प्रेम तो चेरगानीवु काबोलु
नेम्मदिग नातोडलु निमुरवु का बोलु।

(नीले बादलों की भाँति रहनेवाले तुम्हारे हाथ शायद ही मेरा आलिंगन करने तथा मेरे शरीर को स्पर्श से पुलकित करने आयेंगे।) वह फिर मिलन की स्मृतियों में लीन होती है -

नेनु कोपमु नंदि नीप्रक्क नुंडगा

वलदन्नकोद्दि ना पदमुलोत्तुचु नीवु

तेलचि कौगिंटिलो तेर्चुकुंटु नीवु

नारोम्मु तल चेर्चंगा रावु काबोलु।

(मेरे मान को छुडाने के लिए मेरे पैर दबाते हुए तुम मुझे गोद में उठा कर अपने मस्तक को मेरे सीने से लगाने अब शायद ही तुम आओगे।) पुनः वह कह उठती है-

तलिराकु वंटि मेत्तनि येर्र पेदवितो

तार्चि ना मोमु नद्दगरावु काबोलु

नातोडलु मिगुल नंदंपु कुप्पयनि चेरिप्प

एल्ल तावुलनु मुद्दिडरावु काबोलु।

(किसलय से लाल और कोमल अधरों से मेरे मुख पर चुम्बन करने तुम अब नहीं आओगे। मेरे शरीर को सौन्दर्य-धाम कह कर सभी स्थानों पर चूमने शायद अब नहीं आओंगे।)

इस प्रकार सत्यानारायण ने नायिका की वियोगावस्था में भी मिलन-श्रृंगार का समावेश किया है।

आँसू का नायक अतीत की स्मृतियों में डूबकर अनन्त पीडा का अनुभव करता है। वह अपने प्रिया-समागम का सुन्दर चित्र प्रस्तुत करता है -

परिरम्भ कुम्भ की मदिरा

निश्वास मलय के झोंके

मुख-चन्द्र-चाँदनी जल से

मैं उठता था मुँह धोके।

फिर वह वियोग की पीडा अनुभव करते हुए कहता है -

जो घनीभूत पीडा थी
मस्तक में स्मृति-सी छायी
दुर्दिन में आँसू बनकर
वह आज बरसने आई।

आँसू और किन्नेरसानि पाटलु के नायक अपनी प्रेमिकाओं के वियोग-भार से दब जाते हैं और प्रेयसियों का वियोग सहन नहीं कर पाते। दोनों वियोग की आसह्य पीडा का अनुभव करते हैं और अतीत के सुखमय मिलन की मादक स्मृतियों में डूब जाते हैं। आँसू और किन्नेरसानि पाटलु में दोनों कवियों ने करुण एवं विप्रलम्भ श्रृंगार की भावनाओं को सहज एवं मर्मस्पर्षी अभिव्यक्ति दी है।

5. प्रेम-पथिक और गिरिकुमारुनि प्रेम गीतालु :-

प्रेम-पथिक और गिरिकुमारुनि प्रेम गीतालु क्रमशः प्रसाद एवं सत्यनारायण की आदर्श प्रेमभावना की कृतियाँ है। ये दोनों कृतियों कवियों के यौवन-काल में रची गयी हैं।

(क) प्रेम-पथिक :-

प्रसाद के प्रेम-पथिक का विवाह उसकी हृदयेश्वरी एवं बाल-सहचरी पुतली के साथ सम्पन्न नहीं हो पाया। अपनी प्रिया के विवाह के अवसर पर वह घर-बार छोडकर भ्रमण करने लगता है। वन, पर्वत एवं सरिताओं को पार कर वह एक एकान्त कुटी के पास पहुँच जाता है। उस समय तक पुतली विधवा हो जाती है और वह अपनी उसकुटी में एकान्त जीवन करती रहती है। प्रेमी और प्रेमिका दोनों परस्पर पहचान लेते हैं। वहीं पर रहकर वे दोनों विश्वात्मा की प्रेम-प्राप्ति के लिए अपनी लौकिक प्रेम भावना से ऊपर उठ जाते हैं। प्रेम-पथिक के वे पात्र जीवन के कटु अनुभवों के पश्चात यह स्वीकार कर लेते हैं कि विश्वभर में दयानिधि परमात्मा के प्रेम का ही अस्तित्व है।

किन्तु न परिमित करो प्रेम, सौहार्द, विश्वव्यापी कर दो
क्षणभुंगर सौन्दर्य देख कर रीझो मत देखो! देखो!
उस सुन्दरतम की सुन्दरता विश्वमात्र में छायी है।

(ख) गिरिजाकुमारुनि प्रेम गीतालु :-

गिरिजाकुमारुनि प्रेम गीतालु में गिरिकुमार के पुणयोद्गारों की अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है। गिरिकुमार अपनी प्रेमका के प्रति विविध प्रेमोद्गार प्रकट करता है। नायक के लिए प्रेमिका एक सुधा-

स्रवन्ती है। उसका आभास कवि को प्रकृति में मिलती है। उसके वास्तविक स्वरूप का आकलन करने के लिए कवि सारे विश्व को छान डालता है। किन्तु सफल हो नहीं पाता। अन्त में कवि उसे अपनी आत्मा में ही सूक्ष्म रूप में पाता है। कवि के लिए वही आराध्य देवी हैं, वही साकार कविता है और वही प्रेयसी भी है। कवि की लौकिक प्रेम-भावना अन्त में देवी-उपासना में परिणत हो अलौकिक हो जाती है।

उपर्युक्त दोनों काव्यों में प्रसाद और सत्यनारायण लौकिक प्रेम आदर्श तथा अलौकिक प्रेम-भावना में परिणत होता है।

उपसंहार :-

जयशंकर प्रसाद और विश्वनाथ सत्यनारायण में पर्याप्त साम्य हैं। दोनों उदीयमान कवि हैं और अपनी रचनाओं के द्वारा संस्कृति का गुणगान करते हैं।

प्रसाद अपनी रचनाओं के कारण हिन्दी काव्य-क्षेत्र के मूर्धन्य कवि होने के साथ-साथ अपने काव्यों की विश्वजनीनता, गम्भीरता, सूक्ष्मता, विशालता एवं चिरन्तनता के कारण विश्व के महान साहित्यकारों की पंक्ति में उनका आदर तथा स्थान है। वे भारतीय कवि होते हुए भी विश्वकवि हैं। उन्होंने मानव मात्र की चिरन्तन भावनाओं एवं समस्याओं का चत्रिण किया है।

सत्यनारायण के काव्यों में आन्ध्रत्व तथा आन्ध्र वातावरण के कारण उनकी महत्ता आन्ध्र प्रान्त तक ही सीमित है।

हाँ, प्रसाद एवं सत्यनारायण स्वभाव एवं कृतित्व की दृष्टि से एक-दूसरे के अत्यन्त निकट हैं।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

❖ ❖ ❖

पाठ - 4

सुमित्रानन्दन पन्त और अंग्रेजी स्वच्छन्दतावादी कवि

प्र.4. सुमित्रानन्दन पन्त की तुलना अंग्रेजी स्वच्छन्दवादी कवियों से कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

प्राचीन काल से विश्व के काव्य साहित्य में दो प्रवृत्तियों दिखाई देती हैं – (1) परम्परावाद और (2) स्वच्छन्दतावाद। परम्परावादी कवि निर्वैयक्तिक होकर काव्य का निर्माण करते हैं। भाषागत सौष्ठव एवं गम्भीर्य उनके काव्यों में होता है। महाकाव्य तथा खण्डकाव्य लिखने की उनकी प्रवृत्ति होती है। वाल्मीकि, व्यास, भवभूति, होमर, मिल्टन, मधुसूदनदत्त, मैथिलीशरण गुप्त आदि कवि इसके अन्तर्गत आते हैं।

स्वच्छन्दवादी कवि किसी प्रकार का बन्धन स्वीकार नहीं करते। वे अपनी वैयक्तिक हृदयगत भावनाओं को स्वच्छन्द रूप में प्रकट करते हैं। इन में अधिकतर छोटी एवं प्रवाहपूर्ण रचनाएँ लिखने की प्रवृत्ति के साथ प्रकृति, संगीत एवं आदर्शों के प्रति अनन्य अनुराग पाया जाता है। शेली, कीट्स, वर्ड्सवर्थ, बाइरन, रीवन्द्र आदि कवि इसके अन्तर्गत आते हैं।

कालिदास, जयशंकर प्रसाद आदि कुछ कवियों में दोनों प्रवृत्तियों का सामंजस्य एवं सन्तुलन प्राप्त होता है। वास्तव में कोई कवि पूर्णरूपेण परम्परावादी या स्वच्छन्दावादी नहीं होता। केवल उसकी प्रवृत्ति एक की ओर अवश्य रहती है। परम्परावादी कवि मिल्टन एवं मधुसूदनदत्त में स्वच्छन्दतावाद की झलक मिलती है। स्वच्छन्दतावादी कवि कीट्स एवं एवं निराला में परम्परा की कुछ वृत्तियाँ मिलती हैं।

2. वर्ड्सवर्थ और पन्त :-

वड्सवर्थ और पन्त प्रकृति के अनन्य उपासक हैं। दोनों को कविता लिखने की प्रेरणा प्रकृति निरीक्षण से ही प्राप्त हुई है। वर्ड्सवर्थ प्रकृति और मानव को साथ लेकर चलते हैं। उनके काव्य में प्रकृति के साथ मानव की आत्मा का एकाकार प्राप्त होता है। पन्त प्रकृति की अनन्त सुषमा में ही तल्लीन रहते हैं।

वर्ड्सवर्थ प्रकृति की शोभा में दार्शनिक एवं अध्यात्मिक विचारों को ग्रहण करने के लिए तत्पर दिखाई पडते हैं। उन्होंने प्रकृति को एक सन्देशवाहक एवं गुरु माना है और प्रकृति का अध्यात्मीकरण किया है। प्रकृति के बाह्य आवरण से आत्मा तक जाने की प्रवृत्ति उन में है।

पन्त मूलत: प्रकृति के कवि हैं। प्रकृति के कम्पन में वे हृदय-स्पन्दन पाते हैं। उनका व्यक्तित्व प्रकृति में बिखर कर वे प्रकृति के कलात्मक पाशों में बाँधे जाते हैं। पन्त प्रकृति की अनन्त सुषमा का साक्षात्कार स्वयं करते हैं और पाठक को भी कराते हैं।

मानव के बाह्य आवरण से भी आन्तरिक सूक्ष्मता की ओर वर्ड्सवर्थ की प्रवृत्ति अधिक है। प्रकृति और मानव के पारस्परिक सामंजस्यपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करके वर्ड्सवर्थ मानव को उसके नैसर्गिक रूप में देखना चाहते है। शक्ति, सहिष्णुता, सादगी, धैर्य तथा आशा युक्त मानव ही उनका (वर्ड्सवर्थ का) आदर्श मानव है। पन्त मानव-जीवन में प्रेम, त्याग, विश्वास एवं साधना को अधिक प्रधानता देते हैं। प्रगीतों एवं मुक्तकों के क्षेत्र में दोनें ने सफलतापूर्वक काव्य रचना की है। दोनों की कविता आवेगपूर्ण न होकर कवियों के स्वस्थ एवं शान्त क्षणों में लिखी गयी-सी लगती है। दोनों की कविता में चिन्तन की गहनता, संयम, शान्त एवं गम्भीर स्निग्धता आदि के दर्शन होते हैं। दोनों में काव्य विकास के साथ अनुभूति (Feeling) एवं भावना (thought) की अपेक्षा चिन्तन की प्रमुखता है। दोनों में काव्यत्मकता की अपेक्षा दर्शन की प्रमुखता दिखाई देती है।

काव्यकला की दृष्टि से वर्ड्सवर्थ में चित्रों एवं बिम्बों को केवल ध्वनि के माध्यम से ग्राह्य बनाने की अनुपम क्षमता है। पन्त में ध्वनि के साथ वर्ण, गन्ध, स्पर्श एवं गति से भी बिम्बों को ग्राह्य बनाने की विशद चातुरी है।

हैवेड्स के सुदूर प्रान्त में
अम्बुधियों की नीरवता को चीर कर
आनेवाला कोकिल का वैसा पुलकाकुल स्वर
कभी न सुना गया बसन्त की बेला में !

- वर्ड्सवर्थ

विहग कुल की कलकण्ठ हिलोर
मिला देती भू नभ के छोर। - पन्त

पपीहों की वह पीन पुकार
निर्झरों की भारी झर-झर
झींगुरों की झीनी झनकार
घनों की गुरु गम्भीर घहर
बिन्दुओं की छनती छनकार
दादुरों के वे दुहरे स्वर। -

पन्त

वर्ड्सवर्थ से बढ़ कर पन्त का ध्वनिविन्यास है। कला-सौष्ठव, बिम्ब-अंकन, सौन्दर्य-बोध एवं कल्पना वैभव की दृष्टि से पन्त का स्थान वर्ड्सवर्त से बढ़कर है।

3. बाइरान और पन्त :

स्वच्छन्दतावादी काव्य-धारा में बाइरन का एक-स्वतन्त्र स्थान है। वे अपने काव्य में आध्यात्मिकता एवं नैतिकता का आरोप नहीं करते। उनकी कविता व्यक्तित्व अधिक शक्तिशाली एवं प्रभावशाली है। यैवन, प्रेम एवं अतीत से उन्होंने काव्यप्रेरणा ग्रहण की है। उनका दृष्टिकोण यथार्थवादी एवं व्यावहारिक अधिक है। उनके स्वभाव में आल्हडपन है और उनकी कविता की उपमाओं और प्रतीकों में कवि का उन्मुख स्वरूप निखरता है। उनकी कविता में अन्योक्ति एवं व्यंग्य अधिक मात्रा में मिलते हैं। बाइरन की सौन्दर्यवादी कविता देखिए -

सौन्दर्य में चलती है वह, मेघ हीन
वातावरण औ, नक्षत्रोज्वल गगन से
शोभायमान रजनी के समान।

पन्त की कविता आदर्शवादी होकर यौव का पावन उल्लास है। पंत में बालक की-सी सरलता है। पंत में व्यंग्य पल्लव के प्रवेश में मिलता है। पंत में संयमित सौन्दर्य की छटा है। उन में दर्शन का अवलंबन दिखाई देता है।

बाइरन की कविता में कवि का प्रखर व्यक्तित्व उतरा है। पन्त की कविता में संयम मिलता है और कला की सुकुमारता दिखाई देती है। उनकी लेखनी चित्रकार की तूलिका लगती है।

बाइरन मूलतः विद्रोही कवि हैं और पन्त एक सौम्य कलाकार हैं।

4. शेली और पन्त :-

शेली और पन्त मूलतः प्रेम स्वप्न के कवि हैं। इन दोनों के काव्य कोमल भावनाओं एवं कमनीय कल्पनाओं से युक्त हैं। दोनों कवि अपनी असाधारण काव्य-प्रतिभा एवं कल्पना-शक्ति द्वारा मानव-जीवन की कोमल अनुभूतियों और इन्द्रिय-ग्राह्य संवेदनाओं को व्यक्त करते हैं। उनकी कविता में एक प्रकार के बाल-जिज्ञासा एवं कौतूहल के साथ आन्तरिक उल्लास का दर्शन होता है और एक कसक तथा करुणा-भावना अन्तः सलिला की भाँति प्रवाहित होती रहती है। शेली और पन्त प्रेम-मार्ग के पथिक हैं।

शेली और पन्त के वैयक्तिक प्रेम की मादकता, स्वीय प्रणयानुभूति, अतीत की मधुमय, स्मृतियाँ तथा आशा-निराशा की धूप-छाया आदि क्रमशः 'एपिपशिडियॉन' और 'ग्रन्थि' में संचित हैं। प्रेम, करुणा एवं सहानुभूति दोनों की कविताओं में प्रधान गुण है। वैयक्तिक निराशा एवं करुणा की भावनाओं का क्रमिक विकास ही उन दोनों कवियों को अधिक व्यापक धरातल पर ले गया। शेली अपने प्रसिद्ध गीत 'स्काश्लार्क' में पक्षी से आत्मीयता स्थापित कर उल्लास की भिक्षा माँगते हैं तो पन्त 'छाया' के करुणतर चित्रों को उपस्थित कर उसके साथ तादात्म्य स्थापित कर लेते हैं और उससे पर पीडा से पीडित होना सीखना चाहते हैं -

''परपीडा से पीडित होना
मुझे सिखा दो, कर मदहीन।'' **- (छाया) पन्त**

शेली और पन्त अपने वर्ण्य विषयों का मानवीकरण कर उनमें मानवीय भावनाओं का आरोप करते हैं। पन्त स्वयं अपने मन को विश्व-वेदना के ताप में तपने को अद्बोधित करते हैं -

''विश्व वेदना में तप प्रति पल
जा जीवन की ज्वाला में गल।'' **- गुंजन : पन्त**

'रिवोल्ट ऑफ इस्लाम' और 'प्रोमेथियस अन्बाउण्ड' आदि रचनाओं में शेली ने काव्य के द्वारा मानवता की सुन्दरतम भावनाएं देने का सफल प्रयास किया है। जहाँ शैली ने चन्द्रमा, अप्सरा और पृथ्वी के विविध प्रतीकों के प्रयोग से 'प्रोमेथियस अन्बाउण्ड' का सुन्दर रूपक का निर्माण करके मानवता के मुक्ति, भ्रतृत्व, प्रेम, स्वातन्त्र्य समानता एवं आध्यात्मिकता की प्रतिष्ठा की है, वहाँ पन्त के ज्योत्स्ना, स्वप्न, कल्पना आदि प्रतीकों के माध्यम से ज्योत्स्ना की सृष्टि कर विश्व में प्रेम का नवल स्वर्ग, सौन्दर्य

नवीन आलोक और जीवन का विनूत्न आदर्श स्थापित करने का प्रयास किया है। दोनों कवियों को प्रकृति के प्रति मोह तथा संगीत के प्रति आकर्षण है।

भिन्नताएँ :-

शेली के मनोवेगों का विस्फोट दुर्निवार है और पन्त में अपेक्षाकृत गंभीरता और भाव-सघनता है। शेली में धुआँ-धार अप्रतिहत वेग हैं और पन्त में अपूर्व धारा-प्रवाह है। शेली बाह्य सौन्दर्य पर मुग्ध है और पन्त आन्तरिक सौन्दर्य के द्रष्टा हैं। शेली के हृदय में सृजन की स्फूर्ति और स्वप्न निर्माण का वैभव है और पन्त में अध्यात्मिक चेतना और वस्तु सत्य के समन्वय का कौतूहल है। शेली की दृष्टि आकाश की ओर एकटक निहार करती है और पन्त की नीचे ऊपर के सत्य को जानन को सतत उत्सुक। शेली में भावोन्मेष हो तो पन्त में चिरन्तन समाधान की आकांक्षा। शेली के 'क्लाउड' और पन्त के 'बादल' में आत्म-चेतना का पार्थक्य हैं।

शेली और पन्त दोनों ने अमर सत्यों, कल्पनाओं एवं अनुभूतियों को साकार किया है।

5. कीट्स और पन्त :-

कीट्स और पन्त मूलत : सौन्दर्योपासक कवि हैं। बाह्य सौन्दर्य के वर्ण, गंध,ध्वनि एवं स्पर्श ने कीट्स की कल्पना को उद्दीप्त किया है। दृश्यात्मक जगत से वे आनन्द-विभोर हो जाते हैं। कीट्स और पन्त किन्हीं चिरन्तन एवं सार्वदेशिक आज्ञात सत्ता की ओर जाने की आकांक्षा रखते हैं। प्रेम और मिलन की सम्बन्धी चित्रों में केंद्रिय मादकता दोनों में मिल जाती है।

1. **निज परी-गुफा में मुझे ले गयी**
और वहाँ निजदृष्टि फेर कर भरा तीव्र उच्छास
मैं ने मूँदा उसके हिंस्रक चिन्ताकुल नयनों को
और सुलाया उसे चुम्बन से **- कीट्स**
तुमने अधरों पर धरे अधर
मैंने कोमल वपु भरा गोद
था आत्म-समर्पण सरल मधुर
मिल गये सहज मारुतामोद। **- (प्रथम मिलन) पन्त**

2. या थकित इन्दु जब शंकित होकर
ऊपर को धरती पग मंथर।
पहन घवल-घन- वसने सुन्दर
शोभित होती ज्यों धाय मधुर
विश्रान्ति दिवस के वसने घर। - कीट्स
लहरों के घूँघट से झुक-झुक
दशमी का शशि निज तिर्थक् मुख
दिखलाता मुग्धा-सा रुक-रुक। - नौका विहार - पन्त

कीट्स और पन्त दोनों काव्य-कला की दृष्टि से अत्यन्त निकट प्रतीत होते हैं। वे दोनों कवि अपने प्रगीतों में अत्यन्त प्रांजल एवं परिष्कृत शब्दों का अपने शब्दों का प्रयोग करते हैं। उनकी कविता चित्रत्मकता, बिम्बात्मकता तथा संगीत की लहरी में ढ़लती है। सौन्दर्यांकन एवं शब्द शिल्प में दोनों कवि अद्वितीय है। 'भावी पत्नी', 'ज्योत्स्ना' और 'इन्दु' के चित्रों में कीट्स की कला की भव्यता पन्त में मूर्तिमान होकर आई है। कीट्स का 'ओड टु दि नाइटिंगेल' तथा पन्त के 'ग्रन्थि' और 'परिवर्तन' उक्त कथन का समर्थन करते हैं।

भिन्नताएँ :-

कीट्स की दृष्टि सत्य और सौन्दर्य पर आधारित है और पन्त शिवं को आधार बनाकर चलते हैं। कीट्स इन्द्रियों की अनुभूतियों को प्रधानता देते है तो पन्त अतीन्द्रिय अनुभूतियों को। कीट्स में सौन्दर्य की मादकता है, तो पन्त में सौन्दर्य की पवित्रता एवं अतीन्द्रियता है। कीट्स अपने सुख-दुःखों में तल्लीन होते हैं, तो पन्त विश्व के सुख-दुखों में लीन होते हैं। कीट्स में अनुभूति की प्रधानता होती है और पन्त में जीवन-दर्शन की प्रधानता होती है।

लघुगीतों के अतिरिक्त 'एण्डीमियन', 'लेमिया', 'दि ईव ऑफ सेण्ट ऐग्नीज', 'इजबेल्ला' आदि कीट्स की प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

पाठ - 5

भारत की दो महिला गीतिकार
महादेवी वर्मा और चावलि बंगारम्मा

प्र.5. भारत की महिला गीतिकार महादेवी वर्मा और चावलि बंगारम्मा की कृतियों की समीक्षा कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

महादेवी वर्मा हिन्दी की और चावलि बंगारम्मा तेलुगु की कवयित्रियाँ हैं। दोनों ने अपनी-अपनी भाषा में अमर गीतों का सृजन किया है। दोनों में मार्मिक अनुभूति तथा अनुपम कल्पनाशीलता है।

2. प्रकृति-चित्रण एवं बिम्ब-विधान :-

महादेवी वर्मा और बंगारम्मा दोनों ने प्राकृतिक वैभव का अंकन अनेक बिम्बों के माध्यम से किया है। दोनों ने मानवीय चेतना के माध्यम से मानवीय क्रिया कलापों का चित्रण किया है।

महादेवी के सभी गीतों में प्रकृति की छाया है। वे अपनी भावनाओं को प्राकृतिक परिधान (वेशभूषा) पहनाती हैं। वे क्षितिज से धीरे-धीरे उतर आनेवाली वासन्ती निशा को स्त्रियोचित वेश-भूषा से सजाती हैं।

धीरे-धीरे उत्तर क्षितिज से आ वसन्त-रजनी!
तारकमय नव वेणी-बन्धन
शीशफूलकर शशि का नूतन
रश्मि वलय सित घन अवगुंठन
मुक्ताहल अभिराम बिछा दे चितवन से अपनी ! **- नीरजा**

बंगारम्मा भी मंदार पुष्प की तुलना एक नारी के रूप में अंकित करती हैं। निर्मल जल के दर्पण में अपनी छाया देखकर मंदार पुष्प का अपने ही सौन्दर्य पर रीझ जाना तथा पर तिलक लगाना आदि चेष्टाओं से उस चित्र में नारी मूर्ति की प्रतिष्ठा प्रतिबिम्बित होती है।

देख रही थी अपनी छवि को
नदी त्तट की मंदार सुन्दरी
जल पर झुक कर तिलक लगाती
देख रही थी - अपनी छवि को **- कांचन विपंचि**

माहादेवी और बंगारम्मा अपने गीतों में प्रकृति के स्थिर एवं गत्यात्मक बिम्बों की व्यावस्था कर देती हैं। महादेवी एक गीत में रजनी के श्यामल कपोलों पर दुलकनेवाले तुहिन कण रूपी श्रमकणों के निर्मल बिम्ब को अंकित करती हैं -

रजनी के श्याम कपोलों
पर ढ़रकीले श्रम के कन। **- नीरजा**

'कार्तिक पूर्णिमा' शीर्षक गीत में बंगारम्मा प्रकृति के निश्चल बिम्ब को प्रस्तुत करती हैं -

मूक पडा है खगकुल सारा
वृक्ष देखते मौन धरे हैं। **- कांचन विपंचि**

महादेवी की कविता में प्रकृति के गत्यात्मक सजीव बिम्बों का प्रत्यक्षीकरण होता है। प्रकृति के विभिन्न का मानवीकरण होता है।

हँस देता जब प्रात, सुनहरे
अंचल में बिखरा शेली
लहरों का विछलन पर जब
मचली पडती किरणें भोली

तब कलियाँ चुपचाप उठा कर पल्लाव के घूंघट सुकुमार छलकी पल्लवों से कहती हैं, कितकना मादक है संसार। **- आधुनिक कवि**

बंगारम्मा अपने 'आ कोंडा' (वह पर्वत) शीर्षक गीत में अत्यन्त सुन्दर एवं प्रभावपूर्ण गत्यात्मक बिम्बों का अंकन किया है -

मंचुलो मुनिगिंदि
मायमै पोइंदि
आकाशमुन गलसेनो
आकोंड
अक्कडे पडि युंडेनो ! **- वैतालिकुलु**
सघन तुहिन में पूर्ण समाकर

छिप गया है पहाड
जाने आकाश में लीन हुआ
या वहीं अटक गया हो।

3. आध्यात्मिकता :-

महादेवी वर्मा और बंगारम्मा ने अध्यात्मिक विषयों पर पर्याप्त गीतों की रचना की।

महादेवी एक रहस्यावादी कवयत्री हैं। अलौकिक तथा निराकर प्रियतम के प्रति प्रेमाभि व्यंजना ही उनके गीतों का मूल विषय है। उनके अधिकांश गीतों में मिलन एवं विरह के मनोरम चित्र भरे पडे हैं। प्रियतम के विरह में वे अनुपम पीडा का अनुभव करती हैं। यही पीडा उनके गीतों में साकार हो उठी है। इसी दिशा में बंगारम्मा ने भी विविध गीतों की रचना की। उन्होंने ईश्वर को प्रिय मान कर विरह भावना व्यक्त की। साथ-साथ उन्होंने कृष्ण के विरह में व्यथित होनेवाली राधिका का सुन्दर चित्रण भी किया है। इन दोनों कवयित्रियों में प्रेम-भावना उदात्त एवं अलौकिक हो जाती है। अपने गीतों में उन्होंने आशा-निराशा, हास-अश्रु का मार्मिक अंकन किया है। अपने अलौकिक प्रियतम को वे दोनों दूतों द्वारा सन्देश भेजती हैं। महादेवी वर्मा प्रियतम को संदेश भेजने का विधान प्राय: न जानती हों -

कैसे सन्देश प्रिय पहुँचाती।
छाया पथ में छाया से चल
कितने आते जाते प्रति पल
लगते उनके विभ्रम इंगित
क्षण में रहस्य क्षण में परिचित
मिलता न दूत वह चिर परिचित
जिसको उर का धन दे आती! - आधुनिक कवि

महादेवी कभी-कभी प्रियतम के आगमन का संकेत आकाश की मुस्कराहट में पाती है -

मुस्काता संकेत भरा नभ,
अलि क्या प्रिय आने वाले हैं? - आधुनिक कवि

इस प्रकार महादेवी प्रियतम से मिलन की प्रतीक्षा करती हैं।

बंगारम्मा अपने अलौकिक प्रियतम के यहाँ सूर्य के द्वारा सन्देश भेजती हैं। वे प्रियतम की दया की याचना करती हैं –

दया-याचना करती उनकी

मन के भाव न मिटने पावे

आँखों में नय शिथिल न होवे

इस के पहले ही दिनकर ! तुम

उन से आने को कह दो।

महादेवी और बंगारम्मा ने अपने अलौकिक प्रियतम के साथ मिलन के अनुपम चित्र अंकित किये हैं। महादेवी प्रियतम से मिलकर एकाकार हो जाती हैं –

तुम मुझ में प्रिय फिर परिचय क्या?

तारक में छवि प्राणों की स्मृति,

पलकों में नीरव पद की गति,

लघु उर में पुलकों की संसृति

भर लाई हूँ तेरी चंचल

और करूँ जग में संचय क्या? **- नीरजा**

बंगारम्मा भी अपने अलौकिक प्रियतम से मिलन का प्रसंग करती हैं –

जो कुछ देखा था मैं ने

वह मुझ में ही हुआ लीन,

जिसे देखती थी

वह सब कुछ मुझ को लगा शून्य।

वास्तव में विरह की प्रेम की जागृति दशा है।

विरह का मर्मस्पर्शी चित्रण महादेवी के हृदय से पल्लवित होता है –

विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात,
वेदना में जन्म करुणा में मिला आवास;
अश्रु चुनता दिवस इसका अश्रु गिनती रात
जीवन विरह का जलजात! **- नीरजा**

बंगारम्मा राधा की विरह-वेदना में अपनी वियोग पीडा का अंकन करती हैं -

उन्मीलित आँखों में
मुँदी हुई पलकों में
केवल प्रियतम छाये ;
उन्हें बिना देखे मैं
पत्य भर रह ने सकूँगी।

इस प्रकार महादेवी और बंगारम्मा के गीतों में आध्यात्मिक विरह-वेदना का मार्मिक हृदयंगम चित्रण हुआ है।

4. कलान्विता :-

कला की दृष्टि से महादेवी और बंगारम्मा के गीत अत्यन्त उच्चकोटि के हैं। दोनों ने संगीत और लय को निभाने के लिए मात्रिक छन्दों का प्रयोग किया है। दोनों ने गीत-रचना की एक विशिष्ट प्रणाली अपनायी है। प्रथमत: वे एक टेक में सारततत्त्व रखकर अन्य पंक्तियों में उसी मूलभाव का पल्लवन करती हैं। शब्दों के संचयन में गीतमाला, पुष्पलता की तरह गूँथ जाती हैं। गीतों में सारत्य, माधुर्य एवं गीति तत्त्व कूट-कूट कर भरे हुए हैं। संस्कृत के तत्सम शब्दों का अधिक प्रयोग हुआ है।

परिणाम में महादेवी के गीतों की तुलना में बंगारम्मा के गीत कम होते हुए भी रसात्मकता और संवेदनशीलता के कारण महादेवी के पार्श्व में स्थान पाते हैं। महादेवी के गीतों में सनातन भारतीय नारी के चिरन्तन भावनाओं की वाणी पल्लवित होती है। बंगारम्मा के गीतों में आन्ध्रों के रीति-रिवाज, रहन सहन और वेश-भूषा का चित्रण मिलता है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

हिन्दी और तेलुगु कवियों का तुलनात्मक अध्ययन

पाठ - 6

कबीर और वेमना

6. कबीर और वेमना की कविताओं की तुलनात्मक समीक्षा कीजिए।

रूपरेखाः-

1. प्रस्तावना :-

कबीर और वेमना अपने समय के संत कवि थे। संत कबीर उत्तर भारत में काशी के रहनेवाले थे और योगी वेमना आन्ध्र प्रान्त के थे। दोनों उपदेशक,सुधारक,विचारक,दार्शनिक तथा कवि थे। दोनों के विचारों तथा उपदेशों में भावसम्य हैं। दोनों पंद्रहवी सदी में पैदा हूए थे।

कबीर के समय उत्तर भारत में हिन्दू - मुसलमान के बीच भेद-भाव थे। आन्ध्र में शैवों तथा वैष्णवों के बीच भेद-भाव अग्ररूप में था। दोनों प्रान्तों में ऊँच-नीच का भेदभाव, परस्पर विद्वेष, अहंकार,आत्म-स्तुति एवं परनिंदा आदि के कारण वातावरण कलुषित हो गया था। पंडितों की पंडिताई,एवं कलाविदों की कला-कौशल वाग्विलास प्रदर्शन मात्र रह गये।

कबीर अनपढ़ माने जाते हैं **''मसि कागद छुयो नहीं,गलम गही नहि हाथ''**। कहाजाता है कि वे रामनन्द के शिष्य थे। वेमना कोंडवीडु के सुसंपन्न रेड्डि वंशज थे। वे सोमेश्वर पण्डित के शिष्य माने जाते हैं। उनका शैशव सुखप्रद रहा था और यौवन-काल भोग-विलास में बीता था। पश्चात उन्होंने विरागी हो योगमय जीवन व्यतीत किया।

2. स्वष्टवादिता :-

कबीर और वेमना दोनों संत कवि तथा स्पष्टवादी थे। साधु-संगति, श्रवण, मनन, चिन्तन तथा देशाटन द्वारा उन्होंने अखण्ड ज्ञान की प्राप्ति की। दर्शन तथा लौकिक अनुभव की गहरी छाप उनके साहित्य में प्रतिबिम्बित होती है शिष्य को सुधारने के लिए कबीर गुरु को धोबी के समान मानते हैं-

गुरू धोबी सिष कपडा साबुन सिरजन हार।
सुरति शिला पर धोइए निकसत ज्ञान अपार॥

इसी भावना से मेल खाते हुए वेमना कहते हैं-शिला पर पटक-पटक कर कपडे धोने से, उन कपडों का ही भला होता हैं। उनका मैल कुल कर कपडे चमकते हैं। इसी प्रकार अवश्यकतानुसार हितैषी मार-पीट कर उपदेश देता हैं-

चाकि कोकलुदिक चीकाकु पडजेसि

मेलदीसि लेस्स मडिचितट्टु

बुद्धि चेप्पुवाड्डु गुदि्दतेनेमया

विश्वदाभिराम विनुरवेमा।

3. साम्प्रदायिक समस्याओं पर संघर्ष :-

कबीर और वेमना साम्प्रदायिक समस्याओं पर निरन्तर संघर्ष करते थे। हिन्दु-मुसलमानों के बीच की खाई सुधारने लगे । शैव और वैष्णव,ब्राह्मण और शूद्र के भेद-भाव को दूर करने का प्रयत्न वेमना ने किया। दोनों समाज में होनेवाले ढ़ोंग, पाखंड और कर्मकाण्ड के कट्टर विरोधी थे। दोनों की दृष्टि दुराचारों का खण्डन तथा लोकल्याण का मण्डन रही। स्वभाव से वे दोनों उद्दण्ड थे और डटकर सामाजिक दुराचारों का खण्डन करते थे। उनके सत्य भाषणा में कटुता भरी रहती थी।

साम्प्रदायिक कट्टरता का खण्डन करते हुए वेमना कहते हैं,''**धूर्त वैष्णव शंख-चक्रों की छाप लगाकर ललाट पर तिलक धारण कर भक्ति का ढोंग रचते हैं। भक्ति पुर्वजन्म के पुण्य संप्राप्त होती है।**'' इन विचारों की प्रतिच्वाया कबीर की वाणी में लक्षित होती है-

माला पहिरै, टोपी पहिरै, छाप तिलक अनुमाना ।

साखी सबदै गावत भूले आतम सबहि न जाना॥

कबीर ह्दयस्थ परमात्मा की खोज करने की सलाह देते हैं-'**आपुन ने आपुहि बिसरों।**'

जैसे श्वान काँच मंदिल मँह भ्रमि-भ्रमि भुँसिमरों! वेमना भी इन्हीं विचारों से मिलते-जुलते छन्द में कहते हैं-''तत्त्वज्ञान न रखने से मूर्ख सांप्रदायिक भूल-भुलैया रचकर दुःखी हो रोता है, जिस प्रकार काँच-गुह में प्रवेश कर कुत्ता आपनी असंख्य प्रतिच्छायाओं को भ्रमवश सही कुत्ते समझकर भूँक-भूँक मरता है।''

4. ज्ञान की महत्ता :-

कबीर और वेमना दोनों संत और नीतिकर थे। दोनों नें पारिवारीक नीति की अपेक्षा सामाजिक नीतिकी प्रचुरता पाई जाती है। साधु, पण्डित -मूर्ख, गुरु-शिष्य,सज्जन-दुर्जन,जाति-पाँति,छुआ-छुत,संग-कुसंग,परनारी आदि विषयों पर अनुभूति-पटक वाणी चलाई। मानव अपने गुणों के कारण और ज्ञान के आधार पर पूजनीय होता है। कुल और ज्ञान का कोई सम्बन्ध नहीं। इस सम्बन्द में दोनें कवियों के विचार एक ही हैं-

जाति न पूछो साधु की,पुछ लीजिए ज्ञान।

मोल करो तलवार का,पडा रहने दो म्यान ॥

-कबीर

गुणमुल कलवानि कुलमेंचगानेल

गुणनु कलिगेनेनि कोटि सेयु।

गुणमुलेक युन्न गुड्डि गव्वयु लेदु

विश्वदाभिराम विनूर वेम॥ **-वेमना**

5. **कर्म की महत्ता :-**

संत कबीर और योगी वेमना भौतिक रूप से तथा अध्यात्मिकता के रूप से भी कर्म की महत्ता बताते हैं। पानी में उतरने से ही गहराई का पता चलता है –

जिन ढूँढ़ा तिन पाइया,गहरे पानी पैठ।

हों बौरी डूबन डरी,रही किनारे बैठ॥ **-कबीर**

कर्ममयुडुगाक कर्मकु देलियडु

कर्मजीवि मेलु गानलेडु

नीरु सोरक लोतु निकरमु तेलियदु **-वेमना**

6. **मूर्ख की चित्तवुत्ति का विवरण :-**

कबीर और वेमना मुर्ख की चित्तवृत्ति के बारे में बताते हैं। कबीर के अनुसार कोयले को नौ मन के साबुन से धोने पर भी वह सफेद नहीं होता। वेमना का कथन है कि चूहे की खाल को जितना भी धोये वह सफेद न होती। कठपुतले को लाकर पीटने पर भी वह बोल न पाता।

मुरख को समझावत, ज्ञान गाँठि खो जाय।

कोईला होइ न ऊजरो, नौमन साबुन लाइ॥

-कबीर

एलुक तोलु तेच्चि एंदाक नुदिकिन

नलुपु नलुपे कानि तेलुपु गादु

कोय्य बोम्मनु तेच्चि कोट्टिन गुणियौने।

7. गुरु तथा सत्संग :-

संत कबीर और योगी वेमना दोनों ने गुरु की महत्ता का गुणगान किया हैं। वेमना के अनुसार उनके गुरु ही देवता है। इस से बढ़कर कोई अन्य धर्म नहीं।

गुरू गोविन्द दोऊ खडे,काके लगौं पाय।

बलिहारी गुरू आपने, गोविन्द दियो बताया॥

कबीर और वेमना दोनों मे संत्संग की महत्त और कुसंग की दुष्टता की व्याख्या की है। सत्संग में रहते हुए जौ की भूसी प्राप्त हो तो अच्छी, किन्तु कुसंग में मृष्टान्न भी त्याज्य है। वेमना के अनुसार जीवन भर सत्संग करे,परोपकार करे!

कबिरा संगत साधुकी,जौ की भूसी खाय।
खीर खाण्ड भोजन मिलै ताकट संग न जाय॥

- कबीर

8. नारी की निन्दा :-

कबीर और वेमना के अनुसार कंचन और कामिनी साधना मार्ग में विघ्न डालते हैं। कनक और कामिनी पर दृष्टि पडते ही ब्रह्मज्ञानी के भी दिमाग में कीडे कुरेदने लगते हैं।

एक कनक अरु कामिनी जग में दुइ फंदा।

इनमें जो ने बँधवई ताकर मैं बंदा ॥

-कबीर

आडुदानि जूड नयंत्रु जूडंग

ब्रह्मकैन बुट्टु रिम्म तेगुलु ॥

- वेमना

9. बाह्याडम्बरों का खण्डन :-

कबीर और वेमना दयाभाव को धर्म की आधार शिला मानते हैं। क्षमाशीलता दैवी गुण है। धर्म मानव की रक्षा करता है। दोनों ने मूर्तिपूजा का डटकर खण्डन किया। अवतार, मूर्तिपूजा, बाह्याडम्बर, तीर्थाटन, अद्वैत, काम, क्रोध, लोभ, क्षमा, भाग्य, सुख-दुःख, मधुर वाणी, अध्ययन आदि के बारे में दोनों के विचार समान हैं। मूर्तिपूजा के विरोध में कबीर का कथन है-

पाहन पूजे हरि मिले, मैं पूजूँ पहार।

वेमना पत्थरों को नैवेद्य चढ़ाने से भिडते हैं-

तोलु कडुपुलोन दोड्डवाडुंडग

राति गुंड्ल नेल राशिबोय

राइ देवुडैन रासुल म्रिगंदा॥

तीर्थाटन के नाम पर या धर्म के नाम पर सिर का मुंडन करना दोनों ने खण्डन किया। शिरोमुंडन मात्र से विषय-विकार दूर नहीं होते और वह एक मूढ़-विश्वास है।

केसन कहा बिगारिया, जो मूँडो सौ बार।

मन को क्यों नहिं मूँडिये जा में विषय विकार॥ **-कबीर**

तललु बोडुलैन तलपुलु बोडुला। **-वेमना**

तीर्थाटन के विरोध में दोनों के विचार समान हैं-

मन मथुरा, दिल द्वारिका, काया कासी जान।

दस द्वारे का देहरा तो मैं जोति पिछान ॥

-कबीर

तिरुपति कि बोव तुरक, दासरि गाडु

काशिकेग पंदि गजमु गादु

कुक्क सिंहमगुने गोदावरिकि बोव

-वेमना

(तिरुपति जाने मात्र से मुसलमान भगवान का भक्त नहीं बनता। काशी की यात्रा करनेमात्र से सुअर हाथी नहीं बनता। गोदावरी में स्नान करनेमात्र कुत्ता सिंह नहीं बनता।)

10. अद्वैत विचारधारा :-

कबीर और वेमना दोनों महान दार्शनिक हैं। दोनों के विचार अद्वैतवाद पर आधारित हैं। 'अहं ब्रह्मास्मि, सर्वं खल्विदं ब्रह्म' आदि विचारों पर उनका दर्शन आधारित है। हिन्दी साहित्य के अनुसार यह 'रहस्यवाद' कहलाता है।

तेरा साई तुज्झ में, ज्यों पहुपन में वास।
कस्तूरी का मिरग ज्यों, फिरि-फिरि ढूँढ़ै घास॥

-कबीर

मनसुलोनिमुक्ति मरियोक्क चोटनु
वेदुकबोवुवाडु वेर्रिवाडु
गोर्र चंक बेट्टि गोल्ल वेदकु रीति।

-वेमना

(गडरिया भेड के बच्चे को अपनी ही बगल में दबाये रखकर और कहीं ढूँढ़ता रहता है।)

दोनों का परमात्मा की कृपा पर अखण्ड विश्वास है। सारा संसार भी उसका बाल हिला नहीं सकता (कबीर) वेमना कहते हैं कि यमराज भी उस पर नजर डाल नहीं सकता।

जाको राखै साइयाँ, मारि न सक्कै कोय।
बाल न बाँका करि सकै, जो जग बैरी होय॥

-कबीर

धर्मबुद्धि चेत दैवम्मु देलिसिन
कालुडेगि चेयगलडु प्रजल
धर्ममंटि वेंट दैवम्बु तानुंडु।

-वेमना

11. ज्ञान तथा सत्य :-

मुक्ति ज्ञानगम्य है और ज्ञान साधनागम्य है। उसकी प्राप्ति के लिए उपासना अत्यन्त आवश्यक है। विविध पुस्तकों के पढ़ने मात्र से मानव विद्वान नहीं बनता। भगवान के साथ तदाकारित्व (सम्बन्ध) रखने से सच्चा पण्डित बनता है।

पोथी पढ़ि-पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय।

ढ़ाई अक्षर प्रेम का, पढ़े सो पण्डित होय ॥

-कबीर

ईक्षिति शिवइतयनियेड्डु रेंडक्षरमुले

परिढ़िविल्ल नरयमु वेमा ॥ **-वेमना**

कबीर और वेमना सत्य का आदर करते हैं–**'सत्यं ज्ञानं अनंतं ब्रह्म।'** सत्य समान तप् नहीं और झूठ समान पाप नहीं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर, षडरिपुओं को त्याग कर शील, क्षमा, धैर्य, नम्रता आदि गुणों को स्वीकार करना श्रेय है–

काम, क्रोध, त्रिष्णा तजै, ताहि मिलै भगवान। **-कबीर**

काम क्रोधमुलनु कलिगियुंडु बरुलु

इष्ट दैव गुरुनि एरुगलेरु। **-वेमना**

क्षमा गुण की महत्ता दोनों ने स्वीकार किया। वेमना के अनुसार हन्तव्य शत्रु भी यदि हमारे हाथ लग जाय तो भी उसकी हानि कदापि न करें। यथासम्भव उसकी सहायता ही करें। कबीर भी इसी भावना को व्यक्त करते है। सत्य के समान और झूठ के समान पाप नहीं।

जो तोको काँटा बुवै, ताहि बोइ तू फूल।

तोहि फूल को फूल है, वाको है तिरसूल ॥

× × ×

साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।

जाके हिरदै साँच है, ता हिरदै गुरु आप ॥ **- कबीर**

12. उपसंहार :-

कबीर निर्गुण राम के उपासक थे तो वेमना निर्गुण शिव के । गुरु तथा नाम-महिमा दोनों ने माना है। कबीर की साधना ज्ञानमय होते हुए भी वेदना रंजित प्रेम की परी पर चलती है। भावात्मक रहस्यवाद कबीर की वाणी में पल्लवित होता है। वेमना का पंथ ज्ञानमार्ग था। उनकी वाणी विचारात्मक भी। दोनों हठयोगी थे। दोनों का जीवन आडम्बर रहित था। दोनों ने निर्धनता को सामाजिक असंतुलन माना। दोनों ने दान-पुण्य की व्याख्या की। वेमना का कोई परिवार रहा नहीं लगता। कबीर पत्नी तथा संतान सहित जीवन बिताते थे। रोटी के बारे में उनका कथन है-

साई इतना दीजिए, जा में कुटुम्ब समाय।

मैं भी भूखा न रहूँ, साधु न भूखा जाय ॥

कबीर और वेमना के कविता के लिए कविता नहीं की थी। वे जो वाणी कहते गये वह उत्तम कविता की धारा में प्रवाहित हुई। दोनों का काव्य मानव जीवन का स्वच्छ दर्पण है। उनके काव्य में मानवता की विविधताओं पर चर्चा हुई। दोनों ने कविता, योग, भक्ति, ज्ञान, समाज-सुधार आदि विविध विषयों पर वाणी चलाई। दोनों 'अनहदनाद' सुन चुके थे। कबीर की वाणी से साखी, पद तथा रमैनी निकले थे। वेमना के छन्द 'आटवेलदी' थे। दोनों कवियों ने नीति तथा उपदेश सम्बन्धी वाणी चलाई जिससे सामाजिक हित हो।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

पाठ - 7

गोस्वामी तुलसीदास तथा तेलुगु के कवित्रय की तुलना

प्र.7 गोस्वामी तुलसीदास तथा तेलुगु के कवित्रय की तुलना कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

जिस प्रकार उत्तर भारत के घर-घर में प्राय: गोस्वामी तुलसीदास स्मरणीय हैं, उसी प्रकार आन्ध्रप्रदेश के कवित्रय नन्नया, तिक्कना और एर्रना विख्यात हैं। तुलसी की भाँति वे भी नानापुराण निगमागम के विद्वान तथा ब्रह्मनिष्ठ थे। गोस्वामी तुलसीदास के समय उत्तरभारत में सर्वत्र निर्गुण एवं अलरव के स्वर अद्घोष हो रहे थे। शिव-केशव के बीच तथा कर्म और ज्ञान के बीच संघर्ष चल रहा था। तुलसी ने निर्गुण के स्थान पर सगुण की श्रेष्ठता, शैव-वैष्णव में समन्वय तथा कर्म और ज्ञान की अपेक्षा भक्ति का प्रचार कर समाज का उद्धार किया। ग्यारहवीं सदी से लेकर तेरहवीं सदी तक दक्षिण भारत में बौद्ध धर्म और जैन-धर्म प्रबल माने जाते थे। फलत: ब्राह्मण-धर्म का नाम शेष नहीं रह गया था। हरि (विष्णु) और हर (शिव) संप्रदायों के बीच संघर्ष चल रहा था। कवित्रय ने नास्तिक बौद्ध तथा जैन धर्मों के विरोध में ब्राह्मण धर्म की पुन:-प्रतिष्ठा में योग दिया और कर्म की महत्ता का प्रतिपादन कर हरि और हर में समन्वय की स्थापना की। तुलसी के रामचरितमानस का प्रणयन 'स्वान्त: सुखाय' था तो कवित्रय का प्रणयन समस्त पुराण, इतिहास और धर्मशास्त्र से पूर्ण महाभारत की रचना जगत के हित के लिए ही थी।

2. सर्वतोमुखी प्रतिभा :-

तुलसीदास ने और कवि कवित्रय ने मानव जीवन की सारी दिशाओं का चित्रण किया है। राम के जीवन-चित्रण के साथ-साथ तुलसी ने अन्य पात्रों का भी सम्यक चित्रण किया है। राम स्वयं नायक, पुत्र, भाई, पति, भक्तवत्सल, योद्धा और शील-शक्ति-सौन्दर्य से समन्वित हैं। कवित्रय ने भी महाभारत में ययाति से लेकर भीष्म, कृष्ण, द्रोण, पाँचों पाण्डव, कौरव, धृतराष्ट्र, शकुनि का सही चित्रण किया है। भारत की रचना का उद्देश्य धर्मसंस्थापनार्थाय था।

रामचरितमानस और महाभारत में भारतीय संस्कृति का पुनरुत्थान के साथ धार्मिक, सामाजिक तथा आर्थिक सुख-शांति की स्थापना हुई है। लोक-संग्रह की भावना के साथ सत्यं शिवं और सुन्दरम की स्थापना हुई है। पितृधर्म, मातृधर्म, पुत्रधर्म, भगिनीधर्म, मित्रधर्म, राजधर्म आदि का उल्लेख किया गया है। चातुर्वर्णों में ब्राह्मणों को महत्ता मानी जाती थी। पश्चात् क्षत्रिय की गणना होती थी।

मंगल मूल विप्र परितोषु

× × ×

हम छत्री मृगया वन करही। तुम्ह से खल मृग खोजत फिरहिं॥

रिपु बलवंत देखि न डरहीं। एक बार काल हु सन लरही ॥

- तुलसी; रामचरित मानस

3. आश्रमधर्म :-

तुलसी और कवित्रय ने आश्रमधर्मों का विपुल विवरण दिया है। ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और सन्यास। विद्याध्ययन, गुरु का आज्ञापालन ब्रह्मचर्य आदि के समर्थन में तुलसी का कथन है-

सोचिअ बटु निजव्रत परिह रई।

जो नहि गुरु आयसु अनुसरई ॥

महाभारत के अनुसार गाँव को त्याग कर कानन में जीवन बिताते हुए अध्ययन, जप-होम तत्पर होते हुए जितेन्द्रिय का जीवन धन्य है। समस्त जगत के शरण्य होकर तथा अमृत होकर किसी पर आधारित न होनेवाले यति का जीवन धन्य है।

4. पारिवारिक धर्म :-

तुलसी और कवित्रय ने पिता, माता, पुत्र, पति, पत्नी, भाई, गुरु, शिष्य, सन्त आदि के गुण तथा धर्मों के बारे में बताया। तुलसी ने माता का स्थान पिता से भी बढ़कर माना है। कवित्रय के अनुसार भी माता का स्थान पिता से महत्त्वपूर्ण है और माता पिता की आज्ञा का उल्लंघन करनेवाला पैतृक संपत्ति का अधिकारी नहीं बन सकता।

तुलसी ने पतिव्रत तथा पत्नीव्रत दोनों की प्रधानता बताई है। पर-नारी सर्वथा परिहार्य है। अनुज-वधू, बहिन तथा पुत्र-वधू पुत्री-तुल्य मानी गयी हैं। वाली को समझाते हुए राम कहते हैं-

अनुजवधू भगिनी सुत-नारी। सुनु सठ कन्या समाये चारी ॥

-तुलसीदास

रामचरित मानस और महाभारत में भातृ-धर्म की विस्तारपूर्वक व्याख्या की गयी है। तुलसी ने अग्रज को स्वामी और पिता कहा है और छोटे भाई को सेवक तथा पुत्र। कैकई का कथन है-

जेठ स्वामि, सेवक लघु भाई

वनगमन के समय सुमित्रा लक्ष्मण को समझाती है।**''अग्रज पितृतुल्य है और भावजमातृतुल्य''**

तात तुम्हारि मातु वैदेही। पिता रामु सब भाँति सनेही॥

महाभारत के अनुसार छोटे भाइयों के प्रति भक्ति तथा श्रद्धाभाव हो।

5. सामाजिक धर्म :-

गोस्वामी तुलसीदास और कवित्रय दोनों ने गुरु की महत्ता प्रकट की है। गुरु की शिक्षा तथा दीक्षा से शिष्य प्रतिभावन होता है। तुलसी गुरु के नखों के स्मरण से दिव्यदृष्टि होने की बात बताते हैं-

श्री गुरु नख मनि गन जोती। सुमरित दिव्य दृष्टि हिय होती॥

- रामचरितमानस

गुरुकार्य निरतुलगु सत्पुरुषुल कगुटरुदे अधिक पुण्य फलंबुल्॥

- महाभारत

दुर्जनों का त्याग तथा सज्जनों की मैत्री तुलसी और कवित्रय चाहते हैं। बार-बार सौगन्ध खाना, अंजलि बाँधकर खडा होना, चाटुकारिता करना, मीठी-मीठी बातें बोलना, मिथ्या-विनय प्रदर्शित करना आदि दुर्जन लक्षण हैं। दूसरों की विश्वसनीयता प्राप्त करना सज्जन लक्षण हैं। कोई भी हमारी बुराई करें, उसेहम किसी के प्रति न करना महान धर्म है-

योरुलेवियु योनरिंचिन
नरवर यप्रियमु तन मनंबुनकगु दा
नोरुलकु नवि सेय कुनिकि
परायणामु धर्मपथंबुल केल्लन्॥ **- महाभारत, तिक्कना**

तुलसी के अनुसार विषय-विरक्त, निर्मल-चरित्र, गुण-समन्वित, सरल, दयालु, क्षमाशील, मधुरभाषी आदि उत्तम गुणों से विलसित व्यक्ति सन्त तथा सज्जन हैं। वह स्वयं कष्ट भोग कर दूसरों के दोषों को छिपाता है। इसी लिए वह वन्दनीय तथा यशश्वी है। साधु-चरित्र की तुलना कपास से करते हुए तुलसी कहते हैं-

साधु चरित सुभ सरिस कपासू। निरस बिसद गुनमय फल जासू॥
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा। बन्दनीय जेहि जग जस पावा ॥

- रामचरित मानस

तुलसी और बताते हैं कि 'परहित' के समान कोई अन्य धर्म नहीं है और 'परपीडा' के समान अधमाई नहीं।

परहित सरिस धर्म नहिं भाई। परपीडा सम नहिं अधमाई॥

महाभारत में भी मन, वचन तथा कर्मयुक्त दूसरों का हित करना, अतिथियों को संतुष्ट करना, आश्रितों की रक्षा करना सामाजिक कर्म बताया गया है।

6. वैदिक, पौराणिक तथा धार्मिक समन्वय :-

तुलसी काव्य रामचरित मानस राम के चरित्र पर आधारित है। राम स्वयं परमात्मा है और सारा जग सीता-राममय है। लोक की रक्षा के लिए परमात्मा के विविध अवतार हुए हैं। महाभारत में भी अवतारवाद का समर्थन हुआ है।

एक अनीह अरूप अनामा। अज सच्चिदानन्द परधामा॥

व्यापक विश्वरूप परमात्मा। तेहि धरि देह चरित कृत नाना ॥

× × × × × ×

सीय राममय सब जग जानी। करउ प्रनाम जोरि जुग पानी।

-रामचरित मानस

परित्राणाय साधूनां विनाशायच दुष्कृताम्।

धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे-युगे॥

-व्यास कृत महाभारत

रामचरित मानस एवं महाभारत में वेद-शास्त्र के प्रति अनन्त गौरव और वेद-विरोधी पन्थों (मार्गों) की निन्दा की गई है। राम स्वयं वेदपुरुष, शील-शक्ति तथा सुन्दर समन्वित है तो भीष्म के वचनों में कृष्ण स्वयं भगवान हैं- 'कृष्णस्तु भगवान ऋषिः' युधिष्ठर के वचनों में

आदिजुडैन ब्रह्मयुदयंबुन कास्पदमैनवाडु, वे

दादि समस्तवाङ्मयमुलंदु प्रशंसितु डैनवाडु, लो

कादि त्रिलोक पूज्यु डु ....

- कवित्रय, नन्नया

कवित्रय महाभारत आन्ध्र साहित्य का मूल माना जाता है। वेद, स्मृति, पुराण आदि का विवरण महाभारत में दिया गया है-

वेदमुलकु अखिल स्मृति

वादमुलकु, बहु पुराण वर्गंबुलकुन्

महाभारत धर्मतत्त्वज्ञों के लिए धर्मशास्त्र है, अध्यात्मों के लिए दर्शनशास्त्र है, नीतिज्ञों के लिए नीतिशास्त्र है, कविगण के लिए काव्य है, लाक्षिणिकों के लिए लक्षणग्रन्थ है, ऐतिहासिकों के लिए इतिहास है और पौराणिकों के लिए पुराण हैं-

धर्मतत्त्वज्ञुलु धर्मशास्त्रंबनि, यध्यात्मविदुलु वेदान्तमनियु

नीतिविचक्षणुल् नीतिशास्त्रंबनि, कवि वृषभुलु महाकाव्यमनियु

लाक्षणिकुलु सर्वलक्ष्य संग्रह मनि, ऐतिहासिकुलितिहासमनियु

त्वरम पौराणिकुल् बहुपुराण समुच्चयंबिन महि गोनियाडुचुण्ड।

-कवित्रय महाभारत-नन्नया

तुलसी तथा कवित्रय के अनुसार धर्म ही सर्वस्व है और धर्म की सदा विजय होती है। हम ही अर्थ, काम एवं मोक्ष को प्रदान करता है। संसार, साधु-संगति, क्रोध, दया, अहिंसा, आशा, लोभ, सत्य, मोह, परोपकार, शरणागत-वत्सलता, सुख-दुःख, उपदेश आदि का विवेचन रामचरित मानस तथा महाभारत में हुआ है। संसार मिथ्या, झूठा, सारहीन, माया-रूप, मोह जनक होने के कारण मानव को सदा सजग रहना है और जहाँ तक हो सके धर्मबद्ध होकर सत्कार्य करें-

देखत ही कमनीय, कछु नाहिन पुनि किये विचारा। - तुलसीदास

दूसरों की दृष्टि में विश्वसनीय बनने का प्रयत्न करना सज्जन लक्षण है। कोई भी हमारी बुराई करें, उसे हम किसी के प्रति न करना सर्वधर्मो से परा है-

येरुलेवियु योनरिंचिन

यप्रियमु तन मनंबुनकगु दा

नोरुलकु नवि सेय कुनिकि

परायणमु सर्वधर्ममुल केल्लन्॥

तुलसी और कवित्रय असत्य तथा आचरण हीन उपदेश का खण्डन करते हैं।

पर उपदेश कुशल बहुतेरे। जो आचरहि ते नर न घनेरे।

7. उपसंहार :-

तुलसी एवं कवित्रय ने विविध विषयों के साथ राजनीति तथा आर्थिक व्यवस्था की चर्चा भी की हैं। राजा के कर्त्तव्य, राजधर्म, सेवकधर्म आदि पर विचार हुआ है।

तुलसी का रामचरितमानस और कवित्रय का महाभारत प्रबन्ध काव्य के अन्तर्गत ही आते हैं। तुलसीदास ने दोहा-चौपाई शैली अपनाई है। कवित्रय की गद्य-पद्य चम्पू शैली है। तुलसी की भाषा परिमार्जित अवधी है। कवित्रय की भाषा सरल तथा संसकृतनिष्ठ तेलुगु है। हिन्दी साहित्य क्षेत्र में तुलसी का जो आदरणीय स्थान है वही तेलुगु साहित्याकाश में कवित्रय का है। रामचरितमानस नाना पुराण निगमागम सम्मत है तो महाभारत सर्व वेद तथा उपनिषदों का भण्डार है। तुलसी का सम्बन्ध आर्यभाषा परिवार से है और कवित्रय का द्रविड परिवार से, तुलसी कलियुग के वाल्मीकी मानेजाते हैं। हरिऔध की उक्ति अक्षरत: चरितार्थ हुई है-

कविता करके तुलसी न लसे।

लसी कविता पा तुलसी की कला॥

यन्न भारते तन्त भारते के अनुसार तेलुगु में एक कहावत प्रचलित हैं-

विंटे भारतमे विनालि, तिण्टे गारेलु तिनालि।

'महत्वात् भारवत्वाद्य महाभारतमुच्यते'

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

❋ ❋ ❋

पाठ - 8

गीतकार तुलसीदास तथा संगीतकार त्यागराज

प्र.8 गीतकार तुलसीदास तथा संगीतकार त्यागराज की तुलनात्मक समीक्षा कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

भावना, प्रवृत्ति एवं विचारधारा की दृष्टि से गीतकार तुलसीदास की तुलना तेलुगु के अमर संगीतकार त्यागराज से की जा सकती है। उपासना-विधि, सांप्रदायिकता, भक्ति-तत्परता आदि बातों की दृष्टि से दोनों में पर्याप्त समानता है। तुलसी की विनय पत्रिका में कवि का अन्तः सौन्दर्य साकार हो उठा। त्यागराज भक्ति एवं संगीत की दो धाराओं का संगम स्थल है। उन दोनों के बीच कविता अन्तर्वाहिनी के रूप में प्रवाहित हुई है।

तुलसी और त्यागराज दोनों मर्यादा पुरुषोत्तम राम के भक्त हैं जो शील, शक्ति और सौन्दर्य से समन्वित हैं। दोनों की निष्काम भक्ति हैं। दोनों की कृतियों में भक्ति की तल्लीनता परिपूर्ण है। आत्म-समर्पण कृतियों में आत्म-निवेदन, करुणापूर्ण आर्ति, संसार की निस्सारता और आत्माभिव्यक्ति विद्यमान हैं। दोनों में दैन्य, आत्म-समर्पण, आशा, उत्साह, आत्म-ग्लानि, आत्म-निवेदन आदि लक्षण हैं। दोनों की रचनाओं में 6 प्रकार के पद मिलते हैं।

(क) स्तुति विषयक पद

(ख) स्थान परिचयात्मक पद

(ग) आतमोपदेशात्मक पद

(घ) संसार की निस्सारता के पद

(ङ) आत्म ग्लानि-परक पद

(च) आत्माभिव्यक्ति के पद

(क) स्तुति विषयक पद :-

तुलसीदास और त्यागराज ने विविध देवी-देवताओं की स्तुति की है। तुलसी ने गणेश, वाणी, सूर्य, शिव, देवी, गंगा, यमुना, काशी, चित्रकूट, हनुमान, भरत, सीता आदि की विस्तारपूर्वक स्तुति की है। तुलसी ने किसी पद में अपने स्वामी राम की प्रभुता, किसी में सौन्दर्य, किसी में औदार्य व शील

आदि प्रदर्शित किया है। तुलसी ने इन स्तोत्रों में उन देवों का गुणगान करते हुए उनसे रंगशाइ, शिव, कंचि वरदराजु, कंचि कामाक्षी, वेंकटेश्वर स्वामी, पार्थसारथि, गरुड, हनुमान, तुलसी, नारद, समुद्र, कावेरी, यमुना आदि की स्तुति की है।

(ख) स्थान विषयक पद :-

तुलसी ने काशी और चित्रकूट के स्थलों का विशद वर्णन किया है। चित्रकूट में 'कामदगिरि' को तुलसी चिन्तामणि और कल्पवृक्ष के समान माना है। त्यागराज ने तिरुपति, कंचि, श्रीरंगम आदि तीर्थस्थानों की महात्ता का गुण-गान किया है।

(ग) आत्मोपदेशात्मक पद :-

तुलसी और त्यागराज के अनेक पद उपदेशातमक हैं। दोनों ने अपने भ्रमित मन को रामचन्द्र के चरण-कमलों में समर्पित किया है। वे अपने मूढ़ मन को राम का भजन करने के लिए प्रेरित करते हैं -

सदा राम जपु, राम जपु, राम जपु, राम जपु

राम जपु मूढ़ मन बारंबारा

× × ×

राम जपु, राम जपु, राम जपु बावरे।

त्यागराज ने भक्ति रूपी धन के सामने सांसारिक धन नगण्य माना। उनका कथन है, ''हजारों रूपयों के मालिक होने पर भी मुट्ठी भर अन्न ही खा सकते हैं, हजार वस्त्र होने पर भी एक ही पहन सकते हैं, सर्वत्र अपना राज्य होने पर भी तीन हाथ की जमीन पर ही सो सकते हैं। नदी में पानी छलकते रहने पर भी बर्तन भर ही ले सकते हैं। धन से सुख कहाँ मिलता है? परमात्मा में ध्यान लगायें।''

'अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम' के अनुसार त्यागराज का कथन है-

'एवरुरा निनु विना गति माकु' तुलसी और त्यगराजु की रचनाओं में संसार की क्षणभंगुरता की चर्चा हुई है।

(ङ) आत्मग्लानि विषयक पद :-

तुलसी और त्यागराजु अपनी लघुता तथा परमात्मा राम की महानता व्यक्त करते हैं। राम की महानता अनुभव के साथ-साथ अपनी दीनता, अनुताप और आत्म-निवेदन दोनों के पदों में व्यक्त होते

हैं। स्थान-स्थान पर राम की शक्ति के आगे वे अपनी अशक्तता प्रकट करते हैं।

तू दयालु, दीन हौं, तू दानि हौं भिखारी

हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पापपुंज हारी

नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मोसो

ब्रह्म तू, हौं जीव, तू ठाकुर हौं चेरो

तात, मात, गुरु, सखा तू सब विधि हितु मेरो।

-तुलसीदास

तब दासो हं तव दासोहं तव दासोहं दाशरथे,

सरसिज नेत्र परम पवित्र सुरपति मित्र दाशरथे।

-त्यागराज

तुलसी और त्यागराज स्वयं को सर्वथा निम्न व पतित मानते हैं और राम को सर्वोच्च और सर्वोत्तम। दोनों के लिए राम का अनुग्रह ही महान भाग्य है-

राम सो बडो है कौन, मो सो कौन छोटो?

साम से खरो हैं कौन, मो सो कौन खोटो? **- तुलसीदास**

नी पुलके पलुकुरा, नीदु कुलुके कुलुकुरा

नी चित्तमु, ना भाग्यमु

× × × ×

निधि चाल सुखमा? रामुनि सन्निधि सुखमा?

-त्यागराज

(च) आत्माभिव्यक्ति विषयक पद :-

काव्य कवि की मनोवृत्तियों का संचित भंडार तथा उसके समस्त जीवन का प्रतिबिम्ब है। इसी कारण काव्य कवि का दर्पण कहलाता है। काव्यरूपी दर्पण में कवि की आकृति स्पष्ट दिखाई देती है। तुलसी और त्यागराज के विषय में यह विषय पूर्णतया चरितार्थ हुआ है। दोनों की रचनाओं में भक्ति,

ज्ञान, वैराग्य सम्बन्धी आत्माभिव्यक्ति प्रकट होती है। दोनों ने पौराणिक आख्यानों के द्वारा अभिव्यक्ति की पुष्टि की है। रामचरित को असाधारण एवं अनन्य रूप में प्रस्तुत करने में तुलसी एवं त्यागराज दक्ष थे। दोनों में लोक-संग्रह का भाव पूर्णरूपेण परिलक्षित है। दोनों ने लोकरक्षक राम को मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में दर्शाया है। दोनों ने मानव-जीवन की विभिन्न दशाओं और वृत्तियों पर यथेष्ठ प्रकाश डाला है। दोनों ने समान रूप से सत्यं, शिवं और सुन्दरम को ग्रहण किया, अपनाया और अपने-अपने काव्य में निभाया है। दोनों की गीत-रचना स्वान्तः सुखाय के लिए होने पर भी उनका स्वन्तः सुख बहुजन सुखाय और लोक हिताय के लिए भी था। अयोध्यापति राम को सुमधुर गीतों में प्रिय, सखा, गुरु, राजा आदि अनेक रूपों में वर्णन करके उन्हीं के ध्यान में वे प्रफुल्लित हो उठते थे।

साम्प्रदायिकता की दृष्टि से तुलसी एवं त्यागराज दोनों अत्यधिक उदार और विनयशील थे। शिव-वैष्णव ज्ञान-भक्ति आदि के भेद-भाव में उन्होंने समन्वय लाने का प्रयत्न किया। दोनों की भक्ति सार्वकालिक, सार्वभौतिक, विश्वजनीन और शाश्वत है। रस की दूष्टि से रससिद्ध कवीश्वर थे। तुलसी की विनय पत्रिका शान्तरस से परिपूर्ण है। त्यागराज की कृतियों में सब रसों का समाहार हुआ है जिनमें श्रृंगार, करुणा एवं शान्त प्रधान है।

संगीत का वास्तविक अर्थ ब्रह्मनाद हैं। हृदय की धडकन और नाडी के स्पन्दन में भी एक लययुक्त नाद हैं। यही नाद संगीत का प्राणबीज है। वाद्यनाद अन्तर्नाद से एकाकार होने पर ऊपर उठने लगता है। तभी सर्प-सा विषधर जन्तु, हिरण-सा चंचल जीव भी संगीत-नाद-लहरी से वशीभूत हो, अपनी प्रकृति को भूल, मंत्रमुग्ध हो, बन्धन को स्वीकार करता है।

पशुः शिशुमृगो वापि नादेन परितुप्यति

अतो नादस्य महात्म्यं व्याख्यातुं केन शक्यते।

तुलसी और त्यागराज के सभी पद गेय हैं। दोनों की रचनाओं में भावों की तीव्रता है। हृदय की कसक हैं एवं भावों की विह्लता है। त्यागराज ने नादोपासना ही सबसे श्रेष्ठ उपासना मान ली है।

2. उपसंहार :

भावाभिव्यक्ति के लिए तुलसी और त्यागराज ने लोक-भाषा का ही प्रयोग किया है और उसे कलात्मक रूप प्रदान किया है। विनयपत्रिका की भाषा व्यवस्थित ब्रज है और त्यागराज की भाषा सुबोध तेलुगु है। भाषा के प्रयोग में दोनों ही सफल हुए हैं। विनयपत्रिका में तुलसी की भाषा यत्र-तत्र संस्कृत गर्भित हुई है। त्यागराज की भाषा सरल, सरस एवं सुबोध है। तुलसी और त्यागराज दोनों संगीत तथा काव्य के क्षेत्र में सुन्दर समन्वय स्थापित कर अमर हुए।

जयन्ति ते सुकृतिनो रस सिद्धाः कवीश्वराः।
नास्ति एषां यशः काये जरा मरणजं भयम्॥

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

पाठ - 9

सूर और पोतना

प्र.9 सूरदास और पोतना की काव्य-प्रतिभा की समीक्षा कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

सूरदास और पोतना दोनों भक्तकवि थे। सूरदास कृष्ण के अनन्य भक्त थे तो पोतना राम के। सूरदास का जन्म स्थान दिल्ली के पास 'सीही' माना जाता है। वे सारस्वत ब्राह्मण परिवार में पैदा हुए। वे जन्मांध माने जाते हैं। पारिवारिक वात्सल्य प्राप्त न होने के कारण वे गृह त्याग कर मथुरा पहुँचे और वहाँ कृष्ण की भक्ति में तल्लीन हो गीत रचना करने लगे। गऊघाट पर उनको वल्लभाचार्य ने दीक्षा दी। गऊघाट और रूनकता पर विचरते-विचरते वे आगरा में बस गये। कवि पोतना का जन्म आन्ध्रप्रदेश के बम्मेरा नामक गाँव में नियोगी ब्राह्मण परिवार में हुआ था। पिता का नाम केसन मंत्री था और माता लक्कमांबा थी। सूरदास ने भागवत के दशमस्कन्ध के आधार पर ब्रजभाषा में सूरसागर, साहित्यलहरी तथा सूरसारावली काव्यों की रचना की। पोतना ने वीरभद्र विजयम्, नारायण शतकम्, भोगिनीदण्डकम् और भागवतम् की रचना की।

पलिकेडिदि भागवतमट
पलिकिंचेडिवाड्डु रामभद्रुंडट ने
पलिकिन भवहर मगुनट
पलिकेद वेरोंडु गाथ पलकग नेला।

2. बाल-लीलाएँ :-

सूरदास अष्टछाप के प्रमुख कवि थे। वे पुष्टि सम्प्रदाय के अनुयायी थे। उनकी भक्ति सख्य और माधुर्यभाव की थी। परमात्मा की भक्ति के सामने वे सारे सांसारिक पदार्थों को नगण्य मानते थे। उनका मन कृष्ण चन्द्र के प्रति अनुरक्ति था। वे किसी अन्य दैव की उपासना नहीं करते।

मेरो मन अनत कहाँ सुख पावै।
जैसे उडि जहाज को पंछी फिरि जहाज पै आवै॥

पोतना की दास्य-भक्ति थी। उन्होंने भागवत में मर्यादा भक्ति तथा पुष्टि भक्ति का प्रतिपादन किया। वे शिव-केशओं का अभेदत्व मानवे थे। वे विष्णु के चरण-कमलों की सुधा का आस्वादन करनेवाले थे। उनका मन किसी अन्य विषय पर अनुरक्त न हो पाता।

अंबुजोदर दिव्य पादारविन्द

चिन्तानामृत पान विशेषमत्त

चित्तमेरीति नितरंबु जेर नेर्चु

विनुत गुणशील माटलु वेयुनेल।

सूरदास कृत सूरसागर गीतकाव्य है तो पोतना कृत भागवत काव्य है। किन्तु इस ग्रन्थ की मान्यता पुराण के रूप में अधिक हैं। सूरसागर कृष्ण की लीला सम्बन्धी पदों का संग्रह है। बाल-लीला तथा भ्रमरगीत के प्रसंग मनोहर तथा अतुलित हैं। सूरदास वात्सल्य सम्राट हैं। वात्सल्य वर्णन में सूर के समान कोई अन्य कवि विश्व साहित्य में नहीं है।

मैया कबहु बढ़ेगी यह चोटी?

काचो दूध पयावति देत न माखन रोटी!

× × ×

मैया मोहि दाऊ बहुत खिजायो।

मोसो कहत कौन है माता को है तात?

चुटकी दे-दे ग्वाल सिखावत

गोरे नन्द यशोदा गोरी तू कत श्यामल गात!

पोतना ने भागवत में गजेन्द्र मोक्ष, रुक्मिणी-कल्याण और प्रह्लाद चरित्र विशेष उल्लेखनीय हैं। उन्होंने भागवत को महाकाव्य के लक्षणों से सभी स्कन्धों को समान लेकर उसे आवश्यकता से अधिक व्यापक और विस्तृत बना दिया। बाल-लीलाओं में बच्चों की मन:स्थिति का वर्णन स्वाभाविक, सुन्दर तथा मनोवैज्ञानिक विधान में हुआ है।

जसोदा हरि पालने झुलावै।

हलरावै दुलराइ मल्हाइ जोइ सोई कछु गावै।

× × × ×

कबहुँ हरि पलक मूँढ लेत है कबहु अधर फरकावै।

सोबत जानि मौन ह्वै रहि-रहि करि-करि सैन बतावै।

इहि अन्तर अकुलाइ उठे हरि जसुमति मधुरै गावै॥

बालक कृष्ण माँ यशोदा के स्तनों से दूध पीने का वर्णन पोतना ने स्वाभाविक रूप में किया है-

बिगिचन्नुगाव केलबीडिंचि गब लिंचि

ग्रुक्क गुक्ककु गुटुकु मनुचु

बालक कृष्ण दूध, दही, मक्खन आदि की चोरी करने लगता है। वह स्वयं खाकर ग्वाल बालकों को भी खिलाता है। गोपियों का यशोदा से शिकायत करने का विधान का वर्णन मनोहर रूप से पोतना ने किया है-

ओ यम्म नी कुमारुडु

म इण्ड्लनु पालु पेरुगु मननीडम्मा

पोयेद मेक्कडिकैननु

मा यन्नल सुरलुलान मंजुल वाणी॥

सूरदास की गोपियाँ शिकायत करती हैं। उनकी निष्ठुरता पर यशोदा पहले पुत्र कृष्ण को पीटकर अखल से बाँधती है। फिर यशोदा गोपियों को खरी-खटी सुनाती है-

कहा करौ बहुत खिरयानी

सहि न सकी, रिसदी रिस भरि गयी बहुतै ढ़ीठ कन्हाई।

सूर ने इस तरह बाल-सुलभ एवं जननी सुलभ चेष्टाओं का वर्णन करते हैं। कर्ण-छेदन आदि संस्कारों का वर्णन भी हुआ है। प्रात:काल ही कृष्ण को जगाने के प्रयत्न, कलेवा वर्णन, खेल की योजनाएँ आदि सूर की अपनी कल्पनाएँ हैं। कृष्ण के बाल-वर्णन के हरेक पद में नये भाव एवं नई व्यंजना है।

3. रास-लीला :-

बाल-क्रीडाओं के बाद रास-लीला, जल-क्रीडा आदि का वर्णन है। सूर और पोतना दोनों ने इनका स्वाभाविक वर्णन किया है। इसके अन्तर्गत सूर्योदय, चन्द्रोदय, ऋतुवर्णन, वर्षा-वर्णन आदि हैं।

सूर ने कृष्ण को सखा के रूप में माना है। सूर ने कृष्ण और राधा के बडे होने का तथा कृष्ण के साथ चीर-हरण-लीला, रास-लीला आदि खेलने का वर्णन किया है। रास, वसत, हिण्डौल, फाग,

होली आदि सभी प्रसंगों में राधा और कृष्ण भाग लेते हैं। गोपियाँ तो राधा का ही विकीर्ण रूप हैं।

सूर और पोतना ने संयोग तथा वियोग श्रृंगार का वर्णन किया है। वियोग वर्णन में उनकी प्रतिभा अधिक मुखर उठी है। सूर की गोपियाँ उद्धव से कहती हैं-

आँखिया हरि दरसन की भूखी

× × ×

निसिदिन बरसत नैन हमारे

सदा रहति पावस ऋतु हम ये जब ते श्याम सिधारे।

पोतना की गोपियों को कृष्ण का मधुर वेणु-नाद सुनाई देता है, तो वे कृष्ण का अन्वेषण करती हुई मल्लिका पौधों से पूछ-ताछ करती हैं-

नल्लनिवाडु पद्मनयनंबुलवाडु, कृपारसंबु पै

चल्लेडुवाडु मौलि परिसर्पित पिंछमुवाडु नव्वु रा

जिल्लेडु मोमुवाडोकडु चेल्वल मान धनंबु दोचेनो

मल्लियलार! मी पोल माटुन लेडुगढ़म्म चेप्परे ?

सूर की गोपियाँ उद्धव के ज्ञान-मार्ग को ठुकराती हुई कहती हैं-

ऊधो मन नाहीं दस बीस

एक हुतो गयो स्याम संग को आराधै ईस।

इसी प्रकार पोतना की गोपियाँ अन्याय देशपूर्वक कहती हैं-

भ्रमर! दुर्जनमित्र! मुट्टकुमु मा पादाब्जमुल्, नागर

प्रमदालीकुच कुंकुमांकित लसत् प्राणेश दाम प्रसू

नमरंदा रुणिताननुं डबगुटब् नाधुंडु मन्निंचुगा

क ममुन्नेपुचु बौर कांतल शशापांरबुलन् नित्यमुन्

(हे भ्रमर! हमारे चरणों का स्पर्श मत कर। श्रीकृष्ण हमें सताते हुए नगर की स्त्रियों के भवनों में रहते हैं। उनके गले में जो पुष्पमाला है, उसमें नगर की स्त्रियों के कुचों का कुंकुम अंकित हैं। उसमें तूने मकरंद का पान किया है। इसलिए हमें मत छूना।)

इस प्रकार सूरदास और पोतना ने बाल-लीला एवं भ्रमरगीत प्रसंगों को विस्तार पूर्वक अत्यंत मोहक शैली में लिखा। पोतना के भागवत में अवतार-लीलाओं का वर्णन हुआ है।

4. रस योजना :-

वात्सल्य एवं श्रृंगार रस वर्णन में सूरदास बेजोड हैं। वे तो वात्सल्य रस के सम्राट हैं। पोतना वात्सल्य रस पोषण मनोहर है। उनका श्रृंगार भक्ति समन्वित है। भक्ति-रस से परिपूर्ण होने के कारण भागवत का हर पद्य रस पुष्ट है। पोतना रससिद्ध कवि हैं।

5. भाषा-शैली :-

सूर की भाषा परिमार्जित ब्रज है। ब्रजभाषा के भंडार को सम्पन्न करने के लिए उन्होंने गुजराती, पंजाबी, राजस्थानी, अवधी, अरबी, फारसी आदि भाषाओं के शब्दों को भी अपनाया। पोतना की भाषा सरस, सरल तथा सुबोध तेलुगु है। सुललित तथा सुरम्य शब्दों की छटा से उनकी कविता सुशोभित है। यत्र-तत्र संस्कृत शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। सूर की गेय-पद-शैली है। पोतना की शैली मन्दार पुष्णें के मकरंद की भाँति सुस्वाद्य है। पोतना की शैली 'दक्षापाक' कहलाती है।

सूर तथा पोतना के भाषा-सौन्दर्य में अलंकारों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। सूर की कविता में उपमाओं की बाढ़-सी आ गई है और रूपाकों की वर्षा हुई है। अर्थालंकार-उपमा, उत्प्रेक्षा, अनन्वय, सन्देह, दृष्टान्त,सांगरूपक अलंकारों का समाहार हुआ है। पोतना की कविता शब्दालंकारों का भंडार है। यमक, अनुप्रास आदि शब्दालंकार उनकी कविता में सर्वत्र बाहुल्य है।

6. छन्द-योजना :-

छन्दयोजना की दृष्टी से सूर ने दोहा, चौपाई, रोला, छप्पय, सवैया, घनाक्षरी, हरिगीतिका आदि छन्दों का प्रयोग किया है। पोतना ने उत्पलमाल, चंपकमाला, कंद, सीस आट-वेलदि आदि छन्दों का प्रयोग किया है। अनुप्रास युक्त होने के कारण पोतना के छन्द पाठकों की जिह्वा पर आपने आप नाचते हैं। इसी कारण पोतना का कम-से-कम एक छन्द भी न जाननेवाला व्यक्ति आन्ध्र में दिखाई नहीं देता।

7. संगीत की प्रधानता :-

पोतना तथा सूर की कविता में संगीत की प्रधानता है। सूर तो गायक ही थे। उनकी अपनी गीत-शैली बन गई। वे अपने ललित तथा मधुर काव्य से पद गाया करते थे। पोतना ने ताल एवं लय के अनुकूल अनुप्रास अलंकार से अलंकृत शैली में कविता की रचना की।

सूर एक महान संगीतज्ञ होने तथा भारतीय गांधर्व विद्या के मर्मज्ञ होने के कारण अपने पदों का रसमय बना कर समयानुकूल राग-रागिनियों में सम्बद्ध करके कविता कन्या का सौन्दर्य-वर्धन किया।

8. धन तथा राज-सम्मान से विमुख :-

सूर और पोतना दोनों प्रतिष्ठा, पद धन और पश से सौ कोसों दूर रहा करते थे। सम्राट अक्बर ने एक बार सूर को अपने दरबार में एक दूत के द्वारा बुला भेजा तो उन्होंने कहला भेजा–

''सन्तन को सीकरी कहा?''

पोतना की किविता रूपी कन्या सुललित पदों से युक्त, प्रसन्न, गंभीर है, रसोद्दीपक है, धारावाहिनी है, भक्ति तथा–श्रृंगार तरंगों में सुस्नाता है और शब्दालंकारों में समलंकृत है। उन्होंने राज–सम्मान, राज वैभव आदि को विरस्कृत किया था। एक बार श्रीनाथ कवि ने पोतना को भागवत ग्रन्थ राजार्पित करके धन कमाने के लिए कहा तो पोतना ने डट कर कहा–

बाल रसाल साल नव पल्लव काव्य कन्यकन्
गूलल किच्चि अप्पडुपु कूडु भुजिं चुट कण्टे सत्कवुल्
हालिकुलैन नेमि गहनान्तर सीमल कन्दमूल कौ
द्दालिकुलैन नेमि! निज दार सुतोदर पोषणारी मै।

कवि श्रीनाथ ने पोतना को अपना भागवत राजा को कृति देने की सलाह दी थी। उसी रात देवी सरस्वती दीन–मुख से रोती हुई पोतना के समक्ष आयी। पोतना ने देवी को सान्त्वना देते हुए कहा–

काटुक कंटि नीरु चनु-कटु पयिंबड नेल नेड्चेदो
कैटभ दैत्य मर्दनुनि गादिलि कोडल यो मदंब यो
हाटक गर्भु राणि! निनु नाकटिकिं गोनिपोयि यलतक
गट्टि किरात कीचकुल कम्म त्रिशुद्धिग नम्मु भारती।

9. उपसंहार :-

इस प्रकार सूरदास और पोतना भावों में, जीवन–विधान में, काव्य रचना में पर्याप्त समानता है। सूरदास ने कृष्ण–भक्ति तल्लीनता से सारे उत्तर भारत को प्रभावित किया तो पोतना ने अपने भागवत ग्रन्थ से सारे आन्ध्र–प्रान्त को पुनीत किया। उनका भागवत पुराण के रूप में अधिक विख्यात है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

पाठ - 10

मीराबाई और अन्नमाचार्य

प्र.10 मीराबाई और अन्नमाचार्य के साहित्यों का अनुशीलन कीजिए ।

1. प्रस्तावना :-

भावना, साधना और प्रवृत्ति की दृष्टि से हिन्दी की 'मीराबाई' तेलुगु साहित्य के अन्नमाचार्य के बहुत ही निकट है। दोनों में कई बातों में समानता है। दोनों का भक्तिमार्ग है। दोनों सगुण भक्त हैं। दोनों के इष्टदेव श्रीकृष्ण या श्रीनिवास हैं। दोनों ने माधुर्य-भाव की भक्ति को अपनाया है।

2. लौकिक भाधाएँ :-

मीराबाई और अन्नमाचार्य दोनों के जीवन-विधान में पर्याप्त साम्य हैं। मीरा शैशव से ही कृष्ण की मूर्ति को अपने पास रखकर पति के रूप में पूजती थी। उनका विवाह मेवाड के प्रसिद्ध राणा संगा के ज्येष्ठ पुत्र भोजराज से हुआ। किन्तु दुर्भाग्य से कुछ समय पश्चात भोजराज का स्वर्गवास हो गया। मीरा ऐहिक जीवन को भुलाकर गिरिधर गोपाल के प्रेमरस में डूब गयी। साधु-सन्तों के साथ बैठ कर कृष्ण भक्ति की परवशता में पैरों में घुंघरू बाँध कर नाचने लगीं। फलत: मीरा को मरवाने के लिए विष का प्याला भेजा गया। साँप की पिटारी भेजी गयी। किन्तु कृष्ण की कृपा से मीरा को कोई हानि नहीं पहुँची।

पग घुँघरू बाँध मीरा नाची रे

लोग कहैं मीरा हो गई बावरी, सास कहैं कुलनासी रे

जहर का प्याला राणा जी भेज्या पीवत मीरा दाँसी रे

मीरा के परिवार तंग करने लगा तो मीरा ने गोस्वामी तुलसीदास के पास एक पत्र भेजा। समाधान के रूप में तुलसीदास ने लिखा-

जाके प्रिय न राम-वैदेही

तजिए ताहि कोटि वैरी सम जद्यपि परम सनेही।

बस, मीरा मेवाड छोडकर बृन्दावन होती हुई द्वारका धाम गई। फिर बृन्दावन में ही कृष्णभक्ति तल्लीनता में मीराबाई जीवन बिताने लगी।

अन्नमाचार्य का जन्म आन्ध्रप्रदेश कडप जिले के ताल्लपाक नामक गाँव में हुआ था। उनके मन में शैशव से ही भगवान वेंकटेश्वर के प्रति असीम भक्ति-भावना रही। इसीसे उनके हृदय से जो उद्गार निकला, वही दिव्य काव्य बना। जो गीत निकला, वही संगीत बना। उन्होंने भगवान वेंकटेश्वर पर विविध संकीर्तनों की रचना की। शैशव में उन्हें बन्धु-बान्धवों ने एवं माता-पिता ने बहुत तंत्र किया था।

तत्कालीन सम्राट नरसिंह राय ने एक दिन दरबार में अन्नमाचार्य को बुलाकर अपने बारे में कीर्तन रचने का आदेश दिया था। किन्तु अन्नमाचार्य ने ललित राग में उनके आदेश का तिरस्कार किया-

नरहरि कीर्तन नानिन जिह्व

ओरुल नुतिंपग नोपदु जिह्व

मुरहरु पदमुल म्रोक्किन सिरमु

परुल वंदनकु परगदु सिरमु

इस पर राजा कुपित होकर उन्हें श्रृंखलाबद्ध कराया। किन्तु एक गीत गाते ही भगवान की महिमा से वे मुक्त हुए। अन्त में राजा पश्चात्ताप कर उन्हीं की शरण में आये।

3. मधुर भक्ति :-

मीरबाई और अन्नमाचार्य दोनों पहले भक्त और बाद में कवि हैं। मीरा की मधुर-भक्ति में भाव-तन्मयता पल्लवित होती है। उन्होंने स्वकीय के रूप में अपने प्रियतम गिरिधर नागर के बिछोह में कसक और नडपन की सैकडों सजीव तस्वीरें उतारी हैं। उनके स्त्री सहज हृदय की भावनाओं की स्वाभाविक उन्मत्तावस्था का अंकन देखिए -

सोवत ही पलकों में मैं तो, पलक लागी पल में पिऊआये।

मैं जु उठी प्रभु आदर देणा कूँ, जागपरी पिव ढूँढ़ न पाये।

और सखी पिव सूत गमाये, मैं जुसखी पिव जागी गमाये।

अन्नमाचार्य के कीर्तनों में इस प्रकार की भक्ति-भावना के अनेक पद मिलते हैं। उनमें तडप, कसक, तन्मयता, छटपटाहट आदि दीखती हैं। निम्न लिखित पद गाने से कहा जाता है, उनको भगवान वेंकटेश्वर के दर्शन हुए।

कोलुतुरु मिमु वैष्णवुलु कूरिमितो बिष्ण्डुनि

पलुकुदुरु मिमु वेदान्तुलु परब्रह्म मनुचु

तलतुरु मिमु शैवुलु तगिन भक्तुलुनु शिवुडनुचु

अलरि पोगडुदुरु कापालिकुलु आदि भैरवु उनुचु

दरिसेनमुलु मिमु नाना विथुलनु तपनुल कोलदुल भरितुरु

श्रीवेंकटपति नीवैते चेकोनि वुन्न दैवमनि

ईवलने नीशरणंनि येद निदिये अमरतत्त्वमु नाकु॥

मीरा और अन्नमाचार्य दोनों ने भगवान को प्रियतम के रूप में ग्रहण करके माधुर्य भाव की रस-धारा में अपनी को पल्लवित किया है। कृष्ण के चरण-रज की महिमा का वर्णन करते हुए मीरा कहती है-

चरण रज महिमा मैं जानी

ये ही चरण से गंगा प्रकटी भागीरथ कुलतारी

ये ही चरण से विप्र सुदामा हरिकंचन धाम दीनी

ये ही चरण से अहिल्या उधारी गौतम की पटरानी

मीरा के प्रभु गिरिधर नागर ये ही चरण कमल मैं लपटाना॥

प्रेम-योगिनी मीराबाई अपने मन को गिरिधर नागर के चरणों का आश्रय पाने का प्रबोध करती हुई शरणागत की महत्ता समझाती हैं-

मन रे परसि हरि के चरण

सुभग सीतल कँवल, कोमल त्रिविध ज्वाला हरण

जिण चरण ध्रुव अटल कीन्हें, राखी अपनी शरण

जिण चरण ब्रह्माण्ड प्रभु परिसलीणो तरी गौतम धरण

जिण चरण काली नाग नाथ्यो, गोपी लीला करण

जिण चरण गोवरधन धरयो, इन्द्र को गर्व हरण

दासि मीरा लाल गिरिधर, अगम तारण तरण॥

अन्नमाचार्य ने भी 'ब्रह्म कडिगिन पादमु' नामक कीर्तन में भगवान श्रीनिवास के चरण-कमलों की विलक्षण महिमा गायी है। मीरा और अन्नमाचार्य दोनों ने नाम की महिमा गायी है। मीरा अपने मन को राम-नाम रूपी रस पीने का उपदेश देती है-

राम-नाम रस पीजै, मनुआ राम नाम रस पीजै

मीरा के विचार में राम-नाम अनमोल रत्न है और गुरु की कृपा से ही वह मिल सकता है। वह जन्म-जन्म की पूँजी है। भवसागर पार करने के लिए राम-नाम रूपी नाव आवश्यक है। अन्नमाचार्य राम-नाम तथा नारायण की महत्ता प्रकट करते है। मीरा कृष्णभक्ति की तल्लीनता में संसार की भी परवाह नहीं करती-

मेरो तो गिरिधर गोपाल, दूसरो न कोई

जाके सिर मोर मुकुट, मेरो पति सोई

भाई छोड्या, बन्धु छोड्या सगा सोई

साधु संग बैठ-बैठ लोक लाज खोई।

मीरा कृष्ण के प्रति एकनिष्ठ प्रेम, आत्म समर्पण की भावना, विरहानुभूति, मिलन का उल्लास प्रकट करती हैं-

मीरा व्याकुल विरहिणी रे, पिया दरसन दीवो भाई

मीरा के प्रभु कबरे मिलोगे

अन्नमाचार्य के कीर्तनों में ठीक इसी प्रकार की भावना मिलती है। वे सदा परमात्मा के सान्निध्य में रह कर उन्हीं की आराधना में तत्पर रहना चाहते हैं।

इन्दिरा रमणु तेच्चि इय्यरो माकिट्टुवले

पोंदि ईतनि पूजिंच प्रोद्दाय निपुडु

4. रस-योजना :-

रस योजना की दृष्टि से मीरा और अन्नमाचार्य दोनों की रचनाएँ श्रृंगार, भक्ति, मधुर एवं शान्त रसों से परिपूर्ण हैं। उनकी श्रृंगार भावना में संयोग और वियोग दोनों का सन्निवेश है। उसमें पवित्रता तथा अध्यात्मिकता है। मीरा कहती हैं-

रैन अन्धेरी विरह घेरी, तारा गिणत निसि जात

अन्नमाचार्य के पदों में भी श्रृंगार के दोनों पक्षों का संयत रूप से चित्रण हुआ है-

जो अच्युतानन्द जो-जो मुकुंदा

रार परमानन्द राम गोविन्दा

मीरा और अन्नमाचार्य दोनों ने गीत-काव्य को अपनाया है। दोनों की संपूर्ण काव्य-साधना गीत-काव्यात्मक प्रकृति की है। दोनों के पदों में हृदय की भूख है, विरह का आनन्द भाव है, मिलन की व्याकुलता है।

मीरा की भाषा ब्रज मिश्रित राजस्थानी है। उनके पदों में सरसता एवं माधुर्य है। तेलुगु और कर्नाटक गीतकारों में अन्नमाचार्य का स्थान सर्व प्रथम है। अतः वे पद-कविता पितामह तथा संकीर्तनाचार्य कहलाते हैं। उनके कीर्तनों में राग और ताल का बहुत ध्यान रखा गया है। उनके पदों में अनेक राग-रागिनियों का सुन्दर समावेश हुआ है। उनकी भाषा शिष्ट जन-सम्मत तेलुगु है।

चक्कनि तल्लिकि चांगुभला

तन चक्कनि मोविकि चांगुभला

पलुकु तेनेल तल्लि पव्वलिंचेनु

कलिकि तन विभुनि गलसिनदि पव्वलिंचेनु॥

5. उपसंहार :-

मीराबाई एवं अन्नमाचार्य का गीत-काव्य परम्परा में विशिष्ट स्थान है। मीरा के पदों में वैयक्तिक अनुभूति की जो तीव्रता है, वह अन्नमाचार्य के गीतों में नहीं है। मीरा कृष्ण को अपना पति मानती थीं। अतः उनके पदों में अधिक भाव-विह्वलता, भावावेश और हृदय के निश्चल एवं सरल उद्गार हैं। अन्नमाचार्य के गीतों में जो साहित्यिक सौन्दर्य है, कला की रागिनी है, भाषा की जो सरसता है, वह मीरा के पदों में नहीं है। पर मीरा के गीत नारी सहज हृदय विह्वलता एवं सच्ची अनुभूति को लेकर चले हैं।

इस प्रकार जहाँ अन्नमाचार्य में साहित्यिक सौन्दर्य एवं कला की रंगिनी है, वहाँ मीरा के पदों में अनुभूमियों की तीव्रता एवं भाव-विह्वलता है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

❖ ❖ ❖

(b) Name of the Book : विश्व हिन्दी रचना

कविता अमेरिका से

		Page No.
1.	अमेरिका, तुझे क्या कहूँ	63
2.	न्यूयार्क	66
3.	माँ	68
4.	माथे की शिकन	70
5.	लेखिनी कर उनका जयगान	71
6.	अमर तरु के फूल	73
7.	क्या मैं परदेशी हूँ	74
8.	परदेशी	75
9.	सरनामी देवी	76
	विश्व हिन्दी रचना	
1.	प्रवासी की माँ	77
2.	फिर कभी सही	85
3.	अनजाना सफर	91
4.	इन्तजार	95
5.	एक लावारिस की मृत्यु	100
6.	लक्ष्मी का देश	109
	विश्व हिन्दी सम्मेलन	
1.	राष्ट्रभाषा से विश्वभाषा-कुछ स्मृति रेखाएँ	115
2.	विश्व सम्मेलन का अवदान	120
3.	विश्वभाषा की ओर अग्रसर	128
4.	सूचना प्रौद्योगिकी और हिन्दी	136
5.	सम्मेलन की अन्तर्धाश	143
6.	भूमण्डलीकरण और राजभाषा	151

विश्व हिन्दी रचना

1. अमेरिका, तुझे क्या कहूँ (कविता अमेरिका से)

-अंजना संकीर

सप्रसंग व्याख्या :-

मेरा सब कुछ छीन लिया
उडने को मुक्त किया
लेकिन पर काट लिए धीरे-धीरे।

1. प्रसंग :-

यह छन्द डॉ.अंजना संकीर रचित 'अमेरिका, तुझे क्या कहूँ!' नामक कविता शीर्षक से दिया गया है।

2. सन्दर्भ :-

अमेरिका जाकर व्यथित जीवन बितानेवाले विविध भारतियों का जीवन यहाँ चित्रित हुआ है।

3. व्याख्या :-

अमेरिका जाकर व्यक्ति धन तो कमाता है और ग्रीन-कार्ड प्राप्त कर लेता है। लेकिन वहाँ वह एक मजदूर है। न समय पर साफ-सुथरा खाना मिलता है और न समय पर सो भी सकता है। हीन तथा दीन दशा में वह बहुत सी रातें तकिये पर मुख रखे रोता बिताता है। उसे अपनी झोंपडी, नीम का पेड, अपनी गली और अपने गाँव की याद आती रहती है। उसकी सारी अरमाने बुझ जाती हैं। उसकी सारी इच्छाओं पर पानी फेरा जाता है। वह पंखहीन पक्षी बन कर वहीं अमेरिका में चार दाने चुगने (चार-पैसे कमाने) लगता है।

4. विशेषताएँ :-

अमेरिका में भारतीयों का जीवन पंखहीन पक्षी के समान है।

प्र. 'अमेरिका, तुझे क्या कहूँ!' कविता की व्याख्या कीजिए।

'अमेरिका, तुझे क्या कहूँ!' डॉ०अंजना संकीर रचित अमेरिका की कविता है। 'आत्मकथात्मक' शैली में उत्तम पुरुष में कविता ढ़लती है ।

कविता में धन कमाने के लिए अमेरिका जानेवालों का व्यथित जीवन चित्रित हुआ है। समय पर उनको न खाना प्राप्त होता है, न वे समय पर सो सकते हैं और अन्त में पंखहीन पक्षी की तरह व्यक्तित्व खोकर दिन काटते रहते हैं।

कवियित्री कहती है :-

हे अमेरिका मैं तुझे क्या कहूँ! तू ने मुझे धन और आश्रय दिया है और मुझे स्वीकारा है, किन्तु मजदूर बना कर और अपना नाम देकर तू ने मेरा स्वाभिमान और सम्मान छीन कर और अपनी छाप लगाकर अपनी जमीन पर रखा। तेरी जगमगाहट ने मेरे सारे सपनों को बिखेर दिया है और नष्ट कर दिया है। आज मुझे 'ग्रीनकार्ड' प्राप्त हुआ है और 'सोशल सिक्योरिटी' नम्बर हूँ। इतना मिलने पर भी तेरी धरती पर रहने के लिए मुझे अनेक सुविधाएँ प्राप्त हुई हैं। किन्तु मानसिक रूप से मैं तेरा गुलाम हूँ। इन सुख सुविधाओं को पाने के लिए मेरी का बिलियत, मेरा कॅरियर, मेरा नाम और मेरा सम्मान सब दाँव पर लग चुके हैं। आज मैं मृतप्राय बन चुका हूँ। जो शक्ति, इच्छा, तमन्ना आदि घर से लेकर निकला था, वे सब बुझ चुकी है। आज मैं शंकाशील, कठोर और निर्मोही हो गया हूँ। अब मुझे किसी से प्यार नहीं है। अर्थ के लिए मैं कुछ भी कर सकता हूँ। सातों दिन काम करता हूँ। फ्रिज का ठण्डा खाता हूँ। मुश्किल से कुछ घण्टे सोता हूँ।

यहाँ रक्षण व्यवस्था ठीक नहीं। मैं असुरक्षित हूँ और अपने से ही डरता हूँ। अमेरिका आकर मैं धोबी का कुत्ता बन गया हूँ। भारत से आते समय कुछ सामान ढ़ोकर यहाँ ले आता हूँ और यहाँ से भारत जाते समय कुछ सामान ढ़ोकर अपने देश ले जाता हूँ। वहाँ मेरी राह देखनेवाले हमारे लोग हैं और यहाँ मजबूरी की रातें बिताता हूँ।

मैं कभी सोचता हूँ कि मैं अपना देश लौट जाऊँ। फिर सोचता हूँ कि यहाँ का मेरा दु:खमय जीवन कौन जानता है। इसीलिए यहीं ठहर जाने को सोचता हूँ। मैंने कब क्या खाया और कब सोचा? मुझे समय पर खाना नहीं और समय पर नींद नहीं। तकिये पर मुँह रखकर कभीं-कभी रात भर रोता रहता हूँ। अपने गाँव की, गली की और मिट्टी की याद आती रहती है मुझे। गर्मियों में मैं नीम के नीचे झोंपडी में सोता था। ये सब मुझे बार-बार याद आते रहते हैं।

हे अमेरिका तुझे क्या कहूँ! तू ने मेरा सब कुछ छीन लिया है। तूने मेरे पर काट लिए हैं। मैं अब उड नहीं सकता हूँ। मेरा स्वातंत्र्य और मेरी स्वेच्छा तूने छीन लिये हैं। आज मैं पंखहीन पक्षी हूँ। दीन हो गया और तेरा गुलाम बन गया हूँ।

3. उपसंहार :-

इस प्रकार डॉ०अंजना संकीर ध‌न के लालच में अमेरिका जाकर, वहाँ ग्रीनकार्ड प्राप्त करके व्यक्तित्वहीन जीवन बितानेवाले भारतीयों का चित्रण करती हैं।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

2. न्यूयार्क

- डॉ० विजय कुमार मेहता

सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

यह कोलाहल यह आकुलता,
बेकल साँयें उर की धडकन,
किस नई दिशा को जाना है?
क्यों गतिमान तेरा कन-कन।

क्षण-क्षण पल-पल तू जाग रहा,
क्या खोज रहा निधियाँ अमोल?
नव युग के नूतन नगर बोल!

1. प्रसंग :-

यह छन्द डॉ० विजय कुमार मेहता कृत 'न्यूयार्क' नामक कविता से दिया गया है।

2. सन्दर्भ :-

न्यूयार्क नगर के कोलाहल के बारे में यह कविता रची गयी है।

3. व्याख्या :-

कवि कहते हैं - हे न्यूयार्क नगर! आकाश की तरफ देखते-देखते गगन की ओर ही मत चल। अपनी दृष्टि कुछ इस भूतल पर भी फेर। नगर में सदा कोलाहल, व्याकुलता, बेकल साँसें, उर की धडकन आदि चल रहे हैं। तुझे किस नयी दिशा की ओर जाना है? तेरा हर कण गतिमान क्यों हुआ है? हे नवयुग के नूतन नगर! क्या अमोल निधियाँ खोज रहा है?

4. विशेषताएँ :-

न्यूयार्क नगर के भौविकवाद पर चुनौती दी गयी है।

प्र. 'न्यूयार्क नगर' कविता की व्याख्या कीजिए ।

डॉ० विजयकुमार मेहता न्यूयार्क कविता में न्यूयार्क नगर का कोलाहल प्रतिबिम्बित करते हैं।

कवि कहते हैं– हे न्यूयार्क नगर! स्वर्ण से पुत्ते हुए रजत महल आकाश में कुसुमित ये शीश महल नव इन्द्रधनु की किरणों को पहने हुए लगते हैं । ये महल छविमय है और इनके भाल विमल तथा मधुमय है।

हे न्यूयार्क! तू नवयुग के आनन्दमय नव कुमार है, तू नव संस्कृति के अमोल प्रतिनिधि है और नव नभ को तू भू पर लाना चाहता है। स्वर्ण झरोखों से तू तारों को लुभाना चाहता है। शून्य आकाश में प्रकाश फैलाकर तू आज क्या ढूँढ़ रहा है? हे नवयुग के नूतन नगर बोल!

हे न्यूयार्क! ज्ञान, कला, विज्ञान सब अगनित कुसुमित मधुमय शतदल, मधुपट पर नव प्रसून खिलते हैं। सुरभित, छविपूर्ण, मधुमय और शीतल वातावरण है तेरा। तेरा सौन्दर्य इन्द्रजालपूर्ण है। नव युग के नूतन नगर मेरे रहस्य खोल दे।

स्वतन्त्रता की मधुमय देवी ललाट पर मधु चंदन रचती है। मनुज के स्वाधीन स्पन्दन प्रतिदिन तिरोहित होते हैं। नव भौतिकता अंबर छू रही है। पल-पल समृद्धि कर रही है। नया न्याय तुलादण्ड पर तोला जा रहा है। मानवता की मधुमय लडियाँ, नैतिकता की आधारशिला, संस्कृति की चिर स्वर्णिम कडियाँ मुझ पर अधिकार चला रही हैं। हे महातपी! न्यूयार्क नगरी! अपना भेद खोल।

न्यूयार्क की रजत वीथियों पर कितने ही मणि और स्वर्ण के लुटेरे हैं। मधुमय आशाओं के दीप जलाकर बहुत से लोग तेरे आँगन में आते हैं। यहाँ अनेक कुबेर (धनी) बडे-बडे महल बनाकर बसते हैं। तेरे बडे-बडे महलों की छाँव तले मानवता कराहती रहती है। बहुत से हीन-दीन और वस्त्रहन जीव नैराश्य जीवन बिताने लगे हैं। अपने उन्माद को कुछ रोक। हे महाबली! ऊपर आकाश की ओर मत देख! अपनी दृष्टि को नीचे की ओर जमीन पर फेर।

यह कोलाहल और यह व्याकुलता को देख! इन बेकसों की साँसों को और उर की धडकन को देख! तेरा कन-कन गतिमान हो गया है। किस नयी दिशा की ओर जाना है?

हे न्यूयार्क नगर! तू क्षण-क्षण और पल-पल जाग रहा है। कौन-सी अमोल निधियाँ खोज रहा है। हठसन तट के हे महानगर! तू दो क्षण के लिए अपनी पलकें बन्द कर। जिससे तुम्हारा उन्माद घट सकता है। अपनी तीव्र गति को कुछ मंद कर। हे कोलाहल का महानगर! नूतन भविष्य को नाप-तोलते रह। हे नवयुग के नूतन नगर बोल।

कवि क्षण-क्षण भौतिकता के नाम पर बढते हुए न्यूयार्क के कोलाहलपूर्ण तथा विलासमय वातावरण का खण्डन करते हैं।

Lesson Writer

डॉ. शेख़ मौला अली

❋ ❋ ❋

3. माँ

- डॉ० कृष्ण कुमार

सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

लैम्प जला मैं सो जाता हूँ,
चाय मुझे तो प्राप्त सही है
मगर स्वाद,
वह कहाँ अनोखा,
यहाँ शक्कर गन्नेवाली है,
वहाँ प्रेमरुपी शक्कर थी।

1. **प्रसंग :-**

यह छन्द डॉ० कृष्णकुमार रचित माँ कविता से दिया गया है।

2. **सन्दर्भ :-**

कवि कृष्णकुमार इस छन्द में माँ की ममता का रूपांकन करते हैं।

3. **व्याख्या :-**

कवि कहते हैं कि ''मैं यहाँ अमेरिका में लैम्प जला कर सो जाता हूँ। यहाँ भी मुझे चाय सही मिलती है। मगर तेरे हाथ की चाय का स्वाद यहाँ की चाय में नहीं है। उस चाय में अनोखी ममता तथा अतुलित अनुराग थे। यहाँ भी गन्ने के शक्कर की चाय पीलेता हूँ। भौतिक रूप से तो यहाँ की चाय ठीक है। लेकिन प्रेम, अनुराग, ममता और प्यार भरे तेरे हाथ की चाय यहाँ नहीं मिलती है। उस चाय के सामने यहाँ की चाय कुछ नहीं।''

4. **विशेषताएँ :-**

चाय के द्वारा कवि डॉ० कृष्णकुमार माँ की ममता इस कविता में व्यक्त करते हैं।

प्र. 'माँ' कविता का सारांश लिखें।

माँ की समानता करनेवाले व्यक्ति इस संसार में और कोई नहीं है। माँ की ममता की समानता करनेवाली कोई वस्तु इस संसार में नहीं। कवि डॉ० कृष्णकुमार अमेरिका जाकर वहीं बसते हैं। वे अपनी माँ की ममता का मूर्तमान रूप अक्षर शिल्प में व्यक्त करते हैं।

माँ! तू रातों में मुझे तरह-तरह की कहानियाँ सुनाकर सुलाती थी। मैं लैम्प जलाकर पढ़ते-पढ़ते सो जाता था। चन्द्रमा धीरे-धीरे ऊपर चढ़ते आता था। जगत के सारे प्राणी भी निद्रामग्न होते थे। तब तू निस्तब्ध रात्रि में चुपके से मेरे कमरे में आती थी। लैम्प बुझाकर चुम्बन लेकर मेरे पास लेट जाती थी।

माँ! मैं तेरा स्पर्श प्राप्त कर सुखद निद्रा पाता था। प्रातःकाल जगते ही तू मुझे चाय पिलाती थी। पर, मैं आज बहुत दूरी पर हूँ। तेरा प्रेम मुझे दुर्लभ हैं। तेरे दर्शन के लिए मेरे नेत्र और मेरा हृदय व्याकुल तथा व्यथित हो रहा है।

यहाँ मैं लैम्प जला कर सो जाता हूँ। यहाँ भी मुझे चाय प्राप्त होती है। लेकिन स्वाद में बडा अन्तर है। तेरे हाथ की चाय अनोखी थी। उस में ममता, प्यार आदर तथा वात्सल्य भरे हुए थे। यहाँ तो गन्ने के शक्कर की चाय मिलती है। किन्तु प्रेम तथा वात्सल्य भरी माँ की ममतापूर्ण चाय नहीं मिलती।

इस प्रकार डॉ० कृष्णकुमार अपनी कविता 'माँ' में माँ का दुलार, प्यार, आदर, वात्सल्य आदि की चर्चा करते हैं। माँ का लैम्प निकालना कहानियाँ बता कर पुत्र को सुलाना, पुचकारना, चुम्बन लेना, चाय पिलाना आदि का विवरण हुआ है। अन्तिम पंक्तियों में कवि का हृदय स्पन्दन मनोहर रूप से पल्लवित होता है-

वह कहाँ अनोखा।

यहाँ शक्कर गन्नेवाली है,

वहाँ प्रेमरूप शक्कर थी।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

4. माथे की शिकन

- श्र पद्मेश गुप्त

श्री पद्मेश गुप्त रचित कविता 'माथे की शिकन' में माँ की ममता और पुत्र का देर से आना व्यक्त हुए हैं।

पुत्र किसी काम पर बाहर जाता है। वह समय पर घर नहीं लौटता। माँ प्रति रात पुत्र की राह देखती रहती है। प्रतीक्षा करते-करते उसके माथे पर सिकुडन आ जाती है। पुत्र की लगन बाहर जाकर पैसा कमाने पर होती है। किन्तु माँ उसके लौटने की राह देखती रहती है। प्रति रात माँ पुत्र की प्रतीक्षा में समय बिताती जाती है और द्वार पर ही पडी निद्रामग्न होती है। लेकिन किसी भी दिन पुत्र समय पर घर वापस नहीं आता।

माँ प्रतीक्षा करती ही रहती है। प्रतीक्षा करना वह नहीं छोडती। किन्तु समय से पहले पुत्र घर लौट नहीं आता।

यह दोनों का नित्य कर्म होता हैं।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

5. लेखिनी कर उनका जय गान

- श्री पद्मेश गुप्त

सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

जो विदेश में रह कर भी
करें मातृभूमि का ध्यान।
तन मन धन से स्वदेश,
भर डालें रत्नों की शान।
लेखनी कर उनका जय गान ॥

1. प्रसंग :-

यह छन्द श्री पद्मेश गुप्त कृत 'लेखिनी कर उनका जयगान' कविता से दिया गया है।

2. सन्दर्भ :-

कवि इस छन्द में विदेश में रह कर भी मातृभूमि का ध्यान करनेवाले मातृभूमि की संतान की प्रशंसा करते हैं।

3. व्याख्या :-

कुछ भारतवासी विदेशों में रह कर भी मातृभूमि की याद करते हैं और मातृभूमि के ध्यान में रत रहते हैं। वे तन, मन और धन से स्वदेश को भर कर देश की रत्न भरी शान को बढ़ाते हैं। हे लिखिनी उनका जयगान कर!

4. विशेषताएँ :-

विलायत में रह कर भी मातृभूमि का ध्यान करना और तन-मन-धन से मातृभूमि की शान बढ़ाना देशभक्ति तथा मातृभूमि पर अनुरक्ति है। ऐसे लोगों की प्रशंसा में कवि कविता करने की सलाह देते हैं।

प्र. 'लेखिनी कर उनका जयगान' कविता का अनुशीलन कीजिए।

'लेखिनी कर उनका जयगान' कविता में कवि देशभक्तों की प्रशंसा करते हैं। वे कहते हैं-

जिन्होंने मातृभूमि के लिए अपने प्राणों का बलिदान किया, अपना सिर कटाकर मातृभूमि के सम्मान में महान दान दिया, जान हथेली पर लेकर जिन्होंने भ्रष्टाचार का विनाश किया, आधा पेट खाकर और अर्धनग्न शरीर से श्रम करके राष्ट्र का निर्माण किया- हे लेखिनी उनका सम्मान कर और उनका जयगान कर।

जो विदेशों में रह कर भी मातृभूमि का ध्यान करते हैं और तन-मन-धन से मातृभूमि की शान बढ़ाते हैं, हे लेखिनी! उनका जयगान कर! देश के लिए लडते जो आहत हुए थे और जिन्होंने रक्त बहाया और जीवन का त्याग करके माँ की गोदें सूनी की और पत्नी का सुहाग मिटा दिया, हे लेखिनी उनका जय गान कर। जो लोग देश के लिए सर्वस्व अर्पित करके न्योछावर हुए उनका जयगान कर। यह देश रक्त और बलिदान से महान हुआ है। उन सबका जयगान कर।

देश की स्वतन्त्रता के लिए और देश रक्षा के लिए असंख्य शहीदों ने आत्मार्पण किया था। उन को अमर होकर यश पाने की इच्छा कोई नहीं थी। उनको इतिहास कदापि भुला नहीं पायेगा। उनके नाम भले ही लिखे नहीं गये हों। हे लेखिनी! उनका जयगान कर।

कवि की भावना देशभक्तों का जयगान करने की प्रेरणा देती है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

❖ ❖ ❖

6. अमर-तरु के फूल (कविता-फीजी से)

- कमला प्रसाद मिश्र

प्र. 'अमर तरु के फूल' कविता की व्याख्या कीजिए।

'अमर तरु के फूल' कमला प्रसाद मिश्र कृत फिजी की कविता है। कवि उत्तम पुरुष में कविता चलाते हैं–

हम अमर-तरु के फूल हैं। ओ विश्व! हम तेरी गोद में युग-युगों से झूल रहे हैं। हवा के झोंकों के कारण एक फूल हिलता है तो एक फूल गिर जाता है और एक फूल खिलता है। हम सारे विश्व को सौरभ से भर देते हैं। फिर हम लुट भी जाते हैं।

कुछ फूल खिलते हैं और कुछ फूल मुरझाकर झड जाते हैं। किन्तु हम सदा विश्व को सुरभित बनाते रहते हैं। हम एक युग से जलधि का किनारा ढूँढ़ रहे हैं। हम अमर-तरु के फूल हैं।

आनन्द हो या बाधा हो; देश हो या परदेश हो हम सदा हृदय में सुरभि, सुषमा और शूल लेकर चलते हैं।

हम अमर-तरु के फूल हैं।

यहाँ अमर तरु भारतीय वृक्ष हैं। फूल भारतवासी हैं। भारतवासी सदा संसार में सुगन्ध (ज्ञान) फैलाते रहते हैं।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

7. क्या मैं परदेशी हूँ? (कविता-फीजी से)

- कमला प्रसाद मिश्र

प्र. 'क्या मैं परदेशी हूँ?' कविता की समीक्षा कीजिए।

कवि कमला प्रसाद मिश्र फिजीवासी हैं। परदेश में रहने से उनको भारतवासी 'परदेशी' मानते हैं। परदेश में जन्म लेने पर भी वह भारत की संतान होने से फिजीवासी उनको परदेशी मानते हैं। इस दुविधा में कवि की वाणी कहती है-

फिजी में धवल सिन्धु-तट पर बैठकर मैं अपना मानस बहलाता हूँ। मेरा जन्म तो फिजी में ही हुआ है। लेकिन भारत की संतान होने के कारण मैं यहाँ परदेशी कहलाता हूँ। यह गोरों की नीति है। तन-मन-धन से मेरा सम्बन्ध फीजी से ही है। किन्तु सब लोग मुझे भारतीय ही कहते हैं।

भारत के जीवन में और फीजी के जीवन में बडा अन्तर है। भारत बहुत दूरी पर होने के कारण वहाँ मैं जा नहीं पाता। हम ने यहाँ आकर फीजी को उपनिवेश बना लिया है। यहाँ के लोग हमें बाहर के ही मानते हैं। ऐसी नीति गरल है। ऐसी नीति में जीवन बिताना कठिन है। जो उन लोगों का यशगान करते हैं, वे उनसे खुश रहते हैं।

भारत वंशज यहाँ पग-पग पर केवल कंटक (आतंक) पाता है। जंगल को मंगल करने पर भी उसे दो क्षण चैन प्राप्त नहीं होता।

हम भारतवासियों में साहस है और हम भयभीत नहीं होंगे। हम सारी कठिनाइयों को सहलेंगे। लेकिन क्या हमें सदा 'परदेशी' ही रहना पडेगा? जंगल को मंगल करके भी हमें दो क्षण का भी चैन नहीं है।

हम में साहस है। जो भी हो, हम सहलेंगे। विविध कठिनाइयों को झेल कर हम जीवन में आगे बढ़ेंगे। हमें कोई डर नहीं है। हम भयभीत नहीं होंगे। किन्तु हमें यहा 'परदेशी' के रूप में ही जीवन बिताना पडता है। जग का रक्षक, परमात्मा कब इस कालचक्र को बदलेगा पता नहीं। हम कब 'फिजीवासी' कहलायेंगे, पता नहीं। हम को यहाँ फिजी के 'नागरिक' कब माना जायेगा, पता नहीं, परमात्मा, जगत का त्राता कब कालचक्र बदलेगा, पता नहीं ।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

८. परदेशी (कविता-मॉरीशस से)

- अभिमन्यु अनत

विदेशों में रहनेवाले भारतीयों के प्रति कवि एक प्रकार की चुनौती देते हुए कविता सुना रहे हैं

मैं तुम को मेरे देशवासी कैसे मानूँ ? तुम भारत में कब और कहाँ विचरे थे ? गन्ने के खेतों के बीच ओस की बूँदों से भीगी पगडंडी पर कब और कहाँ चले थे ? तुमने कभी भी एक बूँद पसीना देश के लिए बहाया ही नहीं। तुमने कभी मुद्रा की शाँकियों को अपने भतीर अनुभव किया है ? कभी नहीं। क्या तुम मुडिया पहाड के बोझ को अपने सिर पर लेकर चले थे, धूप में ! कैसे मान सकता हूँ कि तुम मेरे देशवासी हो ?

तुमने कभी गुलमोहर का कोई पौधा नहीं उडाया हैं। ज्वालामुखी के छाती के बीच, शामरैल की सतरंगी मिट्टी पर प्रचण्ड तूफान में इन्द्रधनुष नहीं देखा। स्कूल के ब्चों के बीच अभी तुम चौरंगा हरा कर आये हो, सिर्फ उसी लिए तुम को देशवासी मान लूँ ?

आजादी के नाच-गान पर तुम बूढ़े तो हो गये। किन्तु तुम मेरे देशवासी नहीं कहला सकते। तुम 'परदेशी' ही हो क्यों कि तुम में वहीं है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

❈ ❈ ❈

९. सरनामी देवी (कविता-सूरीनाम से)

- मार्तिन हरिदत्त लक्ष्मन

सूरीनाम के वासी मार्तिन हरिदत्त लक्ष्मन सरनामी देवी को सम्बोधित कर कहते हैं -

हे सरनामी देवी, तू मनोहर कली है। तू मनमोहक और आकर्षक है। सरनाम उपवन को तू अपनी मुस्कराहट से हराती है।

हे सरनामी देवी! तू फल की तरह है। तू पार्वती है। कमल की तरह तू कोमल तथा सुगंधित है। पतझर तुझे छू नहीं सकता। तू सतत हिरति होती है। कीचड तुझे दूषित कर नहीं सकती। तू श्रेष्ठ देवी है। सदा तेरी श्रेष्ठता हमारा स्पर्श कर, हमारी रक्षा करती रहती है।

हे सरनामी देवी, तू रमणीय सरनाम की दुलारी है। इस देश की तू सावित्री बन, ज्ञान प्रदायिनी बना। तू इस देश की रक्षिणी नील कमला है। मेरा दिल रसीली तान में तेश यश गाताहै। मुझे जीवित रख! हे सरनामी देवी तुझे प्रणाम! तेरी जय हो। यही तेरा मंगलमय और जय गान है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

(c) Name of the Book : पुस्तक : विश्व हिन्दी रचना

1. प्रवासी की माँ (कहानी-अमेरिका से)

- प्रोफेसर भूदेव शर्मा

सप्रसंग व्याख्या :-

1. **''कहते थे, बच्चों को अमेरिका में रहना है, हिन्दी घर पर बोलने से इन को अपने अमेरिकी मित्रों के साथ दिक्कत आयेगी।''**

''बहू ने विनीता से कहा, तुम्हारी दादी भी तो अंग्रेजी का एक शब्द प्रतिदिन सीख कर तुम से अंग्रेजी में बोलना आरम्भ कर सकती थी।''

1. **प्रसंग :-**

यह प्रसंग प्रोफेसर भूदेव शर्मा से रचित प्रवासी की माँ कहानी से लिया गया है।

2. **सन्दर्भ :-**

वेदव्रत गोरखपुर में आशीष की माँ से मिलने जाते हैं। आशीष की माँ के पास पति और बच्चों के फोटो देखकर वेदव्रत उस बुढ़िया को आशीष के पास अमेरिका जाने की सलाह देता है। तब आशीष की माँ वेदव्रत से उक्त कथन कहती है।

3. **व्याख्या :-** आशीष की माता अपने पति स्वर्गीय गंगाधर द्विवेदी के साथ अमेरिका गयी थी। आशीष के बच्चे - बेटी विनीता पाँच-छ: साल की थी और बेटा विनय तीन-चार साल का था। वे बच्चे तो हिन्दी में बिलकुल बोलते ही नहीं थे। आशीष के पिताजी तो उन से अंग्रेजी में वार्तालाप करते थे। आशीष के माता-पिता ने उन बच्चों को हिन्दी सिखाने का प्रयत्न किया तो वे विमुख हो गये थे। बच्चों के माता-पिता ने कहा, ''अमेरिका में तो रहना है। घर पर हिन्दी बोलने से उन को अमेरिकी मित्रों के साथ दिक्कत होगी।''

फिर एक बार आशीष के पिताजी ने विनता को समझाने का प्रयत्न किया कि प्रतिदिन एक हिन्दी शब्द सीखने से दादी के साथ आसानी से हिन्दी में बोल सकती हो। यह जान कर बहू ने कहा, ''तुम्हारी दादी भी तो अंग्रेजी का एक शब्द प्रतिदिन सीख कर तुम से अंग्रेजी में बोलना आरम्भ कर सकती थीं।''

4. **विशेषताएँ :-**

(क) यहाँ विलायत का वातावरण और वहाँ की सभ्यता तथा संस्कृति का परिचय प्राप्त होता है।

(ख) प्रवासी की माँ की हृदयवेदना व्यक्त होती है।

(ग) बहू नीता का सास-ससुर के प्रति कटु व्यवहार व्यक्त होता है।

2. **''पता नहीं हम लोगों ने कौन से गेसे कर्म किये थे, जो एक पुत्र मिला और वह भी एक दम विमुख। हम लोगों को इन के पास नहीं, भारत चलकर रहना चाहिए।''**

× × × ×

''मैं भी अधिक नहीं रुक पाई। एक दिन बीमार पड गयी तो स्वयं आशीष ने ही आकर कहा कि अमेरिका में इलाज करना बहुत महंगा है, और मुझे भारत जाने की सलाह दी।''

1. **प्रसंग :-**

2. **सन्दर्भ :-** 'प्रवासी की माँ' पाठ में आशीष की माँ वेदव्रत से ये वचन कहती है।

3. **व्याख्या :-** आशीष के माता-पिता अमेरिका में पुत्र तथा बहू के पास जाते हैं। वहाँ उनको प्रेम तथा आदर के बदले विमुखता का सामना करना पडता है। बेटे-बहू से और पोते-पोती से वे स्नेह व्यवहार कर न पाते क्यों कि वे लोग उनके प्रति कोई ममत्व प्रकट न करते। एक महीना बीतते ही आशीष के पिता कोई बहाना बनाकर भारत लौट आते हैं। यहाँ आशीष की माँ अपने पति के वचन दुहराती है। पति का कहना था कि हम लोगों ने तो कोई दुष्कार्य नहीं किया। जो भी हमने किया इन्ही की भलाई के लिए ही किया या। तब वे भारत लौट जाने का निर्णय लेते हैं।

कुछ दिन बाद आशीष की माँ बीमार पडती है तो स्वयं आशीष अमेरिका में इलाज करना महँगा बता कर भारत लौट जाने की सलाह देता है। फिर बीमारी की हालत में ही आशीष अपनी माँ को भारत वापस भेज देता है।

4. **विशेषताएँ :-**

आशीष की माँ अमेरिका में अपने कटु अनुभवों का विवरण देती है।

3. मैं कल ह्यूस्टन लौट कर आया हूँ। फोन की घंटी बजी तो मैं फोन को उठाते-उठाते रुक गया। पत्नी से कहा, ''देखो, आशीष का फोन हो, तो कहना, घर पर नहीं है।''

1. प्रसंग :-

2. सन्दर्भ :-

आशीष की माँ का दोहान्त हो जाता है तो लखनऊ से उनके भाई ने आकर अन्त्येष्टि संस्कार किया। आशीष अमेरिका से आया नहीं। कहानीकार भारत से ह्यूस्टन लौट आते हैं और पत्नी से उक्त वचन कहते हैं।

3. व्याख्या :-

आशीष की माता के देहान्त होता है। लखनऊ से भाई आकर अन्त्येष्टि करते हैं। आशीष आ नहीं पाया। कहानीकार भारत से ह्यूस्टन लौट आते हैं तो घर पर फोन की घण्टी बजती है। कहानीकार फोन उठाते-उठाते रुक जाते हैं। वे पत्नी को फोन उठाने के लिए बताते हैं और कहते हैं - ''अगर आशीष का फोन हो तो कहना, मैं घर पर नहीं हूँ।''

4. विशेषताएँ :-

(1) माता-पिता अपनी सन्तान का पालन-पोषण अनेक कष्ट सह कर करते हैं। लेकिन जब सन्तान माता-पिता की देख-भाल करने का समय आता है, वे लोग उसे बेकार बोझ समझते हैं और उन पर विमुख भी होते हैं।

(2) यहाँ आशीष माता-पिता के प्रति प्रेम, अनुराग, ममता, आदर आदि प्रकट करने के बदले विमुख ही अधिक हुआ। आखिर माता की अन्त्येष्टि संस्कार पर भी आ नहीं पहुँचा।

(3) इसी कारण कहानीकार, आशीष से फोन पर वार्तालाप करने के लिए विमुख होते हैं।

प्र.1. 'प्रवासी की माँ' कहानी का मूल्यांकन कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

'प्रवासी की माँ' प्रोफेसर भूदेव शर्म से लिखी गयी कहानी है। कहानीकार न्यू आर्लिन्स (लुहजियाना) के रहनेवाले हैं। आज कल आमदनी को ध्यान में रख कर विलायत जानेवाले विद्यावान भारतीयों के विरुद्ध यह कहानी एक ध्वनि तथा चुनौती है। पढ़ाई तथा नौकरी की तलाश में कुछ लोग

अमेरिका जाते हैं और इधर स्वदेश में माता-पिता उनके दर्शन, उनके प्रेम और उन से बात-चीत के लिए तडपते रहते है। कम से कम अन्त्येष्टि क्रिया के लिए भी वे आ नहीं पाते।

2. कथावस्तु :-

ब्रिजेश त्रिपाठी आशीष द्विवेदी का मित्र है। आशीष पी-एच०डी० करने के लिए गोरखपर से अमेरिका जाता है। पढ़ाई पूरी होने के बाद वह भारत लौट आता है। माता-पिता नीता के साथ उसका विवाह कर देते हैं। नीता तुरन्त पति के साथ अमेरिका जा न सकती है। डेढ़ साल तक वह ससुराल में रहती है तो सासने उसे बहुत सताया था। कितने ही 'गौरी व्रत' रखा कर बहू को भूखा मारा था। अत: उसका मन टूट जाता है। बाद में बहू अमेरिका में पति आशीष द्विवेदी के पास पहुँचती है। बहुत सालों से वे ह्यूस्टन में रहते हैं।

आशीष द्विवेदी के दो बच्चें विनती और विनय होते हैं। आशीष के पिता गंगाधर द्विवेदी और माँ अमेरिका जाते हैं। बच्चे तो हिन्दी बिलकुल नहीं जानते हैं। गंगाधर द्विवेदीजी तो बच्चों से अंग्रेजी में ही वार्तालाप करते हैं। आशीष की माँ को तो बिलकुल अजनबी-सी बैठना पडता है। द्विवेदी जी ने विनीता को समझाया कि यदि प्रतिदिन एक शब्द हिन्दी सीखती जाओगी तो तुम दादी से आसानी से हिन्दी में बोल सकोगी। विनीता ने वह बात माँ नीता को बतायी तो उसने कहा, ''यदि तुम्हारी दादी भी तो अंग्रेजी का एक शब्द प्रतिदिन सीख कर तुम से अंग्रेजी में बोलना आरम्भ कर सकती थी।'' विनीता ने वही बात आशीष के पिता को सुनाई तो वे बहुत दु:खित हुए। एक महीना बीतते ही द्विवेदी जी भारत लौट आते हैं और श्रीमती द्विवेदी जी वहीं रहती है। एक दिन वह बीमार हो जाती है तो आशीष 'अमेरिका में इलाज करना बहुत महंगा' बहाना बना कर माँ को भी भारत भेज देता है।

कुछ साल बीत जाते हैं। बडी लडकी विनीता दूसरे शहर में पढ़ती रहती है और विनय पन्द्रह साल का होता है। अनुपम माता-पिता के साथ ही रहती है। आशीष गोरखपुर जाकर मकान बेच देता है और वह अपनी माँ को लेकर अमेरिका चला जाता हैं। माँ के आने पर आशीष, नीता और बच्चों में खुल कर बात होती है। नीता स्पष्ट कह देती है कि अपनी नौकरी और बच्चों की जिम्मेदारी से वह व्यस्त है। अत: वह माँ को लिए समय नहीं निकाल सकती। बडी लडकी विनीता दूसरे शहर में पढ़ती रहती है। विनय और अनुपम माता-पिता के साथ रहते हैं। आशीष स्वयं माँ की जिम्मेदारी लेता है।

कुछ दिन के बाद आशीष को एक कानफरेंस में चार दिन के लिए जाना पडता है। माँ की तबीयत खराब होती है। नीता सास की जिम्मेदारी लेने के लिए साफ-साफ इनकार कर देती है। फलत:

आशीष कानफरेंस में नहीं जाता है। माँ सब कुछ समझकर छोटी बेटी नीरजा के पास कुछ दिन जा ठहरने की इच्छा प्रकट करती है। आशीष बहन के घर में माँ को पहुँचा आता है।

सास की सेवा करने से नीता विमुख होती है। सास पर उसका आरोप है - शादी होने के बाद वह सास के पास कुछ दिन ठहरी तो सास ने उसे बहुत सताया था और अमेरिका भी जल्दी नहीं भेजा था। 'गौरीव्रत' के नाम पर उसे बहुत सताया था और भूखा भी मारा था। सास आशीष के यहाँ एक साल ठहरती है और नीता कहती है कि सुष्मा और नीरजा बेटियों के पास एक साल रुके। आशीष की माँ को लेकर नीता और आशीष के बीच बार-बार वाद-विवाद होने लगता है। जब आशीष कहता है, ''वह मेरी माँ है!'' तुरन्त सुनीता कह उठती है, ''माँ तो मेरी भी है। तुम मेरी माँ की नहीं सोचते तो मुझ से अपनी माँ का ध्यान रखने की उम्मीद क्यों?'' पत्नी को समझाने की युक्ति आशीष के पास नहीं रहती है। वह भुनकर रह जाता है। उसे जीवन निस्सार लगता है। लाचार हो कर आशीष लेखक (मित्र) को फोन करके उसके घर मिलने जाता है। वह अपनी दोनों बहनों से इस पर सलाह लेता भी है। सब लोग माँ के भारत चले जाने के पक्ष में रहते हैं। नीरजा के पुत्र के साथ माँ गोरखपुर लौटती है। वेदव्रत उनके लिए एक नौकर और किराये के मकान का प्रबन्ध कर देता है।

कई साल बीत जाते हैं। कहानीकार की माँ का स्वास्थ्य ठीक न चलती तो वे मुरादाबाद पहुँचते हैं। तब वे लोग आशीष की माँ के पास उनको ले जाते हैं। वह और भी वृद्धा हो जाती है। आँखों और कान कमजोर हो जाते हैं। दवाइयाँ खाती रहती है। उसे अलज्हाईमर की बीमारी होती है। कुछ याद नहीं रहता। केवल हड्डियाँ भर रह गई है।

नौकर से पता चलता है - वह सदा अपने बेटे को ही पुकारती रहती है। बच्चों के फोटों से बातें करने लगती है। अमेरिका से उसके पुत्र को जल्दी भेजने का प्रबन्ध करें।

कहानीकार बडे भारी मान से घर लौटते हैं। रात का भोजन अनमने मन से खा लेते हैं। नौकर जमुना दौड आकर बताता है कि आशीष की माँ की हालत और भी बिगडी हुई है। वेदव्रत और कहानीकार डॉक्टर को लेकर वहाँ पहुँचते हैं। आशीष की माँ आशीष और उसके पुत्र विनय के चित्र लिए लेटी होती है। डॉक्टर परीक्षा लेकर बताता है। ''अब कुछ नहीं रहा।'' लखनऊ से आशीष का भीई आकर अन्त्येष्टि संस्कार करता है। आशीष अन्त्येष्टि पर पहुँच न पाता है।

कहानीकार अमेरिका में ह्यूस्टन पहुँचता है। फोन की घंटी बजने पर पत्नी से कहते हैं, ''देखो! आशीष का फोन होने पर बता देना, घर पर नहीं है।''

3. पात्र तथा चरित्र चित्रण :-

आशीष की माँ संपत्ति, धन, पुत्र-पौत्र, बेटी-बहू आदि के रहने पर भी अभागिन बन जाती है। आशीष के लिए नौकरी और कमाई प्रधान होते हैं। बहू नीता को सास का उसे सताना बखूब याद है। वह भी नौकरी करने लगती है। इसलिए वह सास की देखभाल नहीं कर सकती। आशीष की माँ के पास तो धन है। वृद्धावस्था में शारीरिक तथा मानसिक रूप से उसके विचलित हो जाने पर अपनी ही संतान की राह देखनी पडती है। संतान के न आने पर वह और भी अस्थिर हो एक प्रकार की चपलता उसे घेर लेती है।

आशीष नौकरी और अपने परिवार तक ही सीमित रहता है। माँ को अपने पास रख न पाता, क्यों कि पत्नी सहयोग दे न पाती है और वह कारण भी बता देती है। ब्रजेश त्रिपाठी, वेदव्रत आदि पात्र स्नेहशील हैं जो आशीष की माँ के प्रति प्रेम तथा सहानुभूति प्रकट पर उसके अन्त्येष्टि संस्कार तका साथ रहते हैं।

4. कथोपकथन :-

'प्रवासी की माँ' कहानी अमेरिका में प्रवासी प्रोफेसर भूदेवशर्मा से लिखी गयी है। फिर भी कहानी में साहित्यक मूल्यों का सफलतापूर्वक पालन हुआ है। कथोपकथन नाटकीय विधान में छोटे होकर प्रभावोत्पादक हैं। कथोपकथनों में पात्रों का आन्तरिक रूप भी व्यक्त हुआ है।

''कहते थे, बच्चों को अमेरिका में रहना है, हिन्दी घर पर बोलने से उन को अपने अमेरिकी मित्रों के साथ दिक्कत आयेगी।''

''तो आप बच्चों से कैसे बातें करती थीं?''

× × × ×

''बहू ने विनीता से कहा, तुम्हारी दादी भी तो
अंग्रेजी का एक शब्द प्रतिदिन सीख कर तुम से
अंग्रेजी में बोलना आरम्भ कर सकती थी।''

× × × ×

'' फिर आप कितने दिन तक रुकीं?''

× × × ×

''देखो आशीष का फोन हो तो कहना, घर पर नहीं है।''

इस प्रकार कथोपकथन कथानक के अग्रसर होने में और चरित्र-चित्रण के निर्वाह में प्रभाव डालते हैं।

5. वातावरण :-

कहानी का वातावरण स्वदेश और विदेश का है। आशीष पढ़ाई के लिए अमेरिका जाता है और वहाँ पी-एच.डी. कर लेता है। तत्पश्चात वह वहीं नौकरी में दाखिल होता है। पत्नी नीता भी अमेरिका में पति के यहाँ जाती है। स्वदेश (भारत) और विदेश (अमेरिका) के जीवन-विधान में बहुत-सा अन्तर होता है। घर पर भारत में माता-पिता और अमेरिका में पुत्र, बहू और पोता-नाती के जीवन-विधान में कहीं मेल न हो पाता है। पिता के चलबसने के पश्चात में अलज्हाईमर बीमारी से ग्रस कर अन्त में वह मर जाती है। यह सब सम्मिलित परिवार के टूट जाने से होने वाला वातावरण है। देशी और विलायती वातावरण का सफलतापूर्वक निर्वाह हुआ है।

6. भाषा-शैली :-

कहानीकार भूदेव शर्मा लुइजियाना (अमेरिका) में प्रोफेसर हैं। विलायत में रहकर भी सरल तथा सुबोधात्मक खडीबोली में उन्होंने कहानी रची है। शैली में गति है। शब्द-चयन पुष्प-माला जैसा सजाया गया है। घनटाओं का क्रम आगे-पीछे करके लच्छेदार बनाया गया है। आत्म-कथात्मक शैली में कहानी बढ़ती है। व्यावहारिक खडी बोली में कहानी ढ़लती है।

7. उद्देश्य :-

'प्रवास की माँ' कहानी में पीढ़ियों का अन्तर बताया गया है। आशीष की माँ गोरखपुर में रहनेवाली भारतीय संप्रदाय की नारी है जो सम्मिलित परिवार में पली गयी है। आशीष पी-एच.डी. के पश्चात अमेरिका में ही नौकरी में लग जाता है। पत्नी नीता सास के अपने यहाँ रखने से विमुख होती है। आशीष की माँ भारत लौटती है और वृद्धावस्था में अकेला जीवन बिताना पडता है जिसके कारण मानसिक दुर्बलता भी भोगनी पडती है। कहानी में पैसे के लालच में विलायत जाकर माता-पिता को भूल जानेवाले एवं कम-से-कम अन्त्येष्टि संस्कार पर न पहुँचानेवाले नागरिक भारतीयों का जीवन-

विधान बताना ही कहानी का उद्देश्य है। उन की माँ दिन-दिन तथा क्षण-क्षण कुढ़ कर मरती रहती है। इन दो विषयों पर कथानक आधारित है।

8. शीर्षक :-

कहानी आद्यन्त प्रवासी की माँ पर ही चलती है। उसकी कटु विषाद कथा पर ही लेखक ने कलम चलायी। अत: शीर्षक 'प्रवासी का माँ' अत्यन्त सहज बना है।

9. उपसंहार :-

कहानी अमेरिका के प्रवासी से रची गयी है। लेकिन इस में साहित्यिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, पारिवारिक तथा वैयक्तिक भावनाओं का सफल समावेश हुआ है। कहानी के सारे तत्त्वों पर यह कहानी खरी निखरती है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

2. फिर कभी सही

- दिव्या माथुर

सप्रसंग व्याख्या :-

वह वसंत के अलावा किसी को चाह ही नहीं।

× × × ×

पायेगी जिस पुरुष को वह प्यार नहीं करती, उसका स्पर्श कैसे झेलेगी?

× × × ×

कैसे इनकारेगी, पतीत्व ? माँ का पत्र भी आया था। उनकी नजर में, जो हुआ सो हुआ। अब विष्णु से अच्छा वर दिया लेकर ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलेगा।

× × × ×

1. प्रसंग :-

ये पंक्तियाँ दिव्या माथुर से रचित 'फिर कभी सही' नामक कहानी से दी गयी हैं।

2. सन्दर्भ :-

नेहा विष्णु से विवाह नहीं करना चाहती है और कारण बताती है कि वह उसे नहीं चाहती।

3. व्याख्या :-

विष्णु, नेहा के साथ विवाह करना चाहता है। नेहा का जीवन अस्थिर रहता है। पति अनिल, एक लडकी खुशबू पैदा होने के बाद नेहा को छोड कर आस्ट्रेलिया जा बसता है। वहाँ के जीवन विधान के अनुसार वहाँ वह और विवाह कर लेता है। नेहा वसन्त से प्रेम करती है। वसन्त भी नेहा के साथ पत्नी का-सा व्यवहार करता है। नेहा के परिवारवाले चाहते हैं कि वह विष्णु से विवाह कर ले और इज्जत से रहे। इन सब के फल स्वरूप नेहा विष्णु को पति के रूप में स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं।

विष्णु भी नेहा को समझाने का प्रयत्न करता है - ''जानती हो, नेहा, मैं सरकार को कितना टैक्स देता हूँ? मर गया तो कोई भोगने वाला भी नहीं किसके काम आयेगा यह धन-जायदाद? मुझ से इसलिए शादी कर लो कि यह सब तुम्हें मिल जाये और मैं चैन से मर तो सकूँ।''

इन सब के फल स्वरूप नेहा विष्णु को चाहती नहीं और फिर उसी के साथ विवाह कैसे हो?

वसन्त के अलावा नेहा और किसी को पति के रूप में स्वीकार करना नहीं चाहती। अब रही विष्णु की बात। विष्णु को वह प्यार नहीं करती। तब उसका स्पर्श वह कैसे सहेगी? उसके साथ दाम्पत्य जीवन कैसे निर्वाह करेगी? विष्णु के लिए नेहा के मन में टुकडा-भर भी प्रेम नहीं।

4. विशेषताएँ :-

यहाँ नेहा का चरित्र व्यक्त होता है।

(क) अनिल के साथ उसका विवाह होता है। खुशबू के पैदा होने के बाद वह आस्ट्रेलिया चला जाता है।

(ख) नेहा वसंत के साथ प्रेम व्यवहार चलाती है। किन्तु वसंत विवाहित है। नेहा को वसंत की पत्नी का डर है।

(ग) विष्णु नेहा के साथ विवाह करना चाहते है और ने हा का परिवार भी यही चाहता है। किन्तु, नेहा विष्णु के स्पर्श तक नहीं चाहती। फिर विवाह उसके साथ कैसे हो पायेगा?

2. वसंत भी किनता भाग्यशाली था कि पत्नी और प्रेयसी दोनों ही उसे एकनिष्ठ मिली थी।

× × × ×

दीप्ति की एक सहेली के पति ने आत्महत्या कर ली थी क्यों कि वह एक अन्य स्त्री से प्यार करता था।

× × × ×

अगर पिता कहलवाना है तो मंदिर जाकर उस से शादी कर ले। वसंत उसके लिए भी तैयार था। वह स्वयं ही पीछे हट गयी।

1. प्रसंग :-

यह उद्धरण दिव्या माथुर कृत 'फिर कभी सही ....' नामक पाठ से दिया गया है।

2. सन्दर्भ :-

नेहा वसन्त के बारे में सोचती रहती है।

3. व्याख्या :-

वसन्त से नेहा सम्बन्ध जोडना चाहती है और उससे प्रेम करती है। वह वसन्त की प्रेयसी है। वसंत विवाहित है। नेहा वसंत की पत्नी को छोटी बहन के रूप में स्वीकार करती है। वह वसंत के भाग्य की प्रशंसा करती है। पत्नी दीप्ति एक ओर और पेयसी नेहा दूसरी ओर। वसन्त अगर नेहा के साथ विवाह करे, तो दीप्ति को कोई एतराज नहीं।

नेहा सोचती जाती है। वसन्त ने उसे बताया था कि नेहा के साथ अगर वह विवाह कर लेगा, तो उसकी पत्नी दीप्ति को कोई दिक्कत नहीं। वसन्त ने स्वयं नेहा को बताया कि दीप्ति की सहेली का पति किसी दूसरी स्त्री से प्यार करता था। फलस्वरूप उसने आत्महत्या कर ली। ये पूरे विषय नेहा के दिमाग में चक्कर काटने लगते हैं।

नेहा कभी-कभी वसन्त को छोडने का निर्णय कर लेती है। किन्तु जैसे ही वह मुस्कराता घर में कदम रखता, सब कुछ भूल कर, उस से लिपट जाती है। बेटी खुशबू का संसार वसन्त के साथ होता है। एक बार खुशबू के मुँह से वसंत के लिए 'पापा' निकल गया था, तो वह सोचती है। अगर पिता कहलवाना है तो मंदिर जाकर उस से विवाह कर ले। वसंत विवाह के लिए तैयार होता है तो वह स्वयं ही पीछे हट जाती है। नेहा को डर है कि दीप्ति अगर रिपोर्ट करती है तो वसंत को जेल हो जायेगी। कभी-कभी खुशबू वसन्त से कहती है कि अंकल रात को हमारे यहाँ क्यों नहीं रहते। इस पर नेहा अन्दर तक काँप जाती है।

4. विशेषताएँ :-

यहाँ नेहा वसन्त के सम्बन्ध की चर्चा हुई है।

प्र.2. 'फिर कभी सही ......' कहानी प्रस्तुत करने में 'दिव्या माथुर' कहाँ तक सफल हुई, अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

'फिर कभी सही ......' एक लच्छेदार कहानी है जो नेहा की भावनाओं से बनी है। लेखिका दिव्या माथुर ने अत्यन्त सफलतापूर्वक कहानी को निभाया है। कहानी आद्यन्त पूर्णतया मनोवैज्ञानिक स्तर पर चलती है।

2. उद्देश्य :-

मानव जीवन अनेक प्रतीकों के माध्यम से बताया जा सकता है। अगर नदी का रूप मान लें, तो उसमें आकर मिलनेवाली धाराएँ भी होती हैं और उस से अलग होकर बह जानेवाली कुछ धाराएँ भी

होती हैं। कभी-कभी कुछ नदियाँ समुद्र तक न बह पाती। बीच में ही वे भूगर्भ में विलीन हो जाती हैं। नेहा का जीवन भी ऐसा ही है। अनिल, वसन्त और विष्णु उसके जीवन में विविध प्रकार झाँकते हैं। लंदन में जीवन बितानेवाली भारतीय नारी का इस कहानी में चित्रांकन हुआ है। दो-तीन नावों पर वह नारी, नेहा चलना चाहती है। किन्तु सीधे खेन पाती। इसी उद्देश्य को आधार बना कर कहानी रची गयी है।

3. कथावस्तु :-

लंदन में नेहा की स्थिति मानसिक अस्तव्यवस्था में अस्थिर होती रहती है। बाई कनपटी पर हथौड़े जैसा लगातार चोट होती रहती है। नब्ज फडक-फडक कर प्रतिवाद करती है। दर्द को न सह सकने के कारण वह अपना सिर दुपट्टे से कस कर बाँध लेती है। उसे रक्तचाप या मधुमेह की कोई शिकायत नहीं है। सारी घटनाएँ उसके सामने लहराती रहती हैं।

नेहा वसंत से प्रेम करती है और अनिल से विवाह कर लेती है। बेटी, खुशबू के पैदा होने के बावजूद अनिल नेहा को छोड कर आस्ट्रेलिया जा बसता है। वहाँ वह और किसी युवती के साथ विवाह कर लेता है। इस प्रकार पाँच साल बीत जाते हैं। नेहा और वसंत के बीच में प्रेम बढ़ता जाता है। वसंत नेहा की पुत्री खुशबू के साथ अनुरागपूर्ण व्यवहार करता है। खूशबू वसंत को 'पापा' के रूप में मानती है जिस पर नेहा अपनी पुत्री को टोकती है। वसंत की पत्नी दीप्ति को नेहा छोटी बहन मानती है। वसंत नेहा से विवाह करना चाहता है। नेहा मानती नहीं, क्योंकि अगर दीप्ति रिपोर्ट कर देगी तो वसंत को जेल हो जायेगी।

नेहा को विष्णु से फोन आता है। वह नेहा से विवाह करलेना चाहता है। वह इज्जतदार और धनवान भी है। नेहा का परिवार उसे विष्णु से विवाह कर इज्जत से जीवन निर्वाह करने की सलाह देता है। लेकिन विष्णु के प्रति नेहा का राई भर भी प्रेम नहीं और उसके स्पर्श तक वह झेल नहीं सकती। तब उस से विवाह कैसे? मदर्स डे पर बसंत खुशबू के लिए बहुत से उपहार खरीदता है और नेहा के लिए गुलाब उपहार में देता है। नेहा वसन्त का दिल तोडना नहीं चाहती।

फिर कभी सही .... कभी भी उसी के साथ रहना चाहती है।

4. पात्र तथा चरित्र-चित्रण :-

'फिर कभी सही ......' कहानी एक फ्लाश बैक (Flash Back) के रूप में चलती है। कथा की प्रधान पात्र नेहा ही है। नेहा की मनोवैज्ञानिक लहरियों में कहानी अग्रसर होती है। वह लंदन नगर

में रहनेवाली भारतीय नारी है। लेकिन विलायती संप्रदाय के अनुसार उसका जीवन ढ़लता रहता है। अनिल से उसका विवाह होता है। लडकी खुशबू के जन्म होने के बावजूद वह नेहा को छोडकर आस्ट्रेलिया जा बसता है।

फिर नेहा का मन वसंत के साथ लगता है और वह उस से प्रेम करने लगती है। वसंत नेहा के साथ विवाह करने के लिए तैयार होता है। लेकिन वसंत की पत्नी दीप्ति के डर से वह वसंत के साथ विवाह करना नहीं चाहती। इस प्रकार पाँच साल तक नेही का जीवन डंवाँडोल हो जाता है। विष्णु उस से विवाह करना चाहता है तो वह तिरस्कार करती है। उसके घरवाले भी विष्णु के साथ विवाह कर आदरपूर्ण जीवन बिताने के लिए कहते हैं।

सोच-सोच कर नेहा वसंत के साथ ही जीवन व्यापन करने का निर्णय कर लेती है।

वसंत, अनिल, विष्णु आदि गौण पात्रों के रूप में आते हैं और हर पात्र का नेहा से अपना-अपना संबन्ध होता है।

8. कथोपकथन :-

'फिर कभी सही ......' कहानी नेहा के सोचते-सोचते घटनाक्रम में चलती है। कथोपकथन नकारात्मक कह सकते हैं। खूशबू का वसन्त से 'पापा' और 'अंकुल' का सम्बोधन करना और नेहा को 'हापी मदर्स डे' बोलना दिखाई देता है। हाँ विष्णु का नेहा से फोन में वार्तालाप करना एक प्रकार से कथोपकथन के अन्तर्गत लिया जा सकता है। उन कथनों से विष्णु नेहा को जितना चाहता है, उसका अन्दाजा लगाया जा सकता है।

चौबीस घण्टे तुम से बाँधा रहूँगा। इस बार भी दिल्ली में कितनी लडकियाँ देख कर आया हूँ पर मेरी नजर किसी पर टिकती ही नहीं। जितना तुम्हें भुलाना चाहता हूँ, उतना ही ज्यादा तुम्हें चाहने लगता हूँ।

× × ×

जानती हो नेहा, किनता टैक्स देता हूँ यहाँ की सरकार को ? मर गया तो कोई भोगनेवाला भी नहीं, किसके काम आयेगा यह धन-जायदाद? मुझ से इसलिए शादी कर लोकि यह सब तुम्हें मिल जाये और मैं चैन से मर सकूँ!

× × ×

हाँ कह दो प्लीज नेहा ! अच्छा कल तक और सोच लो, मैं इसी समय कल फोन करूँगा।

6. वातावरण :-

'फिर कभी सही......' कहानी का विदेशी वातावरण है। नेहा लंदन में रहती है और उसका पति आस्ट्रेलिया में रहता है। वसंत भी इंग्लैण्ड में रहता है। विष्णु डेनमार्क से फोन करता है। नेहा का चरित्र लुकाचिपा चलता है। भारतीय हो कर नेहा विदेशी संप्रदाय पर चलती रहती है। घरवाले उसे विवाह कर इज्जत का जीवन बिताने को कहते हैं। कहानी का सारा वातावरण नेहा को आधार बनाकर रचा गया है। एक प्रकार से वातावरण सभ्य नहीं।

7. भाषा शैली :-

कहानी का भाषा उर्दू मिश्रित व्यवहारिक खडीबोली है। घटना और पात्र के अनुसार भाषा का प्रयोग हुआ है अमेरिका में रह कर भी श्रीमति दिव्या माथुर ने परिमार्जित तथा व्यविस्थत हिन्दी में कहानी की रचना की है।

8. शीर्षक :-

कहानी अनेक रूपों में अग्रसर होती है। नेहा मोड पर मोड लेकर अन्त में वसन्त के साथ ही जीवन बिताने का निर्णय लेती है। यही कहानी 'फिर कभी सही' शीर्षक में परिणत होती है।

इस प्रकार 'फिर कभी सही .....' उत्तम कोटि की कहानी है।

Lesson Writer

Inampudi Kavitha M.A.,

3. अनजाना सफर (कहानी-कनडा से)

- अश्विन गाँधी

संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए :-

1. **अगर ठीक से गहरा कश लिया तो दूसरी दुनिया में पहुँच जाओगे। ऐसी दुनिया सिर्फ आराम ही आराम होगा। जमीं के हरे दर्द भूल जाओगे।**

1. **प्रसंग :-**

यह उद्धरण अश्विन गाँधी कृत 'अनजाना सफर' नामक कहानी से दिया गया है।

2. **सन्दर्भ :-**

जेनेट अमर को एक स्पेशल सिगरेट देकर गहरा कश खींचने के लिए कहती है।

3. **व्याख्या :-**

अमर चाली के बीच वार्तालाप चलता रहता है। दोनों बियर पीने लगते हैं। वार्तालाप के दौरान अमर चाली को अपना एक अनुभव बताता है -

बीस साल पहले अमर की बधाई में एक पार्टी चली थी। वहाँ जेनेट के साथ लॉन में अमर घूमने लगा था। जेनेट अमर को अपनी नये मोडल की कार भी बताती है। फिर वह एक स्पेशल सिगरेट देकर कश खींचने को कहती है जिस से वह एक दूसरी दुनिया में विहार करेगा। अमर जेनेट के कहे अनुसार कश खींचता है जो बहुत खतरनाक नशीला था।

अमर इस प्रकार चाली को बीस साले पहले की बात बताता है।

4. **टिप्पणी :-**

नशा या दूसरी दुनिया के नाम पर तरह तरह की चीजों से आज संसार में कुछ लोग पागल बन रहे। ऐसे लोगों पर यह उद्धरण एक चुनौती है।

2. **खुश हूँ कि मैं जाने-पहचाने जगत में वापस लौट आया। ''मैं फिर वहाँ नहीं जाऊँगा।''**

1. **प्रसंग :-**

यह उद्धरण अश्विन गाँधीकृत 'अनजाना सफर' कहानी से दिया गया है।

2. सन्दर्भ :-

मरुजाना कलि पाइप में रख कर चाली अमर को उसका धुआँ खींचने को कहता है। कश के बाद अमर अपनी बाधा व्यक्त करते हुए उक्त वचन चाली से कहता है।

3. व्याख्या :-

मरुजान कलि की कतरन पाइप में रख कर चाली उसे सुलगाता है। अमर उस के कश खींचता है तो उसे विविध कठिनाइयाँ होती हैं –

अमर शारीरिक तथा मानसिक संतुलन खो जाता है। उसका सर तैरने लगता है। शान्त समन्दर में ऊँची लहरें आने लगती हैं। दुनियाँ तूफान बन जाती है। वह चल नहीं पाता। पैर लडखडाने लगते हैं। गला और जीभ सूख जाते हैं। नीन्द नहीं लगती। रात-भर वह मानसिक तथा शारीरिक रूप से असंतुलित होता है। वह किसी अनजानी जगह पहुँच जाता है। उसने सफर किया और जहाँ पहुँचा वहाँ वह दु:खी रह। कंट्रोल नहीं था, संतुलन नहीं था और शक्ति भी गायब थी।

अमर चाली से कहता है, ''खुश हूँ कि मैं जाने-पहचाने जगते में वापस लौट आया। मैं फिर वहाँ नहीं जाऊँगा।''

4. टिप्पणी :-

नशीले पदार्थों के सेवन से व्यक्ति का दिमाग और शरीर असंतुलित होते हैं। ऐसी चीजों से दूर रहना चाहिए।

प्र.3. 'अनजाना सफर' कहानी का सारांश लिखिए।

अमर पहाड की धाटी में अपनी छोटी सी कॉटेज में अकेला रहता है। वह खुद को लेखक, कवि, चिन्तक और दार्शनिक समझता है। ग्रीष्म के महीनों में छुट्टी मनाता है, पर्यटन करता है और बाहर की दुनिया से मिलता-जुलता है। चाली तीस साल का जवान आदमी है। वह बीवी के साथ रहता है, और उसकी कॉटेज अमर की कॉटेज से थोडी ही कदम दूर है। दोपहर के एक बजे दरवाजे की घण्टी बजती है तो अमर दरवाजा खोलता है और मुस्कुराता चाली खडा होता है। उसके हाथों में बियर और वाइन की बोतलें होती हैं। अमर चाली को लंच की दावत देता है। चाली हाई स्कूल तक की पढ़ाई है और वह ट्रक चला कर किसी कंपनी का माल अलग-अलग जगह पहुँचाता है। वह यूनियन का मेंबर है, सुख-शान्त रहता है और अच्छी कमाई कर लेता है।

अमर और चाली बियर पीने लगते हैं सैंडविच खाने लगते हैं। दोनों के बीच वार्तालाप होने लगता है और तरह-तरह के विषयों की चर्चा होती है बीस साल पहले सेल्स-पर्सन के घर पार्टी आयोजित हुई थी। कंप्यूटर सब से सफल पर्सन के घर पार्टी आयोजित हुई थी। जिस में अमर का भी पात्र था। अत: अमर को पार्टी में हाजिर होना पडता है। सब लोग अमर को बधाई देने लगते हैं।

महल जैसा, बडा आलीशान मकान है। बार खुला होता है। बैंड बजता रहता है। डांस होता रहता है। कुछ बॉल खेलते रहते हैं। पानी में कूदने की दौड में लोग अपने वस्त्र जल्दी से उतार कर लॉन पर बिखेर देते हैं। हवा में धुआ होता हैं, सफेद धुएँ के बादल तैरते रहते हैं। उन के कारण आँखों को जलन होती रहती है। वक्त गुजरता रहता है और नशा बढ़ता जाता है। सब लोग दुनिया भूलते जाते हैं। किसी को आनेवाली सुबह की न फिक्र है और न इंतजार।

जेनट के अनुरोध पर अमर घूमने चलता है। नये प्रॉडक्ट की सफलता में जेनेट का हिस्सा काफी है। दोनों, हाथों में हाथ पार्किंग लॉट की ओर चलते हैं। लॉन पार करके एक कार के नजदीक आ खडे होते हैं। जेनेट रिमोट कंट्रोल से कार अनलॉक कर देती है। कार के अन्दर अनेक सुविधाएं होती है। सुरीला संगीत शुरू होता है। अमर सिगरेट का कश लेता है। कुछ सालों से सिगरेट पीने की उसकी आदत है। जेनेट अमर को दूसरे प्रकार की सिगरेट देती है और कहती है, ''अगर ठीक से गहरा कश लिया तो दूसरी दुनिया में पहुँच जाओगे। ऐसी दुनिया जहां सिर्फ आराम ही आराम होगा जमीन के हर दर्द भूल जाओगे।'' जेनेट की सलाह पर अमर सिगरेट का कश खींच कर लंबे समय तक धुआँ अन्दर रखता है और धीरे-धीरे हवा छोड देता है। अमर एक-दो कश के बाद सिगरेट छोड देता है।

चाली बिचर की तीसरी बोतल खोल देता है। अमर चाली से 'मरुजाना स्मोक' के बार में पूछता है। चाली बताता है, ''बहुत-सा आराम मिलता है। हल्कापन महसूस होता है। कुछ लोग छोटे बच्चे की तरह हँसना शुरू करते हैं। कहीं पुलिस के रोकने पर, थोडा-सा मरुजाना निजी उपयोग के लिए मिल गया, पुलिस आप को छोड देगी। मरुजान ऐल्कोहॉल और टोबैको से कम नुकसानकारी है और वह बहुत आसानी से उगाया जा सकता है। एक आउन्य का दो सौ बीस डालर होते हैं। मरुजाना प्लाण्ट में कलियाँ भी खिलती हैं। कलियों के सूखने पर उसका मूल्य बढ़ जाता है।''

चाली अपनी कॉटेज की ओर भाग कर छोटा से प्लास्टिक थैला ले आता है। एक कली को कैंची से कतर कर पाश्प में रख कर कतरन को जलाता है। चाली और अमर कश लेने लगते हैं।

अमर का सर तैरने लगता है और शान्त समंदर में लहरें उछलने लगती हैं। चाली के मुखारविन्द पर काली दाढ़ी आती है। अमर हँसने लगता है और चाली भी हँसने लगता है। कोई बात-चीत नहीं।

सिर्फ हँसी की लेन-देन। अमर का माइण्ड कंट्रोल खो बैठता है। दुनिया तूफानी बनती है। वह उगमगाते सोफे की ओर चलता है और बैठे जाता हैं। वह तुरन्त लंबा हो जाता है। आँखें खुलती नहीं। उस हालत से वह मुक्त होना चाहता है। वह चल नहीं पाता है। चाली उसे आँखें खोल कर चलने की सलाट देता है। किन्तु वह गिर जाता है। वह उस अवस्था से मुक्त होना चाहता है। उसका गला और जीभ सूख जाते है। चाली पानी पिलाता है। चाली ठण्डे पानी से स्नान करने की सलाह देता है।

अमर संतुलन खोता जाता है। पानी नहाने से उसे कहीं टकराने का डर लगता है। वह सोना चाहता है। साढे तीन बजे वह पलंग पर सोता है। वह सोने का प्रयत्न करता है। हर पाँच मिनट पर आँखे खुलती रहती हैं। उसे संतुलन का अभाव सताता रहता है। माइंड कंट्रोल वापस प्राप्त करना जरूरी है। डगमगाते हुए वह जाकर दरवाजा लॉक कर देता है। बियर की आधी भरी बोतल टेबुल पर पडी है। बोतल खाली करके अमर लेटता है। साढ़े चार बजे और छः बजे वह जागा।

अमर को अच्छा अनुभव प्राप्त होता है। संतुलन वापस आ जाता है। कंट्रोल फिर से प्राप्त हो जाता है। अमर को भगवान की याद आती है, मेहरबानी हुई वह दुखी दुनिया से लौट आया है, 'अनजाने सफर' की याद ताजा रहती है। झट से वह सफर की कुछ बातें लिख देता है। भूख लगती है और वह सन्तुलन के साथ खाना खा लेता है।

आठ बजे दरवाजे की घण्टी बजती है। मुसकराता हुआ चाली खडा होता है। चाली ने अमर का अनुभव जानता चाहता है और कहता है पहली बार ऐसा ही होता है।

अमर बताता है, ''मैं किसी अनजानी जगह पहुँच गया। कंट्रोल नहीं था, संतुलन नहीं था और शक्ति भी गायब थी। खुश हूँ कि मैं जाने-पहचाने जगत में वापस लौट आया। मैं फिर वहाँ नहीं जाऊँगा।''

चाला मुस्कान के साथ खाली बोतलें लेकर अपने कॉटिज की ओर चल पडता है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

4. इन्तजार (कहानी-नार्वे से)

- अलका भटनागर

सप्रसंग व्याख्या :-

1. **''क्यों बचुआ .... विदेश में ते नहीं मिले है क्या ..... कैसे रेशम से बाल हुआ करते थे ..... अब देखो, क्या सूखते जूटकी तरह हो गये हैं।''**

1. **प्रसंग :-**

यह उद्धरण अलका भटनागर से रचित 'इन्तजार' नामक कहानी से लिया गया है।

2. **सन्दर्भ :-**

बचुआ इन्तजार कहानी में आखिरी बार भारत आये समय माँ से प्राप्त वात्सल्य की योद करताहै।

3. **व्याख्या :-**

बचुआ जब आखिरी बार भारत गया था। माँ बीमार थी। सर्दी में उसे गठिया का रोग बहुत तंग करता था। पर अपने बचुआ और उसके बच्चों को देख कर उस पर बीमारी का असर न रहा। महाराज को एक महीने की छुट्टी देकर वह स्वयं खाना बनाने लगी थी। फिर मछली और मांस पकाने के लिए रमजरनी की नियुक्ति की गयी थी। मक्का की रोटी, सरसों का साग, आलू की गयी थी। मक्का की रोटी, सरसों का साग, आलू के गर्मागर्म पराठे घर के ताजा मक्खन के साथ दही की लस्सी – ये सब प्यार के साथ खिलाती थी।

माँ रा को गर्म सरसों का तेले बचुआ के सिर में डाल कर अपनी कोमल उँगलियों से मालिश करते हुए कहती थी, ''क्यों बचुआ! विदेश में तेल नहीं मिलता क्या ? इसके पहले तुम्हारे सिर के बाल रेशम-से लगते थे। किन्तु अब सूखते जूट की तरह हो गये हैं,'' बचुआ ने भी प्यार से माँ को समाधान दिया था ''अगर रेशम जैसे ही रहते तो क्या तुम इतने प्यार से सिर में मालिश करती!''

4. **विशेषताएँ :-**

1. यहाँ माता का वत्सल्यपूर्ण प्रेम व्यक्त हुआ है।
2. उबटन लगाना भारतीय संस्कृति का भाग है।

2. उसकी पत्नी कहने को भारतीय थी पर पली-बढ़ी विदेश में थी। वहीं के कल्चर (संस्कृति) में रंगी और बच्चों को भी अपने ही रंग में ढ़ालती थी।

1. प्रसंग :-

यह उद्धरण अलका भटनागर से रचित कहानी 'इन्तजार' से लिया गया है।

2. सन्दर्भ :-

बचुआ अपने परिवार के बारे में सोचता रहता है और पत्नी का असहयोग उसके दिमाग में आता है।

3. व्याख्या :-

बचुआ की पत्नी भारतीय थी। किन्तु वह विदेश में ही पली-बढ़ी थी। उसकी संस्कृति विलायत की थी और बच्चों को भी उसी विधान में बडा किया। भारतीय संस्कृति उन्हें छू भी नहीं पायी थी। बचुआ तो भारतीय संस्कृति चाहता था। इसीलिए वह उन लोगों के साथ समझौता कर न पायाया वे लोग न उसके साथ। नदी के दो पाटों की तरह वे अलग-अलग दिशाओं में बहते रहे। यह हाल कब तक चलेगा पता नहीं। एक ही छत के नीचे अजनबी बनकर जीवन बिता रहे थे।

आखिर इक्कीस साल उनके साथ रहा था। अब पाँच साल से वह अकेला रहने लगा।

4. विशेषताएँ :-

यहाँ विलायती संस्कृति में भारतीय संतति के परिवर्तन की चर्चा हुई है।

प्र.4. 'इन्तजार' कहानी का सारांश लिखिए :-

हर रोज की तरह शाम ढ़लती जाती है। 'बचुआ' की जिन्दगी भी थकी-थकी सी शाम की तरह ढ़ल रही है। रोज की तरह बचुआ नौकरी से लौटता है। बस से उतर कर थका-मांदा वह बर्फीली सडक पर धीरे-धीरे चलने लगता है। कडाके की ठण्ड पडती रहती है। बर्फ जम जाने से चिकनी फिसलपटी बनी हुई है। कँप-कँपाती ठण्ड में बस स्टाप से घर तक की सीधी चढाई है। घर तक पहुँचते-पहुँचते उसका दम फूलने लगता है। वह बडबडाता हुआ घर तक पहुँचता है। वहाँ की बर्फ और अँधेरे पर वह चिढ़-चिढ़ाता है।

पहले जब नया-नया बचुआ इस देश में आया था, रुई के फाहों की तरह गिरती हुई सफेद-सफेद बर्फ उसे छूने से वह खुश होता था। छब्बीस साल बीत जाते हैं। आज गिरती हुई उसी सफेद मुलायम बर्फ उसे खुशी नहीं होती है। आज वह ऊदास है और तन-मन में नफरत होने लगती है।

उसके घर के सामने एक बूढ़ा लारसन खिडकी के साथ चिपका खडा होता है। पूरे घर में वह बिलकुल अकेला रहता है। बाहर आने-जाने वालों और छोटे-छोटे बच्चों को बर्फ में खेलते, लुढ़कते देखता रहता है। उसके पत्नी के गुजरे दस साल बीत जाते हैं। बेटा, बहू अपने अलग घर में अपने तीन बच्चों के साथ रहते हैं। सुविधा का अनुसार में बूढ़े लारसन के पास आकर कुछ दिन ठहरते हैं। लेकिन वह बूढ़े लारसन की तरह जीवन नहीं बिता सकता है। उसकी बूढ़ी माँ इन्तजार करती होगी। माँ ने बहुत बार भारत लौट आने के लिए कहा था।

माँ की ममता उसे बार-बार याद आती रहती है। आखरी बार बचुआ भारत गया था। माँ को सर्दियों में गठिया का रोग बहुत तंग करता था। लेकिन बच्चों के साथ बेटे को देखकर माँ की बीमारी चली गयी थी। महाराज को छुट्टी पर भेज कर वह स्वयं खाना बनाने लगती है। हाँ माँस और मछली को बनाने के लिए रामजरनी को बुलवाया। मक्का की रोटी, सरसों का साग, आलू के गर्मागरम पराठे, घर के ताजे मक्खन के साथ दही की लस्सी सब खिलाती थी। सरसों का तेल सिर पर डाल कर वह मालिश करती थी और नहलाती थी। वह बार-बार उसके प्राण निकलने के पहले ही भारत लौट आने की बात कहती थी। किन्तु पत्नी तथा सन्तान के कारण उसे विलायत में ही रहना पडा।

बचुआ पत्नी भारतीय है, किन्तु पली-पढ़ी विदेश में है और वहाँ की संस्कृति से वह जुडी हुई है। उसके बच्चे बिलकुल आजाद ख्याल के हैं और वे उसके नियन्त्रण से बाहर होते हैं। भारतीय संस्कृति उन्हीं छू भी न सकती है। इसलिए वह उन लोगों के साथ समझौता कर न पाता है और वे भी उसके साथ। नदी के दो पाटों की तरह अलग-अलग दिशाओं में वे बहते चलते हैं। वह उन लोगों के साथ एक ही घर में, एक ही छत के नीचे अजनबी बन कर रहता है।

इक्कीस साल पत्नी के साथ बचुआ रहा था। अतः निर्णय लेने में बडा लंबा समय लगता है। तब से वह अकेला ही रहता है और पाँच साल बीत जाते हैं। फिर वह भारत भी न जा पाता है। उसे माँ की याद आती है। माँ अपने पोते-पोती की शादी बडे धूमधाम से करने का सपना देखती रहती है। उसे अपने बेटे-बहू का इन्तजार है।

बचुआ बहुत सालों के पहले विलायत आया था। कुछ होते हुए भी आज उसके हाथ खाली ही हैं। उसकी जिंदगी मजाक बन कर रह गई है। रातों में अजीब-अजीब सपने आते हैं। कभी उसे लगता है कि वह नन्हा-मुन्ना-सा बच्चा बन गया है, उसका बचपन लौट आया है और वह अपने बचपन के साथियों के साथ आमों बगीचों में जाकर पत्थरों से और गुलेलों से खट्टे-मीठे आम तोड रहा है। कभी लगता है कि वह अपने घर के सामनेवाले मैदान में हरी-भरी, नर्म-नर्म मुलायम घास पर नंगे पाँव दौडता चला जा रहा है। वह कभी खिली हुई पीली-पीली सरसों के खेत में बंसी, बुदूँ, शन्नों, बंतो और छुट्टन के साथ हिरन की तरह कुलांचे मारता जा रहा है। फिर वह सपनों से जगता है तो वही उदासी और थकान की जिन्दगी की शाम!

बचुआ जिन्दगी घिसट-घिसट कर जी रहा है। किन्तु यह व्यवहार कब तक चलता रहेगा? वह सोचने लगता है, एक दिन या तो वह किसी मैण्टल हॉस्पिटल में या फिर पडोसी बूढ़े की तरह अपने घर की खिडकी से चिपका होगा ..... बूढ़ा लारसन तो फिर भी अपने बेटे-बहू और पोते-पोती का इन्तजार कर रहा है। पर उसके पास तो कुछ भी नहीं बचा इन्तजार करने के लिए ... वह किसका इन्तजार करेगा?

निष्कर्ष :-

यह कहानी अलका भटनागर (नार्वे) से लिखी गई है। कथानक 'वह' (उत्तम पुरुष) को आधार बना कर चलती है। विदेशी वातावरण नौकरी करते हुए भारतवासी धनार्जन करते हैं। लेकिन परिवार विलायती परिवेश के मोह में पड जाता है । फलतः परिवार ममताहीन हो जाता है। व्यक्ति पागल-सा बन जाता है और वह एक धुँधला जीवन बिताता रहता है और अकेला पन उसे कोसता रहता है। उसकी पत्नी भारत-नारी होने पर भी विलायती नशे में गिर जाती है और भारतीयता उसके लिए नगण्य बन जाती है।

बचुआ की माँ बेटे-बहू और पोते-पोती के प्रेम के लिए ललचाती रहती है। किन्तु उसका प्यार रेगिस्तान बन जाता है। बूढ़ा लारसन कहानी का उत्प्रेरक बनता है।

नार्वे में रहकर भी अलका भटनागर ने खडीबोली कहानी 'इन्तजार' हृदयरंजक बनाकर लिखी है। कहानी वर्णनात्मक शैली में चलती है।

कहानी बचुआ को आधार बना कर चलती है। लारसन, बचुआ की पत्नी, माँ, पोता-पोते - ये सब परोक्षरूप से आते हैं। वस्तुतः कहानी 'वह' से प्रारम्भ होती है। तेल गूँथ कर माँ पानी नहलाते हुए

उसका सम्बोधन 'बचुआ' (बेटा) कहती है। अत: बचुआ (बेटा) ही कहानी का नायक है। कहानी में विलायती वातावरण के प्रभाव और उसके लोभ का वर्णन हुआ है। भारतीय होकर पाश्चात्य जीवन-विधान में तैरनेवाली नारी के रूप में बचुआ की पत्नी आती है।

माँ 'बचुआ' का इन्तजार करती रहती है। अत: शीर्षक अत्यन्त उपयुक्त है।

भारतीय सदा भारतीय ही होते हैं। विलायत में रहकर उनका जीवन-विधान का नकल करनेवाले भारतीय कदापि विलायती नहीं बन सकते। इस उद्देश्य पर कहानी रची गयी है। माँ अपने पुत्र और पुत्र के परिवार का इन्तजार करती रहती है। लेकिन बचुआ माँ की इच्छा की पूर्ति नहीं कर सकता।

Lesson Writer

Inampudi Kavitha M.A.,

5. एक लावारिस की मृत्यु (कहानी - मॉरीशस)

- वेणीमाधव रामखेलावन

सप्रसंग व्याख्या कीजिए :-

1. **वह बूढा कोई नब्बेवर्ष का रहा होगा। उसके वस्त्र मैले-कुचले थे, परन्तु फटे हुए नहीं थे। उसकी वेश-भूषा पूर्ण थी यानी कोट-पतलून, कमीज, गले में टाई और पैरों में जूता-मैजा था। सफेद दाढ़ी और मूँछे लबी थीं।**

× × × ×

कहाँ जाता था, यह नहीं जानता था।

× × × ×

वह गूँगा नहीं था, परन्तु किसी से बात-चीत नहीं करता था। किसी के कुछ पूछने पर वह सिर्फ 'हाँ' या 'नहीं' में उत्तर देता था। कभी-कभी शून्य में वह एक-टक देखा करता था। लगता था कि उसने जीवन में बहुत कुछ खो दिया है।

× × × ×

वह भीख नहीं माँगता था, परन्तु, खाने के समय फेरीवाले दया करके कुछ दे देते थे, वह खा लेता था।

× × × ×

परन्तु वह नहीं चाहता था कि कोई उसे पहचाने।

1. **प्रसंग :-**

यह उद्धरण वेणी माधव रामखेलावन कृत 'एक लावारिस की मृत्यु' कहानी से दिया गया है।

2. **सन्दर्भ :-**

चालीस साल जेल काटकर लखपति सिंह अपने गाँव पहुँचता है। अपने ही पोते के अपने परिवार में उसके प्रति तिरस्कार भावा जानकर वह रोजहिल का केन्द्र पहुँचता है। वह एक बसके नीचे आने से उसके प्राण निकल जाते हैं। तब लेखक (कहानीकार) वहाँ उसके गुजरे-दिनों के बारे में प्रस्तुत करते हैं।

3. व्याख्या :-

रोज हिल के केन्द्र में नब्बे साल का लखपति सिंह घूमता रहता है। कोट-पतलून, कमीज, टाई, जूता आदि पहुने हुए है। परन्तु पूरे मैले कुचले थे। वह लाठी थामे चलता रहता था। किसी से वह वार्तालाप करता नहीं। पूछे जाने पर 'हाँ' अथवा 'नहीं' मात्र जवाब में कहता है। वह किसी से भीख नहीं माँगता। फेरी वाले दया करके कुछ देते थे, तो वह खा लेता है। वह कहाँ ठहरता था, किसी को पता नहीं। वह नहीं चाहता कि कोई उसे पहचाने। वह कभी आकाश की ओर देखता था।

4. विशेषताएँ :-

लखपति सिंह 'हेरोइन' के जाल में फँस कर चालीस साल जेल काटता है। वह लाचार होकर रोजहिल के केन्द्र में हीन-दीन जीवन बिताता है।

2. वह रुपये लेने से टाल मटोल कर देता था।

× × × ×

बडी-सी तिजोरी स्वर्ण अभूषणों से भर गई और बैंक में करोडों रुपये जमा हो गये।

× × × ×

सुहात्रिनों को रुपयों का चारा फेंक वह अपने जाल में फँसाता था।

1. प्रसंग :-

2. सन्दर्भ :-

लखपति सिंह काम चलाऊ अंग्रेजी और फ्रेंच जानता है। वह अधिक सूद पर और तरह-तरह के बेईमान शर्तें लगा कर पैसा गरीब किसानों को उधार देता है। कर्जदार कर्ज अदा करने आते हैं, तो वह रुपये लेने से टाल-मटोल कर देता है। वह कहता है, "अभी इतनी जल्दी क्या है? जाओ, रुपयों से कोई दूसरा काम करो। बाद में दे देना। उसकी इस टालने की तरीकीब से कर्ज अदायगी की मियाद बीत जाती है। वह तब कानून का सहारा लेकर जमीन को हडप जाता है। उसकी तिजोरी सुवर्ण आभूषणों से भर जाते हैं। फलत: लखपति सिंह का नाम इनें-गिने धनवानों में लग जाता है।"

धनेषणा के साथ-साथ लखपति सिंह में काम-वासना भी उत्पन्न होती है। वह अनुचित रूप से काम-वासना को तृप्त करता रहता है। खेतों में करनेवाली मजदूरिनों पर आक्रमण कर अपनी काम-वांछा तृप्त करता है। सुहागिनों को रुपयों का चारा फेंक कर वह अपने जाल में फँसाता है। अनेक स्त्रियाँ उसके चंगुल में फँस कर लोक-लाज के कारण चुप रहती हैं।

4. विशेषताएँ :-

यहाँ लखपति सिंह के अत्याचारों का विवरण हुआ है।

3. मतदाताओं ने उसकी चीजों और पैसों को लेकर भी उन्हें ओट नहीं दिये।

× × ×

उसके पुत्र बहुत अय्याशी, विलासी और खर्चील हो गये थे। कैसीनों में रात-रात भर जुआ खेलना उनका नित्य-कर्म हो गया था।

× × ×

घुडदौड के दिनों में बढ़-चढ़ कर घोडों पर बाजी लगाना वे अपनी शान समझते थे।

× × ×

लोग उसे देख कर थू-थूकरते थे।

1. प्रसंग :-

2. सन्दर्भ :-

लखपति सिंह पैसा बटोर कर चुनाव जीत जाता है और मंत्री भी बन बैठता है। पुन: चुनाव आते हैं वह चुनाव में हार बैठता है और उसका आर्थिक, सामाजिक तथा नैतिक पतन होता है।

3. व्याख्या :-

लखपति सिंह मंत्री बन कर पैसे के लालच में (जनता) को पूर्णतया भूल जाता है। बेकारी बढ़ कर लोग दाने-दाने के लिए तरसने लगते हैं। देश में भ्रष्टाचार चरमसीमा तक पहुँच जाता है। पुन: चुनाव आता है तो लखपति सिंह पैसा खर्च करता है। लेकिन पैसा और वस्तु संचयन प्राप्त कर भी मतदाता उसे ओह नहीं देते। फलत: वह चुनाव में हार जाता है।

लखपति सिंह का सारा पैसा चुनाव में खर्च हो जाता है। उसके पुत्र भी बेकारी और विलासमय बनते हैं। वे पैसा बेकार करने लगते हैं। जुआ खेलना उनका नित्य-कर्म बन जाता है।

लखपति सिंह को अपना आलीशान मकान भी बेचना पडता है। आर्थिक, सामाजिक तथा नैतिक पतन होकर वह हीन तथा दीन जीवन बिताने लगता है।

लोग उस देख कर थूकने लगते हैं।

4. विशेषताएँ :-

यहाँ लखपति सिंह का आर्थिक, सामाजिक तथा नैतिक पतन व्यक्त हुआ है।

4. ''दादा की बात मत पूछो! उस के कारण हम लोगों को भारी दुख हुआ।''

× × × ×

''पिताजी कहते हैं कि वह नशीली चीजों का धन्धा करता था। पकडा गया उमर कैद की सजा हुई। जेल में सडता होगा। उसने हमें मुँह दिखाने लायक नहीं छोडा।''

1. प्रसंग :-

2. सन्दर्भ :-

उमर कैद की सजा काट कर नब्बे साल का लखपति सिंह अपने परिवार से मिलने जाता है। दस-बारह साल का पोता वार्तालाप के दौरान उक्त वचन कहता है।

3. व्याख्या :-

लखपति सिंह चालीस साल जेल काट कर अपने परिवार से मिलने के लिए जाता है। गेंद का पीछा करते हुए दस-बारह साल का एक लडका वहाँ आता है। बूढ़े को देख कर वह पूछता है। ''यहाँ क्या करते थे?''

''कुछ नहीं !'' लखपति सिंह जवाब देता है। बच्चा उसे कोई भिखारी समझता है। बच्चे के पिता और चाचाओं के बारे में लखपतिसिंह प्रश्न करता है तो लडका समाधान देता है। लखपति सिंह पुन: 'दादा' के बारे में प्रश्न करता है। लडका सीधे कहता है -

''दादा की बात मत पूछो। उसके कारण हम लोगों को भारी दु:ख हुआ।''

लखपति सिंह प्रश्न करता है, ''क्या किया था उसने?'' लडका सीधे उत्तर देता है, ''वह नशीली चीजों के धन्धे में पकडा गया था और उमर कैद की सजा हुई थी। उसी के कारण हम लोगों को मुँह दिखाने लायक नहीं रहे।''

4. विशेषताएँ :-

यहाँ लखपति सिंह का जीवन प्रतिबिंबित होता है। अकार्य करने से व्यक्ति समाज में अपमानित होता है और सरकार की ओर से सजा होती है, अन्त में वह अपने परिवार को भी मुँह दिखाने की योग्यता नहीं रखता। कर्म को भोगना ही पडता है।

प्र.5. 'एक लावारिस की मृत्यु' कहानी का मूल्यांकन कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

'एक लावारिस की मृत्यु' मॉरीशस की कहानी है। कहानीकार वेणीमाधव रामखेलावन हैं।

2. कथावस्तु :-

लखपति सिंह दक्षिण में एक सामान्य गाँव में रहनेवाला एक साधारण व्यक्ति था। वह सपरिवार छोटी-सी झोंपडी में रहता था। बच्चों के कपडे मैले-कुचले रहते थे और नाक से नेटा (Running nose - చీమిడి) चूआ करता था। पत्नी के लिए पहनने के लिए कोई नई साडी नहीं थी। वह छठी कक्षा तक पढ़ा हुआ था और कामचलाऊ (Working) अंग्रेजी और फ्रेंच जानता था। पिता के मरने के बाद उसने बहनों को धोक देकर एक बीधा जमीन को हडप लिया। गाँववालों को वह ज्यादा सूढा पर कर्ज देता था और धोखे से उनकी जायदाद भी हडप लेता था। उसकी तेजोरी स्वर्ण आभूषणों से भर गई थी और बैंक में करोडों रुपये जमा हो गये। समाज में मान-प्रतिष्ठा पाने के लिए वह मंदिर आदि निर्माण के लिए, अनाथालयों को, विद्यालयों को कुछ दान दिया करता था। फलत: समाज में उसकी वाह-वाही होती थी।

धनैषणा (Money Earning) की तुष्टि के साथ लखपति सिंह काम-वासना की तृप्ति भी अनुचित रूप से खूब करता था। उसके खेतों में काम करनेवाली विधवाओं की मजबूरी का वह भरपूर नाजायज (Unjust ful) फायदा उठाता था। सुहागिनों को रूपयों का चारा फेंक कर वह अपने जाल में फँसाता था। स्त्रियाँ उसकी काम-वासना का बरबस शिकार बन कर लोक-लज्जा के डर से चुप रह जाती थीं।

धीरे-धीरे लखपति सिंह का मन राजनीति की ओर मुडा। पैसा बाँट कर उसने टिकट खरीदा। फिर रुपयों से लोगों के वोट खरीदे और निर्वाचित होकर मिनिस्टर बन बैठा। तीन-चार वर्षों में वह बडा पूँजीपति बना।

देश में भ्रष्टाचार चरमसीमा तक पहुँच गया। मन्त्रीगण और सरकारी अधिकारी जनता को दिन-द हाडे लूटते थे और तिजोर भर लेते थे। पुन: चुनाव का समय आया था। लखपति सिंह ने पानी की तरह रुपये बहाये। मत दाताओं ने उसकी चीजें और पैसा लेकर उसे ओह नहीं दिये। फलत: लखपति सिंह चुनाव में हार गया।

लखपति सिंह के पुत्र बहुत अय्यारी, विलासी और खर्चीले हो गये थे। जुआ खेलने में घुडदौड में बाजी लगाने में पैसा बेकार करते थे। धीरे-धीरे लखपति सिंह की जमीन और आलीशान मकान को भी बेचना पडा। अब वे एक साधारण गृह में दिन गुजारने लगे। उसे देख कर थू-थू करते थे।

एक दिन पुराने दोस्त जुम्मन से लखपति सिंह की मुलाकात हुई। जुम्मन के चंगुल में फँस कर वह मुम्बई से दस किलोग्राम हेरोइन लाते-लाते पुलिस के हाथों पकडा गया। फलत: उसे चालीस साल की कैद काटनी पडी। कैद से छुटकारा पाकर वह अपने परिवार के यहाँ गया तो पता चला कि पत्नी चल बसी और पुत्र अपने-अपने धन्धों में लगे हुए थे। उसका पोता गेंद पीछा करते-करते दौड आया। भिखारी जैसे बूढ़े दाढ़ी वाले दादा को वह नहीं जानता था। लखपति सिंह के प्रश्न के जवाब में उसने तिरस्कार पूर्वक कहा, ''दादा की बात मत पूछो। उसके कारण हम लोगों को भारी दु:ख हुआ ..... नशीली चीजों का धन्धा करते वह पकड गया था, उमर-कैद की सजा हुई। उसी के कारण हमारा भी आदर गिर गया।''

लखपति सिंह नब्बे वर्ष की अवस्था में मैले-कुचले कपडों से सफेद दाढ़ी और मूँछों के साथ पागल की तरह घूमता था। फेरीवाले दया कर के कुछ दें तो वह खा लेता था। यातायात केन्द्र में वह एक बस के नीचे आगया था और उसका प्राणान्त हो गया। पुलिस ने 'लावारिस' समझ कर उसके शव को श्मशान में दफना दिया।

3. पात्र तथा चरित्र-चित्रण :-

लखपतिसिंह कथा का प्रधान पात्र है। घूसखोर तथा काम-पिपासी के रूप में उसका चित्रण किया गया है। अधिक सूद पर गरीबों के कर्ज देता था वह और तरह-तरह की शर्तें रख कर उनकी जमीन अपने वश में कर लेता था। नारियों के चरित्र को हडप कर उनका जीवन कलिंकित करता था।

लखपति सिंह राजनीति में आकर मतदाताओं को खरीदता था और गुण्डों की सहायता भी लेता था। चुनाव में हार कर और तिजोरी खाली होकर वह हताश हो जाता है। अंत में लालच में पडकर वह 'हेरोइन' लाते हुए पुलिस के हाथ पकडा जाता है। फलत: चालीस साल जेल काटनी पडती है। अखिर घरवाले भी उसका नाम लेना अपराध समझते हैं। बुढ़ापे में आवरा बन कर बस की दुर्घटना में वह प्राण खो जाता है।

लखपति सिंह के पुत्र अय्यारी, विलासी और खर्चीले थे। पैसे का लालच बताकर हेरोइन के खतरे में लखपति सिंह को फँसाने वाला जुम्मन पाठक के सामने आता है। पैसा लेकर वोट देनेवाले और फिर पैसा लेकर भी चुनाव में हरानेवाले मतदाता भी कहानी में अपना स्थान रखते हैं। ''दादा की बात मत पूछो! उसके कारण हम लोगों को भारी दुख हुआ।'' कह कर यथार्थ विषय प्रकट करनेवाला दस-बारह साल का लडका अपना पात्र निर्वाह करता है।

4. कथोपकथन :-

'एक लावारिस की मृत्यु' कहानी में कथोपकथन नाम मात्र ही हैं। किन्तु वे प्रभावोत्पादक भी है। लखपति सिंह और जुम्मान के बीच वार्तालाप देखिए, एक दम नाटकीय है।

''खतरा है?''

''अरे खतरा क्या .....और खतरा तो आदमी के पग-पग पर है। क्या सडक पर चलना खतरा नहीं है?''

कहानी के अन्त में लखपति सिंह और पोते के बीच का वार्तालाप कथानक और चरित्रचित्रण का चरमांकन लगता है।

''यहाँ क्या करते हो?'' बूढ़े को देख कर लडके ने पूछा।

''कुछ नहीं .... चलते-चलते थक गया हूँ। बचुआ! क्या तुम्हारे पिता घर पर हैं?''

''नहीं, काम पर गये हैं।''

''वह कब आयेंगे?''

''मालूम नहीं।''

''तुम्हारे चाचा लोग तो होंगे?''

''हाँ हैं! एक चाचा इटली चला गया है। एक घुडदौड के घोडों की देखबाल करता है। ''

''और दादा ?''

''दादा की बात मत पूछो। उसके कारण हम लोगों को भारी दु:ख हुआ।''

''क्या किया उसने?''

''पिताजी कहते हैं कि वह नशीली चीजों का धन्धा करता था। पकडा गया। उमर कैद की सजा हुई .... उसने हमें मुँह दिखाने लायक नहीं छोडा।''

5. भाषा - शैली :-

वेणीमाधव रामखेलापन विदेशों में रहने पर भी उनकी कलम से 'एक लावारिस की मृत्यु' कहानी व्यावहारिक खडीबोली की व्यवस्थित भाषा में लिखी गयी है। भाषा मुहावरेदार होकर शैली में गति

है। 'नब्बे वर्ष का रहा होगा', 'संतुलन बनाये रखना', 'मियाद पूरी होना', 'टाल-मटोल कर देना' , 'बेकरी बढ़ जाना', 'कामुकता की तृप्ति होना', 'पग-पग पर खतरा होना' आदि मुहावरों का प्रयोग हुआ है। कहानी आद्यन्त रोचक है।

6. वातावरण :-

कहानी का प्रारम्भ प्रथमत: नब्बे वर्ष के लखपति सिंह के दीन जीवन से होता है। पश्चात उसका प्रलोभय जीवन, लालच, अक्रम धनार्जन, चुनाव में धन देकर मतदाताओं को खरीदना, मन्त्री-बनने के पश्चात पुन: धन का लालच, दूसरी बार चुनाव में हार बैठना, हताश होकर जुम्मन के चंगुल में फसकर चालीस साल जेल काटना आदि आधुनिक काल में हर देश चलते रहने वाला वातावरण है। चुनाव में हारने के कारण लोग लखपति सिंह को देख कर थू-थू करना आजकल के चुनाव में हारे हुए राजनीतिज्ञों के प्रति जनता का तिरस्कार सूचित करता है।

लखपति सिंह के पुत्र अय्यारी, विलासी और खर्चीले हुए थे। घुडदौड में वे भाग लेते थे। राजनीतिज्ञों की दमन नीति के कारण देश में भ्रष्टाचार फैल गया था। लखपति सिंह काम वासना की तृप्ति के लिए अनुचित रूप का मार्ग लेता है। विविध नारियों को वह रूपयों का चारा फेंक कर अपने जाल में फँसाता है। कुछ स्त्रियाँ उसकी वासना का बरबस शिकार बन कर लोक-लज्जा के डर से चुप रह जाती हैं।

कहानी में आजकल की दुनिया में धनवान, राजनीतिज्ञ आदि के विविध अत्याचारों का वातावरण प्रकृति हुआ है।

7. शीर्षक :-

लखपति सिंह आखिर एक अनाथ-जीवन बिताता है। अपने ही परिवार में उसके प्रति घोर अनादर तथा अपमान की भावना रहती है। अत: बिना कुछ बताये वापस चला जाता है। नब्बे साल की उम्र में बस की दुर्घटना में उस की मृत्यु होती है। उस के दाह-संस्कार के लिए भी कोई आते नहीं। एक 'लावारिस' के रूप में पुलिस उसके शव का दाह संस्कार करती है।

8. उद्‌देश्य :-

भगवान ने हम को 'मानव का जन्म' दिया है और हमें उसे निभाना है। लालच में आकर मानव सब कुछ कमा सकता है। लेकिन समय बहुत प्रभावशाली है - 'कालोहि दुरितक्रमः' - काल का उल्लंघन कोई कर नहीं सकता। इसी उद्देश्य पर कहानी की रचना हुई है।

जीवन में कर्म का अनुभव करना ही है। 'कर्म गति टारे नहिं टरै' तुलसी का वचन 'एक लावारिस की मृत्यु' कहानी में खरी निखरी है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

6. लक्ष्मी का देश (कहानी-सूरीनाम से)

- सूर्यप्रकाश बीरे

सप्रसंग व्याख्या :-

1. वह देश जहाँ सूर्य हमेशा प्रकाश देता रहता है।

× × × ×

शहर की ओर बढ़ते हुए रास्ते में टूटी हुई बोतलें छितरे हुए कागज के टुकडे, पुरानी टूटी-फूटी गाडियाँ, पुराने अखबार, मरे हुए कुत्ते। अशांति देख कर चकित हो गया।

1. प्रसंग :-

यह उद्धरण सूर्यप्रकाश बीरे कृत 'लक्ष्मी का देश' नामक कहानी से लिया गया है।

2. सन्दर्भ :-

अशांति सूरीलक्ष नगर में प्रवेश करके उस नगर को देखता है। कहानीकार सूरीलक्ष नगर का वर्णन करते हैं।

3. व्याख्या :-

जहाज धीरे-धीरे आगे बढ़ता है। समुद्र के किनारे बसे सूरीलक्ष शहर के एक छोर पर फलों से लदे हुए आम के पेड, रंग-बिरंगे आली शान ऊँचे-ऊँचे भवन, किस्म-किस्म के लोग। एक लंबी यात्रा के बाद सूरीलक्ष देश का दर्शन! उस देश में सदा सूर्यप्रकाश देता रहता है।

जहाज रुकता है तो अशांति जल्दी ही जहाज से नीचे उतर जाता है। शहर की ओर बढ़ते हुए अशांति देखता है - टूटी हुई बोतलें, छितरे हुए कागज के टुकडे, पुरानी टूटी-फूटी गाडियाँ पुराने अखबार, मरे हुए कुत्ते आदि। उन सब चीजों को देख कर अशांति चकित हो जाता है। जहाँ से वह आया था नदी पुर में धनी नहीं है। लेकिन वह नगर स्वच्छ, शान्त और सहज है।

4. विशेषताएँ :-

सूरीलक्ष नगर की बिगडी हुई दशा का विवरण हुआ है।

2. ''वस्तुतः वह रसायन विद्या की बात है; वह मक्खन अग्नि के द्वारा वायु को शुद्ध करता है। तुम स्वयं उसकी सुगन्ध सूँघ सकते हो और यह तो वेद में लिखा है।''

× × × ×

2. मैं समझता हूँ कि तुम्हारे पिताजी ने यज्ञ के सम्बन्ध में बतलाया है। लेकिन भगवान नहीं है। अग्नि तो साधारण रूप से एक वस्तु है। वह बिलकुल पवित्र है। इस लिए यज्ञ वायु शुद्धि के लिए होता है। अग्नि में घी और भात डालते हैं। लेकिन वह वायु को स्वच्छ करने के लिए है।

1. प्रसंग :-

यह उद्धरण सूर्यप्रसाद बीरे कृत 'लक्ष्मी का देश नामक कहानी से दिया गया है।'

2. सन्दर्भ :-

अशांति कारला को यज्ञ की विशेषता समझता है।

3. व्याख्या :-

फादर कोर्तजिख्त यज्ञ की कटु आलोचना करता है। उस पर फादर कोर्तजिख्त की पुत्री कारला को अशांति यज्ञ का विवरिण देता है।

यज्ञ एक पवित्र कार्य है। नदीपुर में यज्ञ का महान महत्त्व है। अग्नि में घी, अन्न और विविध पदार्थ डालने से उस सगन्ध से वायु स्वच्छ तथा निर्मल होता है। वातावरण प्रदूषण दूर होता है। अशांति कारला को यज्ञ की वायु 'सुगंध' को सूंघने की सलाह भी देता है। पंडित लोग यज्ञ कर्म का निर्वाह करते हैं।

यह वेद-विदित कर्म है।

4. विशेषताएँ :-

1. यज्ञ वेद विदित कर्म बताया गया है।
2. यज्ञ के कारण वातावरण प्रदूषण दूर होता है।

3. नहीं कोई धन्यवाद नहीं। सेना है लोगों की सहायता के लिए

1. प्रसंग :-

यह उद्धरण सूर्यप्रसाद बीरे से रचित 'लक्ष्मी का देश' नामक कहानी से लिया गया है।

2. सन्दर्भ :-

मुदर कोर्तजिख्त अपने पति फादर कोर्तजिख्त से ये वचन कहती है।

3. व्याख्या :-

तीन मजदूर कारला पर हमला कर के उसे अपने पंजे में रख लेता है। फादर कोर्तजिख्त घबराने लगता है। मदर कोर्तजिख्त अपनी लडकी की रक्षा के बारे में सोचने लगती है। कुछ समय के पश्चात कारला को मजदूरों के पंज से बचाने के लिए सेना इकट्ठा होती है। तब मदर कोर्तजिख्त से फादर कोर्तजिख्त सेना की प्रशंसा में कहता है, सेना लोगों की सहायता के लिए है। धन्यवाद की आवश्यकता नहीं।

4. विशेषताएँ :-

सेना के कर्तव्य की प्रशंसा हुई है।

प्र.6. 'लक्ष्मी का देश' कहानी की व्याख्या कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

सूर्यप्रसाद बीरे कृत 'लक्ष्मी का देश' कहानी काल्पनिक तथा तिलस्मी-सी लगती है। यह सूरीनाम देश की कहानी है।

2. कथावस्तु :-

नदी के किनारे 'नदीपुर' नामक छोटा-सा गाँव बसा हुआ था। नदी में बाढ़ के कारण कभी समुंदर-सा पानी बह जाता है। धान के खेत पानी में डूब कर सड जाते हैं और फसल बरबाद हो जाती है। फलतः ग्रामवासियों को भूखे रहना पडता है। वे दुनिया के लोगों की। दया-करुणा तथा सहायता पर जीवन बिताते रहते हैं।

एक बुधवार के दिन 'थंकीडाला' नामक एक ट्रक ड्राइवर बहुत-सा चावल लाकर गाँववालों को दान के रूप में देता है। वह अपने को 'सूरीलक्ष' देशवासी बताता है और वह लक्ष्मी का देश है। अशान्ति नामक एक युवक और उसके पिता लक्ष्मी का देश देखने के लिए जहाज पर चल पडते हैं। जहाज की लंबी यात्रा में अशांति के पिता घबराता है और सख्त बीमारी के कारण वह मर जाता है। धीरे-धीरे बढ़कर जहाज समुद्र के किनारे सूरीलक्ष शहर के एक किनारे पहुँचता है। शहर की ओर बढ़ते-बढ़ते, पता चलता है कि थंकीडाला और फ़ादर कोर्तजिख्तन मनुष्य का माँस खातें हैं। इसीलिए अशान्ति को

छितरे हुए कागज के टुकडे, पुरानी टूटी-फूटी गाडियाँ, पुराने अखबार और मरे हुए कुत्ते दिखाई देते हैं। वह देख कर अशान्ति चकित हो जाता है।

अशान्ति लक्ष्मी का देश देखने आता है और उलझन में पड जाता है। आलीशान ऊँचे-ऊँचे भवन और किस्म-किस्म के लोग होते हैं। अधिकांश शराब के नशे में रहते हैं। शाम होने पर अशान्ति एक होटल मं जाता है और वहाँ मिश्र और केशी-से परिचय होता है। वे बताते हैं कि वे वहाँ लूटे जाते हैं। वे लोग गरीबी को पिनारन और लूटे जाने को औतबइत कहते हैं। अशांति 'थंकीडाला' के बारे में पूछ ताछ करता हैं। गुजरान के लिए अशानिन्त भी उन लोगों के साथ काम में लग जाता है। मिश्र और केशी के वार्तालाप से अशान्ति को रास्तो में टूटी हुई बोतलें, चेतावनी दी जाती है कि मन्दिर की ओर न जाना।

फादर कोर्तजिखख्त और कारला के बीच के वार्तालाप में कोर्तजिख्त बताता है, ''ईख के मजदूर बुरे हैं और वे अग्नि को मक्खन और शरबत अर्जित करके पूजते है। अग्नि पिशाच (शैतान, असुर, दानव) है। असुर की पूजा करना बडा ही पाप है। वे शैतान को पूजते हैं और एक दूसरे को अग्नि में आहुति देते हैं। वह एक नारकीय पीडा है।'' फादर कोर्तजिख्त और बताता है कि उन नास्तिकों के बीच रहना उसके लिए खतरनाक है।

सुपारन को घायल कर कैद में रखा जाता है। फादर कोर्तजिख्त की कारवाई को उसकी पत्नी मदर कोर्तजिख्त धिक्कारती है। कारला को बताया जाता है कि पिण्डत ने उसके पिता कोर्तजिख्त को मनुष्य का मांस दिया गया है। लेकिन कारला सब को समझाती है कि वह एक साधारण ट्रकडा पाव रोटी है।

अशान्ति कारला को यज्ञ के बारे में समझाता है - वस्तुतः यज्ञ में रसायन विद्या की बात होती है। वह मक्खन अग्नि के द्वारा वायु को शुद्ध करता है। यह विषय वेदों में बताया गया है।

ईख के मजदूरलोग यज्ञ करने जाते हैं। सैनिक भी उनका साथ देते हैं। सुपरन को छुटकारा दिलाने का प्रयत्न किया जाता है। मजदूर कारला पर हमला करते है। फिर शांति का वातावरण छा जाता हैं। सैनिक कारला को मजदूरों के पंजे से बचाते हैं।

अशान्ति, मिश्र, केशी और कारला जलकपाट के पास बैठ कर बातचीत करते रहते हैं।

3. पात्र तथा चरित्र-चित्रण :-

कहानी में नदीपुर के लोग, अशान्ति, अशांति के पिता, थंकीवाला, शराबी, मिश्र, केशी, फादर कोर्तजिख्त, मदर कोर्तजिख्त, कारला, सुपारन, ईख के मजदूर, सैनिक आदि पात्र आते हैं।

अशान्ति और उसके पिता थंकी डाला की बातों में आकर 'लक्ष्मी का देश' के लिए निकलते है। बीमारी के कारण जहाज के सफर में अशांति के पिता का स्वर्गवास हो जाता है। वहाँ अशान्त के लिए तरह-तरह के अनुभवों का सामना करना पडता है। मिश्र केशी का सहयोग उसे सदा प्राप्त होता रहता है। फादर कोर्तजिख्त के बारे में नरमांस-भक्षक की किंवदंती फैलती है और वह सुपारन को ध्यान भी करता है। कारला ईख के जाल में फँस जाती है। कारला और सुपारन की विमुक्ति होती है।

फादर कोर्तजिख्त यज्ञों के प्रति घृणा रखता है। अशांति, कारला को यज्ञों की महत्ता समझाता है। अन्त में ईख के मजदूर और सैनिकों का समन्वय होता है।

4. कथोपकथन :-

'लक्ष्मी का देश' कहानी में कथोपकथनों का सव्य-क्रम नहीं है। अधिकांश वार्तालाप अपसव्य क्रम में चलते हैं। कथोपकथन कभी कथा को अग्रसर करते हैं और कहीं पाठक को उलझन में डालते हैं।

''मैं तो सिर्फ ड्राइवर हूँ''

''मेरे देश का नाम सूरीलक्ष है।''

''यहाँ से आगे तीन गाँव है!'' बस इन तीन गाँवों के बाद।

× × ×

''ऐ लडके, तुम बोल नहीं सकते? शायद तुम्हारा गला सूख गया हो। इधर आओ। लो यह दारु पिओ, तो थोडा पी लो।''

× × ×

''हमारे घर को ही देखो - एक लकडी का 'बिखाड'। हम यहाँ पिनारिन करते (गरीबी झेलते) हैं। हम सब'' चीनी कारखाने द्वारा खूब औतखबइत होते (लूट जाते) हैं।

× × ×

''पूजा में वह मनुष्य का मांस खाता है।''

इस प्रकार कथोपकथन 'नाटकीय' विधान में चलते हैं।

5. भाषा-शैली :-

'लक्ष्मी का देश' कहानी की भाषा परिनिष्ठित खडी बोली है। उर्दू-मिश्रित व्यवहारिक शैली में कहानी ढ़लती है। 'हकीकत, खत्महोना, हमला करना, हथियार लेना, विपरीत कहना, फुसलाना, शरबत अर्पित करना, शैतान से मिलना, खतरनाक पागल, पीठ में दर्द होना, सूखी मिट्टी और घास की कुटिया, पिनारन करना, मेहनत करना' आदि लोकोक्तियों तथा मुहावरों का प्रयोग हुआ है।

6. वातावरण :-

'लक्ष्मी का देश' कहानी का वातावरण एक-दम चित्र-विचित्र-सा तिलस्मी-सा लगता है। नदी के किनारे गाँव बसना, 'थंकीडाला' का वहाँ आकर धान्य बाँटना, फिर वह अपने लक्ष्मी के देश के बारे में बताना अशांति अपने पिता के साथ जहाज में निल पडना, पिता का बीमार होकर मर जाना, सूरी नाम देश की अव्यवस्थित परिस्थिति, मानव-मांस भक्षण के समाचार की व्याप्ति होना, मजदूर और सेना के बीच भिडाव, शराब का वातावरण - ये सब व्यवस्थित रूप में चित्रित नहीं किये गये हैं। वातावरण के अवलोकन में पाठक को असुविधा होती है।

7. शीर्षक :-

'लक्ष्मी का देश' शीर्षक में व्यंग्य झलकता है। 'सूरी लक्ष' देश तो नाम के लिए 'लक्ष्मी का देश' है। किन्तु वहाँ कहीं भी धन, सुख-सुविधाएँ, शान्ति, सुशासन, राजनीतिक-धार्मिक-आर्थिक और सामाजिक स्थिरता लेश मात्र भी नहीं। कहानीकार ने वैसे ही 'लक्ष्मी का देश' शीर्षक रख दिया है।

8. उद्देश्य :-

'लक्ष्मी का देश' कहानी का उद्देश्य पाठक के दिमाग में ठीक नहीं बैठता। कहानी सूत्र-बद्ध नहीं। कहानी में रोचकता नाम-मात्र भी नहीं है। ऐसा लगता है कहानीकार को साहित्यकार बनना है। अत: अपने विधान में उन्होंने कहानी रची। कथाक्रम, घटनाएँ, पात्र-क्रम आदि में एक-सूत्रता नहीं।

कहानी की रचना में कहानीकार का उद्देश्य स्पष्ट नहीं दीखता।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

(d) Name of the book :

विश्व हिन्दी सम्मेलन, न्यूयार्क, 2007

राष्ट्रभाषा से विश्वभाषा - कुछ स्मृति रेखाएँ

- प्रो.जी.गोपीनाथन

प्र.1. 'राष्ट्रभाषा से विश्वभाषा - कुछ स्मृति रेखाएँ' के सम्बन्ध में आचार्य जी. गोपीनाथन के विचार क्या हैं?

1. प्रस्तावना :-

राष्ट्रभाषा हिन्दी दक्षिण के लोगों के लिए राष्ट्रीय अस्मिता एवं स्वदेशी भावना की प्रतीक है। गाँधीजी से ही यह विरासत दक्षिण को प्राप्त हुई है। राष्ट्रभाषा की परिकल्पना केशवचन्द्र सेन 1875 में ही प्रस्तुत कर चुके थे। गुजरात के स्वामी दयानन्द भी उनसे प्रेरित होकर हिन्दी को सामाजिक परिवर्तन के संदेशों का माध्यम बना चुका थे। किन्तु गाँधीजी द्वारा 1918 में 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' की स्थापना करने के कारण उनसे प्रेरित होकर ही स्वतन्त्रता सेनानी हिन्दी प्रचारक दक्षिण के गाँव - गाँव में एक संस्था के रूप में हिन्दी का प्रचार करने लगे। फलत: सभा ने संगठित रूप से हिन्दी प्रचार का कार्य दक्षिण के चारों प्रान्तों में शुरू किया। साक्षरता में अग्रणी होने के कारण केरल के लोगों ने मनोयोग से हिन्दी सीखना - लिखना आरम्भ किया। सैनिक सेवा, तीर्थयात्रा, सांस्कृतिक आदान-प्रदान आदि के कारण हिन्दी पहले से यहाँ लोकप्रिय थी। हिन्दी के प्रचारकों एवं कांग्रेस के कार्यकर्ताओं के प्रयास से सन् 1934 से केरल के स्कूलों में भी हिन्दी की पढ़ाई शुरू हुई। सन् 1940 के करीब केरल के कॉलेजों में हिन्दी की पढ़ाई शुरू हुई। राष्ट्रीय आन्दोलन एवं गाँधीजी के व्यक्तित्व के प्रभाव से हिन्दी सीखने के लिए बडे उत्साह से लोग आ रहे थे। केरल के कोने-कोने में अनेक हिन्दी विद्यालय चल रहे थे और राजनीतिक कार्यकर्ता जेलों में हिन्दी का प्रचार-प्रसार कर रहे थे। कैदी लोग भी हिन्दी बडी दिलचस्पी से सीख रहे थे। द्वितीय विश्वयुद्ध चल रहा था और भारत को आजादी मिलने की कुछ आशाएँ भी बंध रही थीं।

2. स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात हिन्दी :-

भारत को स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात 'भारत माता की जय', 'महात्मा गाँधी की जय' नारों के साथ गाँवों के लोग तिरंगा झण्डा लेकर आनन्दोत्सव मचाने लगे। लेखक के चाचा श्री कुट्टनजी स्वयं स्वतंत्रता सेनानी थे। हिन्दी प्रचारक श्री बालकृष्णन दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की परीक्षाओं के

लिए छात्रों को पढ़ा रहे थे। लेखक आचार्य गोपीनाथन भी उनके छात्र थे। हिन्दी प्रचारक गाँधी के अनुयायी होने के कारण खादी के ही वस्त्र पहनते थे। उनका विद्यालय गुरुकुल जैसा ही था। हिन्दी पढ़ने के साथ राष्ट्रीय राष्ट्रीय भावना से प्रेरित होकर और राष्ट्रीय अस्मिता की प्रतीक मानकर पढ़ाते थे। वे लोग एक व्यापक राष्ट्रीय लक्ष्य को लेकर हिन्दी का अध्यापन करा रहे थे। हिन्दी का अध्ययन आदर का विषय माना जाता था।

3. आचार्य गोपीनाथन और हिन्दी :-

आचार्य गोपीनाथन कॉलेज में ऐच्छिक विषय के रूप में हिन्दी विषय लिया था। कॉलेज के अध्यापकों में अधिकांश हिन्दी प्रचार के क्षेत्र से ही आये थे। लेखक आचार्य गोपीनाथन अलीगढ़ विश्व विद्यालय में हिन्दी स्नातकोत्तर अध्ययन के लिए गये। वे वहाँ सन् 1962 से 1968 तक रहे। कुछ समय हिन्दीतर भाषी एवं विदेशी छात्रों को हिन्दी पढ़ाने का सुयोग भी उनको वहाँ हुआ। खाडी के देश, ईरान और अफ्रीका से छात्र वहाँ आते थे और उनको हिन्दी सीखने की भी ललक रहती थी। हिन्दी फिल्मी गीत आदि उन देशों में भी लोकप्रिय है, वह भी उन छात्रों से पता चला। 1964 – 65 के दौरान दक्षिण का हिन्दी विरोधी आन्दोलन चला, उसका प्रभाव तमिलनाडु को छोडकर दक्षिण के अन्य प्रान्तों में उतना नहीं रहा। फिर भी हिन्दी के लिए आजादी की लडाई के दिनों में जो उत्साह था, उसमें थोडा-बहुत अन्तर तो पडा। राजनीतिक उथल-पुथल के फल स्वरूप केरल में 5वीं से 12वीं कक्षा तक हिन्दी अनिवार्य बनी रही कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में भी हिन्दी के लिए अच्छा वातावरण बना रहा।

सन् 1971 में मलाबार तट के कालिकट में हिन्दी विभाग बना तो आचाय गोपीनाथन वहाँ अध्यापक बन कर गये। अरब लोगों से प्राचीन सम्बन्ध के कारण मलाबार तट पर अरबी शिक्षा का अच्छा माहौल रहा है। खाडी के देशों, दक्कन और मुंबई आदि से निरन्तर संपर्क के कारण हिन्दी के लिए भी मलाबार में अच्छा वातावरण रहा है। सन् 1975 में नागपुर में जो विश्व हिन्दी सम्मेलन हुआ, उसके साथ ही हिन्दी से जुडे हुए सभी लोगों का ध्यान इस तथ्य की ओर गया कि हिन्दी अब केवल राष्ट्रभाषा ही नहीं, बल्कि एक विश्वभाषा भी है। श्री अनंत गोपाल शेवडे, मधुकर राव चौधरी, काका कालेलकर आदि ने विश्व हिन्दी सम्मेलन की परिकल्पना की थी। उस से पहले गार्सा द तासी, ग्रियर्सन आदि विदेशी विद्वानों के बारे में तो पढ़ते थे, भारत वंशियों और उनके द्वारा लिखित हिन्दी साहित्य आदि पर प्रथम बार सारे भारत का ध्यान गया। धीरे-धीरे यह धारणा भी विकसित हुई कि अब हिन्दी केवल हिन्दी प्रदेश की और संपूर्ण विश्व की भाषा है। विश्व भर में हिन्दी के भविष्य को लेकर कुछ आशाएँ भी जगीं, हिन्दी के प्रबल समर्थकों ने संयुक्त राष्ट्र में उसे लाने की माँग भी की। इन प्रबल समर्थकों में अनेक विदेशी हिन्दी विद्वान भी हैं, जो सच्चे दिल से हिन्दी की प्रगति चाहते हैं।

4. विश्वभाषा के रूप में हिन्दी :-

हिन्दी को विश्वभाषा के रूप में विकसित करने में सब से अधिक समर्थन करनेवाला देश रूस था। सन् 1980 में मास्को और लेनिनग्राद (जो अब सेंट पीटर्सबर्ग कहलाता है।) जाने का अवसर मिला। रूसी विद्वानों - बारालिकोव, चेलिशेव, बालिन आदि का हिन्दी के प्रति समर्पण और अनुराग ने लेखक आचाय गोपीनाथन को आकर्षित किया। तत्कालीन सोवियत संघ के सभी प्रदेशों के विश्वविद्यालयों में विशेष कर एशियाई प्रदेश, उब्जेकिस्तान, किरगीजस्तान आदि का हिन्दी प्रेम तो विख्यात है। हिन्दी साहित्य, हिन्दी फिल्मी गीत आदि की लोक प्रियता के कारण हिन्दी भारत - रूस मैत्री का प्रबल माध्यम बनी। लगभग यही स्थिति चेकोस्लोवाकिया, पोलैंड, हंगरी, पूर्व जर्मनी आदि समाजवादी देशों की रही। समाजवाद के अन्तिम दौर में 1983 - 84 में पोलैण्ड के वार्सा विश्व विद्यालय में लेखक अतिथि अध्यापक रहे। उनके लिए आचार्य ब्रिस्की का भारत प्रेम एक विशिष्ट अनुभव था। उस समय वहाँ हिन्दी के विविध- विद्वान-विदुषी मिले। लेखक की कुछ समय की छात्रा दनूता स्ताषिका हिन्दी की प्रोफेसर बनकर विख्यात हुई। चेकोस्लोवाकिया के ओदोलन समेकाल, विन्सन्ज पोरिज का आदि विद्वानों के भी संपर्क में रहा। ओदोलन स्मेकल ने साबित किया कि चेक लोग हिन्दी में श्रेष्ठ कविता भी लिख सकते हैं। भारत वंशी बहुल हॉलन्त से भी अंतरंग संबंध रहा। हालन्त ने ही हिन्दी के वैज्ञानिक अध्यायन की यूरोप में नींव डाली थी। एक समय में वहाँ उट्रेक्ट, लाइडन, एमस्टर डम, आदि सभी विश्वविद्यालयों में हिन्दी की पढ़ाई होती थी। डॉ. मोहन कांत गौतम, डॉ. दामस्टेग्ट आदि विद्वानों का विशिष्ट योगदान हिन्दी के लिए रहा है।

हॉलन्त के विश्वविद्यालयों में आगे हिन्दी अध्ययन का क्या रूप होगा, कुछ कह नहीं सकते। लेकिन भारतवंशी लोग जो सूरीनाम से आये हैं, उनके लिए सांस्कृतिक अस्मिता की प्रतिक है। यू०के० के भारत वंशियों की स्थिति भी लगभग यही है। लंदन, कैंब्रिज आदि में हिन्दी के लिए छात्रों की कमी चिंताजनक है। लेकिन अनौपचारिक रूप से हिन्दी के अध्ययन- अध्यापन, साहित्य लेखन और भाषायी संस्कृति को बनाये रखने के लिए वहाँ के हिन्दी लेखक और विद्वान संघर्षरत हैं। लेखक लंदन के विश्व हिन्दी सम्मेलन में गये थे, यह सम्मेलन पर्यटन और मिलन-गोष्ठियों से बढ़कर विश्व में हिन्दी की प्रतिष्ठा के लिए कुछ कर सके, ऐसा कहना तो मुश्किल है। अंग्रेजी के वर्चस्व के बीच हिन्दी की विकासमान स्थिति पर थोडा-बहुत प्रकाश पड सका, यही इसकी उपलब्धि रही। यूरोप के देशों में जर्मनी, इटली आदि में भी हिन्दी एक लोकप्रिय भाषा है। फिनलैंड में तीन वर्ष पढ़ाने का अवसर भी लेखक को मिला, पूरे स्कैंडिनेविया में भारत एवं हिन्दी के प्रति गहन अनुराग है। हेलसिंकी के बर्तिल तिकानेन जैसे विद्वानों से हिन्दी को काफी आशाएँ हैं।

दक्षिण अमेरिका में भारत वंशी बहुत सूरीनाम, त्रिनिदाद, गुवाना आदि में हिन्दी के लिए ठीक ही वातावरण है। अन्य दक्षिणी अमेरिकी देशों में भी इसका अध्ययन प्रारम्भ हुआ। 2003 अप्रैल में लेखक आचार्य गोपीनाथन ने कालिकट विश्वविद्यालय से अवकाश प्राप्त किया। उसी साल अक्तूबर में उनको राष्ट्रपति द्वारा महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय के कुलपति नियुक्त किये गये। ऑस्ट्रेलिया और फिजी की हाल ही की यात्राओं भी हिन्दी जाननेवाले लोगों की तादाद बहुत बडी है। हिन्दी के अध्ययन के लिए इच्छुक छात्र भी अधिक हैं। श्रीलंका में भारत और हिन्दी के प्रति काफी आत्मीयता है। एशिया के देशों में हिन्दी के लिए जो सद्भावना है, उसको यदि विकसित किया जाये तो एशियाई भाषाओं और हिन्दी का सम्बन्ध अत्यन्त सुदृढ़ बन सकता है। मॉरीशस और भारत के सम्बन्धों को सुदृढ़ बनाने में हिन्दी की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। मॉरीशस के हिन्दी साहित्यकारों के कारण हिन्दी का साहित्य सचमुच विश्व साहित्य बन गया है। फिजी जैसे छोटे देश में भी हिन्दी का श्रेष्ठ कथा साहित्य, कविता और विचार- प्रदान साहित्य का निर्माण हुआ है। हाल ही में दिवंगत फिजी के विवेकानन्द शर्मा का योगदान हिन्दी भाषा और साहित्य के लिए अमूल्य है। विश्व भाषा के रूप में हिन्दी के भविष्य पर सोचने पर लगता है कि भूमंडलीकरण के नये दौर में भारत का जो भविष्य होगा, हिन्दी का भी वैसा ही होगा। भूमण्डलीकरण की नई स्थितियाँ एक तो जनसंचार एवं प्राद्यौगिकी के विकास के कारण पैदा हुई हैं। जनसंचार में हिन्दी आज दुनिया की महत्त्वपूर्ण भाषा के रूप में उभर रही है। मस्कबा, चीन, जर्मनी, बी.बी.सी., अमेरिका आदि के दूरदर्शन एवं आकाशवाणी में हिन्दी छा गई है। इसके आलावा भारतवंशी बहुत देशों में जनसंचार, विशेषकर दृश्य एवं श्रव्य माध्यमों में हिन्दी का प्रभुत्व है। विश्व में सब से अधिक सिनेमा का निर्माण करने वाला बॉलीवुड हिन्दी की व्यापक संप्रेषण क्षमता से ही लाभ उठा रहा है। मुद्रित माध्यम के रूप में भी हिन्दी समाचार पत्रों की संख्या अन्य भारतीय भाषाओं से और अंग्रेजी से भी आगे है। उपनिवेशवादी देश अब भी अपनी भाषाओं कही जनसंचार में प्रभुत्व चाहते हैं। भारतवंशियों के कारण हिन्दी फिल्मों का विश्व बाजार भी खुल रहा है, मीडिया के क्षेत्र में हिन्दी एक अग्र भाषा है।

5. प्रौद्योगिकी भाषा के रूप में हिन्दी :-

विश्वभाषा हिन्दी के लिए आवश्यक है कि उस में ज्ञान - विज्ञान की मौलिक सामग्री तैयार हो। लेकिन यह कार्य भारतीय वैज्ञानिकों एवं विचारकों के सहयोग से ही संभव है। इस तरह का ज्ञान शीघ्र संपन्न करने के लिए हिन्दी में अन्य भाषाओं से यंत्रानुवाद की प्रक्रिया को तीव्र बनाना होगा। महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय में अनुवाद, प्रौद्योगिकी, भाषा जैसे विषयों को पहली बार

लाने का यही प्रमुख उद्देश्य रहा है। प्रकाशन के क्षेत्र में जैसे हिन्दी एक सह राजभाषा के रूप में विकसित हो रही है, उसी तरह प्रौद्योगिकी क्षेत्र में विशेषकर सूचना - प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिन्दी एक सह-प्रौद्यौगिकी भाषा के रूप में विकसित होने की सम्भावनाएँ रखती हैं। महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय में 'हिन्दी सूचना विश्वकोश' परियोजना प्रारम्भ करने के पीछे भी यह उद्देश्य रहा है। इस क्षेत्र में एक सामूहिक प्रयास आवश्यक है जिस से हिन्दी सम्बन्धी प्रौद्योगिकी अनुसंधान कार्यों को समायोजित कर सकें, बाजार की भाषा के रूप में हिन्दी पहले से प्रतिष्ठित है और 'बाजार हिन्दुस्तानी' की चर्चा ग्रियर्सन के समय से सभी वैज्ञानिक करते आ रहे हैं। प्रौद्योगिकी प्रशासन व्यापार प्रबन्धन के क्षेत्र में हिन्दी को लाने में कोई संकोच नहीं करना चाहिए। महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय विश्व विद्यालय में हिन्दी के साहित्यकार और कुछ हिन्दी विद्वान हिन्दी की इन नई भूमिकाओं को नये-नये क्षेत्रों से जोडने का प्रयत्न कर रहे हैं जिससे हिन्दी सच्चे अर्थ में विश्वभाषा बन सकेगी।

6. उपसंहार :-

भारत की संस्कृति अति प्राचीन है। यह संस्कृति विज्ञान, शास्त्र, दर्शन, कला और अध्यात्म विज्ञान के योग से मिली है। भक्ति, अध्यात्मिकता, संतों का मानवतावाद आदि को जन-जन तक पहुँचाने की अपूर्व क्षमता हिन्दी में है। नई प्रौद्योगिकी और ज्ञान-विज्ञान को भी वहन करने में उसे सक्षम बनाना हिन्दी के कर्णधारों का दायित्व है। गाँधीजी के बाद प्रयोजन मूलक हिन्दी के पुरोधा के रूप में मोदूरि सत्यनारायण उभरे थे। हिन्दी के माध्यम से प्रबन्धन और प्रौद्योगिकी को विकसित करने के लिए विश्व के सारे सुधी जनों को एकजुट हो कर प्रयास करना चाहिए। शिक्षा की कमी तथा आत्मविश्वास का अभाव के कारण हिन्दी प्रदेश के शिक्षित जनसमूह और साहित्यकार भी कभी-कभी हिन्दी की क्षमताओं के प्रति शंकित से लगते हैं। शिक्षाओं के आगे बढ़ते समय प्रथम दशा में कुछ प्रतिरोध होना स्वाभाविक हैं।

विश्व हिन्दी के कार्यकर्ताओं को अपना भगीरथ प्रयास करना चाहिए और दृढ़ संकल्प के साथ आगे बढ़ना चाहिए। प्राचीनता तथा आधुनिकता के समन्वय के लिए हिन्दी को हमें माध्यम बनाना चाहिए। उसके लिए ठोस योजनाओं को साकार बनाने की आवश्यकता है। विश्व जनमत आज इसी दिशा में है। सही आंकडे देकर अनेक विद्वान दृष्टान्त कर चुके हैं कि हिन्दी बोलनेवालों की संख्या की दृष्टि से विश्व की प्रथम भाषा बन गई है। यह अटल सत्य है, हिन्दी बिना रुकावट के प्रगति - पथ पर चलेगी और चलती रहेगी।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

❖ ❖ ❖

Name of the lesson

विश्व सम्मेलन का अवदान

- डॉ. कृष्ण कुमार

प्र.2. 'विश्व सम्मेलन का अवदान' लेख में डॉ. कृष्ण कुमार के विचार क्या हैं, प्रस्तुत कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

भारतीयों की सार्वभौमिक अखंडता एवं एकता को ध्यान में रखते हुए अपनी एक सुनियोजित पहचान के लिए सबको भावात्मकता के एक सूत्र में पिरोने के उद्देश्य से 1936 में राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने वर्धा में ''राष्ट्रभाषा प्रचार समिति'' की स्थापना की थी। भारतीयता की पहचान के लिए आर्य भाषा हिन्दी ही राष्ट्रभाषा बनने की क्षमता रखती है। गाँधी जी ने इस तर्क की पूर्ण विवेचन भी की थी। हिंदीतर भाषाओं को हिन्दी से पूर्णतया जोडने के पावन विचारों से ही उन्होंने दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना चेन्नई में की थी। हिन्दी के प्रसार- प्रचार, हिन्दी विद्वानों को एक स्थान पर एकत्रित करने एवं इसको संयुक्त राष्ट्र एवं अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में एक अधिकारिक भाषा के रूप में स्थापित करने के उद्देश्य से 1975 में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के तत्वावधान में, भारत सरकार के सहयोग से पहला विश्व हिन्दी सम्मेलन, नागपुर में आयोजित हुआ था। देववाणी की इस पुत्री की इस विश्वव्यापी शोभायात्रा के बढ़ते हुए कदम अब आठवें चरण पर पहुँच गए हैं। अब तक के इन सम्मेलनों ने अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में केवल आंशिक सफलता ही प्राप्त की है। इसका उचित आकलन ही इस आलेख का मुख्य उद्देश्य हैं। एक समुचित एवं सुनियोजित योजना की प्रस्तावना जिससे भारतवर्ष सबसे शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में आगे आ सके। योजना को मूर्तरूप देने के लिए भाषाई समन्वय के साथ, हमारी शिक्षा को भारतीय भाषाओं के माध्यम से होना ही पडेगा ताकि एक विदेशी भाषा के बढ़ते हुए वर्चस्व को रोका जा सके जो हमारी सोच को दूषित कर रही है। मैकाले की कूटनीति ने भारत को खोखला कर दिया है, और राष्ट्र की सुरक्षा के लिए हर एक भारतीय को जागरूक होना ही पडेगा। और यह सब तब तक संभव नहीं हो पाएगा जब तक हम सम्पूर्ण भारत के लिए एक सम्पर्क भाषा का चयन, प्यार, स्नेह एवं समरसता के सिद्धांतों पर नहीं कर लेते हैं।

2. मातृभाषा का महत्त्व :-

मौखिक या लिखित भाषा का उद्‌गम विचारों के प्रादुर्भाव से होता है। मौखिक भाषा ध्वनि के रूप में कर्णप्रिय होती है जबकि लिखित भाषा ध्वनि की अभिव्यक्ति का माध्यम बनकर चित्रमय लिपि के रूप में चक्षुप्रिय होती है। इस संदर्भ में वाङ्मय की संरचना के लिए विचार ही सबसे महत्वपूर्ण होते हैं और इनको यदि मातृभाषा में व्यक्त किया जाए तो विचारों का संप्रेषण ठीक एवं बोधमय होता है। यह एक वैज्ञानिक सत्य है और ऐसी स्थिति में ही उस भाषा में रचा गया। साहित्य उच्चकोटि का होकर विश्वस्तरीय बनने की क्षमता रखता है। यह एक चिंता का विषय है कि क्या कारण है कि भारत जैसे राष्ट्र में जो मनीषियों एवं संतुलित विचारकों से भरा हुआ है, पिछले कई दशकों में कोई नोबेल पुरस्कार किसी भी क्षेत्र में नहीं अर्जित कर पाया है जबकि इज़राइल जैसे छोटे से राष्ट्र ने 1948 से अब तक 12 ऐसे पुरस्कार अपनी झोली में डाल लिए है। यह राष्ट्र बड़े ही वर्ग के साथ अपना सारा काम-काम अपनी राष्ट्रभाषा हिब्रू में करता है। अगर भारत की अनेक भाषाओं को सही बढ़ावा दिया जाता है तो कोई कारण नहीं है कि हम कई अन्य गुरूवर ठाकुर जैसे साहित्यकारों को न खोज निकालें। देश की आर्य एवं द्रविड भाषाओं में ऐसे अनेक साहित्यकार अब भी हैं जो सही वातावरण एवं प्रोत्साहन के मिलते ही नोबेल पुरस्कार भारत को दिला सकते हैं।

3. विश्व हिन्दी सम्मेलन :-

भारतीय एकता एवं समरसता को ध्यान में रखते हुए महात्मा गाँधी ने 1909 में अपने विचार हिन्दी स्वराज्य में कुछ इस प्रकार व्यक्त किए थे- हर एक पढ़े - लिखे हिंदुस्तानी को अपनी भाषा का, हिन्दू को संस्कृत का, मुसलमान को अरबी का, पारसी को पर्शियन का और सबको हिन्दी का ज्ञान होना चाहिए। लगभग 100 वर्षों के उपरांत भी भारत की भाषाई स्थिति में सुधार आने के स्थान पर यह और अधिक चिंता का विषय बन गया है क्योंकि अंग्रेजी भाषा के बढ़ते हुए वर्चस्व ने भारत की समस्त भाषाओं को कमज़ोर बनाया है जिसके कारण राष्ट्रीय एकता कमज़ोर हुई है। राष्ट्रीय एकता की चिंता 1947 में ही युग दृष्टा अरबिंदो को भी थी और उन्होंने अपने विचार स्पष्ट शब्दों में व्यक्त किए थे। भारत की इस स्थिति में कोई आशातीत परिवर्तन नहीं आया है। विश्व में भारत पहचान स्थापित करने के उद्देश्य से विश्व हिन्दी सम्मेलन का पहला कदम 1975 में उठा था और अब तक यह कहाँ तक पहुँचा है तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका

वि.हि.स. संख्या (विश्व हिन्दी सम्मेलन)	तिथि	स्थान एवं देश
1.	10-12 जनवरी 1975	नागपुर, भारत
2.	28-30 अगस्त 1976	मॉरीशस
3.	28-30 अक्तूबर 1983	दिल्ली, भारत
4.	2-4 सितंबर 1993	मॉरीशस
5.	4-8 अप्रैल 1996	पोर्ट आफ स्पेन, ट्रिनिडाड और टोबेगो
6.	14-18 सितंबर 1999	लंदन, यू.के
7.	5-9 जून 2003	पारामारिबो, सूरीनाम
8.	13-15 जुलाई 2007	न्यूयॉर्क, अमेरिका

विश्व हिन्दी सम्मेलन के संदर्भ में तालिका में कुछ महत्वपूर्ण बातें स्पष्ट है। पहला तो यह कि अब तक भारत एवं मॉरीशस में यह समारोह दो - दो बार सम्पन्न हो चुका है जिसके पीछे भारतीय भावनाएँ एवं हिन्दी जानने वालों की बाहुल्यता थी। दूसरा यह कि चौथे विश्व हिन्दी सम्मेलन के उपरांत इसके आयोजन में एक निरन्तरता आई है अन्यथा दूसरे और तीसरे के बीच सात वर्षों का अंतर हो गया था। तीसरा यह कि छठा सम्मेलन जिसका आयोजन यू.के. में हुआ था। कई मायनों में हिन्दी के प्रसार एवं प्रकार की दृष्टि से बड़ा ही महत्वपूर्ण था क्योंकि जिन अंग्रेजों ने हम पर लगभग 300 वर्षों तक राज्य किया था? उन्हीं की राजधानी लंदन में भारत की भाषा एवं संस्कृत का परयम फहराया गया था। इसमें निश्चय ही मैकाले की विचरती आत्मा को कष्ट अवश्य हुआ होगा क्योंकि भारतीय भाषाओं एवं संस्कृत को समाप्त करने की योजना मैकाले ने ही 1834 के आसपास बनाई थी।

हिन्दी सम्मेलनों में भारत एवं विदेशी विद्वानों ने विभिन्न विषयों पर चर्याए की और अंत में कुछ महत्वपूर्ण प्रस्ताव भी पारित हुए। इनमें से जिन मुख्य बिंदुओं पर चर्याएँ हुई थी, उनमें से कुछ मुख्य विषय इस प्रकार थे :

1. हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति
2. विश्व मानव चेतना
3. भारत और हिन्दी एवं आधुनिक युग और हिन्दी
4. संचार माध्यम और हिन्दी
5. हिन्दी में प्रचार - प्रसार में श्वैच्छिक संस्थाओं की भूमिका
6. विश्व में हिन्दी के पठन- पाठन की समस्याएँ
7. वैज्ञानिक एवं तकनीकी क्षेत्रों में हिन्दी की प्रगति
8. हिन्दी पत्रकारिता का सशक्त माध्यम
9. हिन्दी एवं भावी पीढ़ी
10. हिन्दी के प्रचार-प्रसार में शैक्षिक संस्थाओं का योगदान

पारित किए गए प्रस्तावों में कुछ तो सामयिक ही थे किंतु अनेक ऐसे भी थे जिनकी उपयोगिता तब भी और अब भी है। पारित प्रस्तावों के फल स्वरूप ही वर्धा में महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय की स्थापना हो चुकी है किंतु यह प्रारम्भ से ही सरकारी अफ़सरों के घेराव में आती रही है जिसके कारण इसके माध्यम से कोई विशेष प्रगति नहीं हो पाई है जबकि इसके बाद हैदराबाद में स्थापित अन्तर्राष्ट्रीय उर्दू विश्वविदद्यालय नित्य नए प्रतिमान स्थापित कर रही है। अनेक सरकारी अड़चनों के बाद अब विश्व हिन्दी सचिवालय के मुख्य पदाधिकारियों की स्थापना 2006 में हो गई है और आशा की जाती है कि अब इसी के माध्यम से विश्वव्यापी हिन्दी की गतिविधियों का संचालन एवं नियंत्रण होगा। बडे दु:ख की बात है कि पहले विश्व हिन्दी सम्मेलन में पारित प्रस्ताव-संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी को अधिकारिक भाषा बनाने का, अब तक तीन दशकों के बाद थी प्रस्ताव के रूप में ही उधर से लटका है।

नि:सन्देह इस कार्य को मूर्तरूप देने में परशानियाँ दो तरीके की है। एक तरफ तो इसके लिए कम से कम 100 करोड रुपये की आवश्यकता है तो दूसरी ओर संयुक्त राष्ट्र संघ के 96 सदस्यों का समर्थन भी चाहिए। आर्थिक रूप से भारत अब पहले से अधिक समृद्ध है और संभवत: इतनी बडी धनराशि जुटाने में परेशानी नहीं होने चाहिए इस यज्ञ को सफल बनाने के लिए किंतु 96 राष्ट्रों का समर्थन प्राप्त करना इतना सफल काम नहीं है और इसके लिए अनुकूल वातावरण बनाना ही पडेगा।

आज की सत्ताधारी सरकार का ध्यान इस ओर गया है और लगता है कि भारत माँ के दामन का यह काला दाग भी अब शीघ्र ही साफ हो जाएगा। अभी हाल में ही विदेश राज्यमंत्री श्री आनन्द शर्मा ने लंदन की सभा में आश्वासन दिया है कि उनकी सरकार इस कार्य में समर्पित है। उन्हीं के शब्दों में- ''हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र की भाषा बनाने के लिए केवल धनराशि की आवश्यकता नहीं है, इसके लिए हमें संयुक्त राष्ट्र के सदस्य देशों का बहुमत समर्थन भी चाहिए।'' यह विचार उन्होंने 8 नवम्बर 2006 को लंदन स्थित नेहरू सेंटर में व्यक्त किए थे और अवसर था अन्तरराष्ट्रीय समकालीन साहित्य सम्मेलन के समापन समारोह का जिसमें भारत से 90 से भी ज्यादा साहित्यकारों ने भागीदारी की थी।

इस विषय पर चर्चा करते- करते यह भी सोचना आवश्यक है कि विश्व स्तर पर हिन्दी को स्थापित करवा लेने मात्र से अपने राष्ट्र की मौलिक समस्या का समाधान नहीं होता है और वह है कुछ चुने हुए वर्गों द्वारा भारतीय भाषाओं का उपेक्षित होना तथा उनको हीन भावना से देखा जाना। यह 2-2% लोग हैं जो अपने को मैकाले का वंशज मानते होंगे जिन्हे काले अंग्रेज कहलाने में लाज नहीं आती होगी और जिन्होंने अपनी सोच के दरवाजों को बंद कर रखा होगा। हिन्दी अपने राष्ट्र में ही दासी के रूप में बन गई है। इस स्थिति को बदलने के लिए हर भारतीय को उसी प्रकार जागरूक होना पडेगा जैसे जापान, कोरिया, चीन, इज़राइल, स्पेन, जर्मन एवं संयुक्त अरब अमीरात जैसे राष्ट्र है। इस संदर्भ में प्रवासी संसार त्रैमासिक पत्रिका के वर्ष 4 के अंक 1 में सम्पादकीय के कुछ अंश इस प्रकार है - दुबई में एक हिन्दी सम्मेलन 17 और 18 जनवरी को होते जा रहा है जिसमें वहाँ के स्थानीय संयोजक श्री कृष्ण बिहारी ने सभी का वीज़ा बनवाकर फैक्स किया, जो कि अरबी भाषा में था। यहाँ एयर इंडिया की अधिकारी बहुत चिन-चिनाती रहीं कि इसे अंग्रेजी में होना चाहिए। यह सब देखकर हमें अंग्रेजी में होना चाहिए। यह सब देखकर हमें कष्ट भले ही हुआ, परंतु यह उनके देश के गौरव की बात है कि यदि आपको आना है तो आए परंतु उनके सरकारी प्रपत्र उनके देश की भाषा में ही होंगे। हम आखिर कब तक दूसरों की सुविधा के नाम पर अपनी भाषा व संस्कृति को नष्ट करते रहेंगे। भारत की सरकार को इस ओर ध्यान देना होगा। इन विचारों का विरोध कोई पागल ही करेगा और ऐसे कुछ नेता एवं ब्यूरोक्रैट, दुर्भाग्यवश हमारे देश में बैठे हैं। भारतीय भाषाओं एवं हिन्दी भाषा के अनेक विरोधी सरकार में बैठे हैं जो धीरे - धीरे देश को और आर्थिक खोखला बनाने पर तुले हैं। मुम्बई में हिन्दी में जब किसी ने अपना वक्तव्य किया, प्रवासी भारतीय दिवस समारोह में, तब सरकार में बैठे एक क्रांतिकारी ने राष्ट्र का अपमान करते हुए क्षमा मांगी थी। ऐसे निन्दनीय कृत्य पर ऐसे व्यक्तियों को सरकार दंडित न कर आगे ही बढ़ाती जा रही है, ऐसी बातें समझ से परे है। भारत की न्यायिक सत्ता ने अपना शिकंजा कसना प्रारम्भ किया है और अब समय आ गया है, ऐसे नेताओं को भी समझाना कि व्यक्तिगत स्वार्थों का राष्ट्र के सामने कोई स्थान नहीं है।

4. हिन्दी राष्ट्रभाषा और राजभाषा :-

यद्यपि कुछ लोगों ने यह मान लिया है कि संविधान के अनुसार भारत की राष्ट्र एवं राजाभाषा हिन्दी हो गई। किन्तु यह वास्तविक नहीं है। जो काम बडी ही आसानी से स्वतंत्रता के उपरांत हो सकता था, नहीं किया गया था। आज के समय में इसको आपसी प्यार एवं प्रेम के आधार पर ही किया जा सकता है। सम्पूर्ण भारत के लिए एक भाषा का चयन करने में लगभग 5 वर्ष लग सकते है और यह कैसे किया जा सकता है जिसके आधार पर 40-50 वर्षो में हमारी शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी न होकर भारतीय भाषाएँ हो सकती हैं। सम्पूर्ण भारत की भाषा सम्भवत: हिन्दी ही होगी किंतु आज के समय में बिना भारतीयों का जनमत बनाए यह कहना या घोषित करना नासमझी होगी। सारी मातृभाषाओं एवं उससे जुड़ी संस्कृति की रक्षा करना हर भारतीय का धर्म है। लुप्त हो रही भाषाओं को भी बचाने के प्रयास अंतिम समय तक होने चाहिए।

भारत में कुछ लोगों का यह मानना है कि यह राष्ट्र वैश्वीकरण की दौड़ में आगे बढ़ रहा है और इसका मुख्य कारण है अंग्रेजी भाषा का प्रयोग हो सकता है कि यह कुछ हद तक ठीक हो किंतु यह स्थिति किस प्रकार भारत जैसे महान राष्ट्र के लिए जिनकी जनसंख्या 1.22 बिलियन है, घातक सिद्ध हो सकती है। यदि हम अपने उत्पादन की कीमती एवं गुणवत्ता को स्तरीय बना लेते हैं तो अन्य देश दौड़े-दौड़े आएंगे और भारतीय भाषाएं इनमें आड़े नहीं आएंगी। कोरियाई नागरिक भारत में आकर हिन्दी सीख रहे हैं क्योंकि वह जान गए है कि व्यापार करने के लिए, भारतीय कर्मचारियों से सही प्रकार से काम लेने के लिए, उनको वहाँ भी स्थानीय भाषा का ज्ञान होना ही चाहिए और यही बात तीसरे विश्व हिन्दी सम्मेलन के अध्यक्ष, यू.के. निवासी डॉ. रोनौल्ड स्टुबर्ट मैग्रेगह ने कही थी। उन्हीं के शब्दों में ''जो भी देश या व्यक्ति भारत को समझना चाहता है तो उसे सर्वप्रथम हिन्दी सीखनी होगी, हिन्दी की उपयोगिता और विशेषता को समझना होगा।''

5. विश्वभाषा के रूप में हिन्दी- विज्ञान तथा अनुवाद प्रक्रिया :-

इक्कीसवी सदी के चढ़ते चरण में भारतीय भाषाई समन्वय एवं अनेक सशक्तीकरण के आधार पर ही प्यार को अपनी प्रक्रिया का प्राण बनाते हुए ही भारतीय एकता के लिए ''सम्पूर्ण भारत की एक भाषा'' का चयन हो सकता हैं जिसके माध्यम से सब उसी प्रकार जुड़ सकते हैं जैसे भारत की स्वतंत्रता के लिए जुड़े थे। इन्हीं विचारों से अगस्त 2005 में गीतांजलि बहुभाषीय साहित्यिक समुदाय ने एक अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया था। संगोष्ठी में निम्न लिखित प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित किए गए थे :

1. भारतीयता के नारे को अग्रसर करना प्रत्येक भारतीय का उद्देश्य होना चाहिए।
2. सभी भारतीय भाषाओं को सम्मानजनक स्थान मिलना चाहिए और इस के लिए केन्द्रीय सरकार को यथोचित संसाधन उपलब्ध कराना चाहिए।
3. भारतीय भाषाओं के बीच विभिन्न कार्यक्रमों के आदान-प्रदान को बढ़ाया दिया जाना चाहिए।
4. अनुवाद एवं विचार विनिमय के लिए एक राष्ट्रीय केंद्र की स्थापना होनी चाहिए जिसकी शाखाएँ अन्य क्षेत्रों में भी होनी चाहिए।
5. एक भाषा के साहित्य को अन्य भाषाओं में अनुवाद - प्रक्रिया को बढ़ावा देने तथा प्रोत्साहित करने के साथ ही सम्मानजनक स्थान भी दिया जाना चाहिए।
6. उत्कृष्ट गुणवत्ता वाले अनुवादों को विभिन्न प्रकार से विद्वतापूर्ण पुरस्कारों से सम्मानित करना चाहिए।
7. सुनियोजित वैज्ञानिक ढंग से हर भारतीय को हिन्दी भाषा का प्रयोग करना चाहिए जिससे कि यह भारत की गंगा - जमुनी संस्कृति की पहचान बन सके।
8. राष्ट्र को अंग्रेजी भाषा के प्रयोग से दूरी बढ़ाते हुए भारतीय भाषाओं के साथ निकटवर्ती संबंध बनाना चाहिए।
9. संस्कृत एवं अन्य शास्त्रीय भाषाओं को पुन: जीवित करने के लिए भरसक प्रयास करना चाहिए।
10. भारत को सरकार विश्व हिन्दी सम्मेलनों के साथ - साथ विश्व बहुभाषी सम्मेलनों एवं संगोष्ठियों का आयोजन होना चाहिए।
11. प्रवास भारतीयों को भाषाई समरसता का कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

हिन्दी के साथ - साथ विश्व बहुभाषी सम्मेलनों का आयोजन अब समय की सबसे बड़ी आवश्यकता बन गई है। पारित प्रस्तावों को भारत सरकार के विभिन्न विभागों को तत्काल ही भेज दिए गए थे।

6. नागरी लिपि की वैज्ञानिकता :-

भारतीय एकता को ध्यान में रखते हुए विनोबा ने कहा था– ''मैं नागरी लिपि पर जोर दे रहा हूँ। मेरा अधिक ध्यान नागरी लिपि को लेकर चल रहा है। नागरी लिपि अगर हिन्दुस्तान की सब भाषाओं के लिए चले तो हम सब लोग बिल्कुल नजदीक आ जाएंगे। खास करके दक्षिण की भाषाओं को नागरी लिपि का लाभ होगा। वहाँ की चार भाषाएँ अत्यंत नज़दीक हैं। उनमें संस्कृत शब्दों के अलावा उनके जो अपने प्रांतीय शब्द हैं, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालय के उनमें बहुत से शब्द समान है। वे शब्द नागरी लिपि में आ जाते हैं। तो दक्षिण की चारों भाषाओं के लोग, चारों भाषाएँ 15 दिन में सीख सकते हैं। कितना आसान हो जाएगा इसके बाद भिन्न-भिन्न लिपि सीखने में, हर एक की अपनी - अपनी परिस्थिति आड़े आती हैं। मैंने हिम्मत की, हिंदुस्तान की हर एक लिपि का अध्ययन किया। परिणाम में विचार आया कि दूसरी लिपियाँ चले। नागरी ही चले, यह मैं नहीं कहता। मैं 'भी' वादी हूँ। वह 'भी' चलें और नागरी 'भी' चले। आज के संदर्भ में यदि भाषाई समन्वय को बल देते हुए भारत की सभी भाषाएं नागरी लिपि का प्रयोग भी करने लगती हैं तो आपसी प्यार एवं सद्भावना बढेगी, ऐसा मैं मानता हूँ। विश्व की सर्वाधिक वैज्ञानिक लिपि नागरी को ही माना गया है। नागरी लिपि को अंगीकार करना सभी भारतीयों एवं भारतीय भाषाओं के हित में है।''

7. उपसंहार :-

भारतीयों की अखंडता एवं एकता के लिए तथा आठवे विश्व हिन्दी सम्मेलन की सार्थकता को स्थापित करने एवं उसमें विश्व हिन्दी सम्मेलनों के अवदानों का यथोचित आकलन करने के लिए, यह आवश्यक है भाषाई समन्वय की प्रक्रिया को द्रुतगति से बढ़ाते हुए नागरी लिपि को शीघ्र ही अन्य लिपियों के साथ अपनाना चाहिए। संयुक्त राष्ट्र की आधिकारिक भाषा के रूप में हिन्दी को स्थापित कराने का कार्य आठवे हिन्दी सम्मेलन का मुख्य विषय होना चाहिए। यह सब कैसे हो सकता है, संक्षेप में इस आलेख में व्यक्त किया गया है। विश्व बहुभाषी सम्मेलनों की श्रंखला का शुभारंभ शीघ्र होना चाहिए। इससे हिन्दी भाषा की उदारता का परिचय मिलेगा। और समरसता का मार्ग सरल एवं सहज होगा। विश्व हिन्दी सम्मेलनों में पारित प्रस्तावों के आधार पर वर्धा में महात्मा गाँधी अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय और मॉरीशस में हिन्दी सचिवालय की स्थापना हो चुकी है। यह बात अलग है कि इन दोनों के माध्यम से अब तक कोई ठोस कदम नहीं उठा सका है किन्तु आशा यह है कि यह सब शीघ्र ही प्रारम्भ होगा।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

Name of the Lesson

विश्वभाषा की ओर अग्रसर

- डॉ. हीरालाल बाछोतिया

प्र. 3. 'विश्वभाषा की ओर अग्रसर' पाठ में व्यक्त लेखक के विचार प्रस्तुत कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

विश्वभाषा का आशय है विश्व चेतस संस्कृति का वहन कर सकने वाली भाषा। आज हिन्दी विश्व के चित्त को छूने में समर्थ है। इसका आशय है कि वह विश्वभाषा की योग्यता रखती हैं। हिन्दी का स्वरूप प्रारम्भ से ही वैश्वक रहा है। आज 127 देशों में भारतीय मूल के लोग निवास करते हैं, जो अप्रवासी भारतीय कहलाते हैं। इन देशों में अधिकांश लोग हिन्दी बोल और समझ लेते हैं। विश्व के 153 विश्वविद्यालयों में इस समय हिन्दी का अध्ययन- अध्यापन हो रहा है। हिन्दी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उभर रही है।

2. हिन्दी विश्वभाषा की ओर :-

राष्ट्रगान एवं राष्ट्र ध्वज के समानांतर राष्ट्रभाषा की प्रतिष्ठा में राष्ट्र का सम्मान और गौरव सन्निहित है। विश्व में संख्या की दृष्टि से हिन्दी भाषा - भाषियों का स्थान प्रथम है तथा हिन्दी भाषा-भाषियों की संख्या लगभग 80 करोड बताई गई है। सन् 1991 की जनगणना के अनुसार भारत में हिन्दी जानने वाले भारतीयों की संख्या संपूर्ण भारत की जनसंख्या का 73.31 प्रतिशत है। भारत से बाहर मॉरीशस, सूरीनाम, फीजी, त्रिनिडाड आदि में बसे लाखों प्रवासी भारतीय जो आज वहाँ के स्थाई नागरिक हैं। मातृभाषा के रूप में हिन्दी का ही व्यवहार करते हैं। ये प्रवासी भारतीय मूलत: पूर्वी उत्तरप्रदेश तथा पश्चिमी बिहार से इन देशों में शर्त - बंदी प्रथा के अंतर्गत वहाँ गये थे। वे सब से पहले 1834 में मॉरीशस, 1845 में त्रिनिडाड, 1860 में दक्षिण आफ्रिका के गुयाना, 1873 में सूरी नाम तथा 1879 में फिजी पहुँचे थे। ये सभी या तो भोजपूरी बोलते थे या अवधी एक बडी संख्या खडी बोली हिन्दी बोलनेवालों की भी थी। समुद्री यात्रा के दौरान अन्य राज्यों से भर्ती किये गये मजदूरों से संप्रेषण के लिए उनके शब्दों का प्रयोग भी अवधी, भोजपुरी तथा हिन्दी के साथ होने लगा। बाद में जिन देशों में ये बसे इन प्रवासी भारतीयों की भाषिक शैलियाँ ही भावाभिव्यक्ति का साधन बन गईं।

3. फीजी में हिन्दी :-

आज फीजी में भारतीय मूल के लोगों की संख्या प्राय: 48 प्रतिशत है। सूरीनाम में हिन्दी को सरनामी नाम से अभिहित किया जाता हैं। भारतीय मूल के इसके बोलनेवालों की संख्या 39 प्रतिशत है। त्रिनिडाड- टोबेगो में भारतीय मूल के लोग 42 प्रतिशत हैं । इस के अलावा दक्षिण आफ्रिका के नताल में हिन्दी का अच्छा प्रचलन है। इन प्रवासी भारतीयों की गणना भी हिन्दी बोलनेवाले समुदाय में की जाए तो हिन्दी भाषा-भाषियों का प्रतिशत चीनी भाषा- भाषियों से भी अधिक हो जाएगा। डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल ने 1999 की जनसंख्या के आधार पर आंकडे प्रस्तुत कर सिद्ध किया है कि हिन्दी का विश्व में प्रथम स्थान है उन्होंने 1999 की जन संख्या के आधार पर दुनिया के कुछ अन्य देशों में हिन्दी जाननेवालों का प्रतिशत भी बताया है। उदाहरणार्थ ग्वाटेमाला में 50 प्रतिशत लोग और कनाडा में 4 प्रतिशत लोग हिन्दी जानते हैं।

4. विदेशों में हिन्दी की लोकप्रियता :-

विदेशों में हिन्दी की लोकप्रियता बढ़ रही है। मॉरीशस, सूरीनाम, फीजी, गुयाना, त्रिनिडाड और टैबैगो में जहाँ भारतीय जाकर बसे, हिन्दी को भी वे अपने साथ ले गये थे। आज वहाँ हिन्दी फूल-फल रही है। मॉरीशस में लगभग 300 गैर सरकारी, स्कूलों में हिन्दी की संध्याकालीन कक्षाएँ लगती हैं। लगभग सौ सरकारी-गैर सरकारी विद्यालयों में माध्यमिक स्तर पर हिन्दी का अध्ययन - अध्यापन हो रहा है। फीजी में अप्रवासी भारतीय 51 प्रतिशत हैं। महात्मा गाँधी संस्थान और मॉरीशस विश्वविद्यालय के सहयोग से हिन्दी में बी.ए.,एम.ए. स्तर की उच्चतर शिक्षा प्रदान की जा रही है। भारतीय फिल्मों का लोकप्रिय होना इसका प्रतीक है।

सूरीनाम में 1977 से 2000 के बीच बीस हजार से ज्यादा लोगों ने हिन्दी सीखी। यहाँ 40 प्रतिशत भारतीयों की भाषा सूरीनाम मिश्रित हिन्दी है। सनातन धर्म सभा द्वारा संचालित स्कूलों में हिन्दी का शिक्षण हो रहा है। यहाँ भारतीय सांस्कृतिक केन्द्रों में भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद से प्रतिनियुक्त प्राध्यापक हिन्दी कक्षाएँ चलाते हैं।

गुयाना में आधी से अधिक आबादी प्रवासी भारतीयों की है। यहाँ स्कूलों में कक्षा 6 से 8 तक हिन्दी पढ़ाने की व्यवस्था है। मन्दिरों में लगभग 100 पाठशालाएँ हिन्दी भाषा का शिक्षण कार्य कर रहीं हैं। त्रिनिडाड एवं टोबैगो में भी मंदिरों में चलाई जानेवाली पाठसालाएँ हिन्दी शिक्षण का कार्य कर रहीं हैं। अनेक संस्थाएँ भी हिन्दी की कक्षाओं का संचालन कर रही हैं। इसके अलावा भारत सरकार के प्रतिनियुक्त हिन्दी प्राध्यापक विश्व विद्यालय स्तर तक हिन्दी का अध्यापन करते हैं।

रूस में 1920 से हिन्दी शिक्षण का कार्य हो रहा है। मास्को स्टेट विश्वविद्यालय में हिन्दी का षट्वर्षीय कोर्स चलाया जा रहा है। जर्मनी के सात विश्वविद्यालय हिन्दी की डिग्रियाँ दे रहे है तथा नौ विश्वविद्यालयों में हिन्दी की कक्षा चला रहे हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में 25 विश्व विद्यालयों के दक्षिण एशिया अध्ययन विभागों में हिन्दी प्रशिक्षण की व्यवस्था है। शिकागो, कैलीफोर्निया, विस्कान्सिन, कोलंबिया, पेन्स पेन्सिलेवानिया, वाशिंगटन, टेक्सास तथा वर्जीनिया विश्वविद्यालय में हिन्दी शिक्षण कार्य जारी है।

नार्वे, स्वीडन, डेनमार्क, जापान, दक्षिण आफ्रिका, इटली, ऑस्ट्रेलिया इत्यादि देशों में भी हिन्दी का शिक्षण कार्य निरन्तर हो रहा है। इन देशों में हिन्दी शिक्षण का मुख्य उद्देश्य भारतीय संस्कृति एवं हिन्दी साहित्य के निकट का परिचय प्राप्त करना तथा भारतीय समाज और जीवन शैली का अध्ययन - अनुसंधान करना है। इन देशों में बडी संख्या में भारतीय अप्रवासी रहते हैं जिनके कारण हिन्दी शिक्षण को नया बौद्धिक आयाम मिला है।

ब्रिटेन में हिन्दी शिक्षण को प्रोत्साहन मिला है। वहाँ के विश्वविद्यालयों के अतिरिक्त यू.के. समिति, गीतांजलि कथा (यू.के.), भारतीय भाषा संगम आदि स्वैच्छिक संस्थाएँ अत्यधिक सक्रियता से हिन्दी शिक्षण, लेखन एवं प्रचार कार्यों में जुटी है। हर वर्ष वहाँ के छात्र भारत के शैक्षिक भ्रमण पर भी आते हैं।

यूरोप के अन्य देशों चेक गणराज्य, पोलैंड, हंगरी, यूगोस्लाविया, रोमानिया, बुग्तारिया आदि में हिन्दी शिक्षण की समुचित व्यवस्था है। इन देशों में विश्व के महान गणतंत्र की राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का अध्ययन - अध्यापन हो रहा है। इन देशों तथा रूस के हिन्दी छात्रों और अध्यापकों ने अनुवाद और अनुसंधान के क्षेत्र में नये प्रतिमान स्थापित किये है। पोलैंड के प्रसिद्ध भारतविद् डॉ. ब्रिस्की का कहना है कि हिन्दी भारतवासियों की मातृभाषा है, लेकिन यह हमारी 'मित्र भाषा' है।

भारत के पडोसी नेपाल, श्रीलंका, भूटान, म्यांमार, बांगलादेश एवं पाकिस्तान में हिन्दी की लोकप्रियता लगातार बढ़ रही हैं। बांगलादेश और पाकिस्तान में बोली जानेवाली उर्दू हिन्दी में व्यावहारिक स्तर पर समानता है। अत: वहाँ हिन्दी खूब लोकप्रिय है। नेपाल में त्रिभुवन विश्वविद्यालय, बांगलादेश में ढ़ाका विश्वविद्यालय, श्रीलंका में कहणिय विश्वविद्यालय, भूटान में पाँच विद्यालयों में तथा म्यांमार में मन्दिरों-धर्मशालाओं में हिन्दी शिक्षण पूरे उत्साह से सम्पन्न हो रहा है। विदेशों में हो रहे हिन्दी लेखन, अनुवाद, प्रकाशन आदि पर दृष्टि डालें तो एक गौरवमयी परंपरा देखी जा सकती है।

हॉलैंड, जर्मनी, फ्राँस और इंगलैण्ड में हिन्दी भाषा का अध्ययन सम्बन्धी कार्य अठारहवीं शताब्दी में शुरू हुआ। इन देशों ने हिन्दी भाषा तथा उसके साहित्य सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण अध्ययन भी प्रस्तुत किये हैं। आज जर्मनी के दस, इटली के सात, फ्राँस के पाँच, इंगलैण्ड, हॉलैण्ड रोमानिया, यूगोस्लाविया, नार्वे, फिनलैंड के राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों में उच्च स्तर पर हिन्दी का अध्ययन हो रहा है।

5. विदेशों में हिन्दी साहित्य - लेखन :-

विश्व के अनेक देशों में प्रवासी भारतीयों तथा विदेशियों द्वारा साहित्य – लेखन कार्य संपन्न हो रहा है। उनकी रचनाएँ उनके देशों एवं भारत में प्रकाशित होती हैं और प्रशंसनीय भी हैं। कुछ रचनाएँ भारतीय विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में पढ़ाई भी जा रही हैं। फीजी के पं. कमला प्रसाद मिश्र, रामानारायण, जोगिंदर सिंह कंवल; मॉरीशस के अभिमन्यु अनत, सोमदत्त बखौरी; सूरीनाम के रहमान खान चन्द्रमोहन, तथा सूर्य प्रसाद के साहित्यिक अवदान को सर्वसराहना प्राप्त हो रही हैं। समाज सुधार, प्रेम, प्रकृति, भारतीय संस्कृति आदि इनके प्रमुख विषय हैं। उपन्यास तथा कथा साहित्य में अभिमन्यु अनत का नाम हिन्दी साहित्य के इतिहास में दर्ज है। निबन्धकारों में पं. वासुदेव विष्णुदयाल, ठाकुर दत्त पाण्डे, मुनीवर लाल आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

फीजी के प्रसिद्ध हिन्दी कवियों में पं. कमला मिश्र, पं. काशीराम कुमुद, श्री महावीर मिश्र और बाबू कुँवर सिंह प्रसिद्ध हैं। गद्यकारों में श्रीमती निर्मला पथिक, जोगिंदर कँवल, डॉ. नेतराम शर्मा आदि प्रमुख हैं। श्री कँवल के उपन्यास 'सवेरा', 'करवट' और 'धरती मेरी माता' भारत में बहु चर्चित है। अपनी क्षेत्रीय सांस्कृतिक अपेक्षाओं को पूरा करने के साथ सूरीनाम के भारतीय प्रवासी अपनी इयत्ता भी कायम रखने में उतरे हैं। सूरीनाम में हिन्दी लेखन की दृष्टि से रहमान खान, चन्द्रमोहन आदि उल्लेखनीय हैं।

अमेरिका, यूरोप आदि खण्डों में बसे भारतीय भी हिन्दी साहित्य सृजन से रत हैं। विदेशों में जो हिन्दी साहित्य रचा जा रहा है। उसमें भारतीय मन के साथ एक विदेशी प्रवासी मन परिपक्व हो गया है – इसका चित्रण देखते बनता है। अमेरिकन हिन्दी लेखिकाओं में उषा प्रियंवदा, सुषम बेदी के अलावा राम चौधरी, रामेश्वर अशांत, डॉ. कि.कु. मेहता आदि का लेखन उल्लेखनीय है। डॉ. मेहता ने तो 'तथागत' पर महाकाव्य की रचना की है। यहाँ प्राय: साहित्यिक गौष्ठियाँ होती हैं। जिन में सुदूरवर्ती स्थानों से सृजन धर्मी शामिल होते हैं। यहाँ तक कि अन्य भारतीय भाषा – भाषी हिन्दी में कविता करते हैं। न्यूयार्क आदि नगरों से विविध साहित्यिक पत्रिकाओं का प्रकाशन भी होता है।

ब्रिटिश इण्डियन रचनाकारों में अचला शर्मा, उषाराजे सकसेना, दिव्या माथुर, सत्येन्द्र श्रीवात्सव, पद्मेश गुप्त, तेजेन्द्र शर्मा आदि ब्रिटेन में बसे भारतीय प्रवासियों की आज की स्थिति पर प्रभावकारी लेखन कर रहे हैं। उषाराजे सक्सेना के अनुसार इंग्लैण्ड में बसे हिन्दी लेखकों की रचनाओं में जहाँ एक और नास्टैलजिया है, भारत की मानकों से परिचालित प्रवृत्तियाँ हैं, वहीं नये समाज की बुनावट बदलते परिवेश और बदलती मान्यताओं के आकलन और पडताल के साथ धन से आई थकन, ऐश्वर्य और विकृतियों से आई घबराहट भी है।

नार्वे में सुरेश चन्द्र शुक्ल हिन्दी लेखन में सक्रिय हैं। उनका कहानी संग्रह 'अर्धरात्रि का सूर्य' नार्वे के उन्मुक्त समाज और उपभाक्ता संस्कृतियों के चित्रण के लिए उल्लेखनीय है। अनेक विदेशी लोग भी हिन्दी में रुचि ले रहे हैं। हिन्दी में वे मौलिक साहित्य लेखन भी कर रहे हैं रूपर्ट स्नेल, जॉन चेंबरलेन, जे.टी. टामसन, जूलियस फ्रेडरिक, डब्लू एम. जानसन, ओदोतन स्मेकल आदि के नाम इस दृष्टि से सर्वोपरि हैं। रूपर्ट स्नेलने अच्छे संस्मरण लिखे हैं। चेंबरलेन गीतकार हैं। टामसन ने दोहा-चौपाई में स्वीष्ट चरितामृत लिखा है। फ्रेडरिक अलमन ने 'वह श्रेष्ठ मूलक था' हिन्दी में खण्डकाव्य लिखा है। जानसन ने 'प्रेमदोहावली' तो स्मेकल ने 'मेरी प्रीत तेरे गीत', और 'नमो-नमो भारत माता' जैसे गीत संग्रहों का प्रकाशन किया।

विश्व की अनेक भाषाओं में हिन्दी साहित्य का अनुवाद निरन्तर हो रहा है। प्रेमचन्द की कृतियों का विश्व की अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ। मध्यकालीन कवियों सूर, कबीर, मीरा, तुलसी रसखान आदि की रचनाओं का भी विश्व की अनेक भाषाओं में अनुवाद हो रहा है। जापान में 1947 से 1950 के बीच जापानी - हिन्दी बात - चीत तथा हिन्दी का सरल व्याकरण पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी थीं। परवर्ती वर्षों में प्रो. क्यूया दोई रचित हिन्दी प्रवेशिका, संक्षिप्त हिन्दी कोश, तोशियेतना का और काजुरिको माचिदो की जापानी में लिखा हिन्दी भाषा का परिचयात्मक व्याकरण, तेइजि सकाता की जापानी माध्यम में लिखी सरल हिन्दी भाषा, कात्सुरो कोगा रचित हिन्दी पाठ्यपुस्तक और शब्द कोश तथा तोमियो मिजो कमि की हिन्दी शिक्षण सम्बन्धी पुस्त कें प्रकाशित हुई हैं। इस प्रकार जापानी छात्रों को हिन्दी सीखने का अनुकूल वातावरण प्राप्त हो रहा है।

रूसी विद्वान चार्ल्स विल्किन्स ने श्रीमद्भगवद्गीता का 'सांग आफ दी एडोरबिल वन' शीर्षक से अंग्रेजी में अनुवाद किया। आज से 150 वर्ष पूर्व रोवर्त लैन्तज ने 'पृथ्वी राज रासो' पर शोध समीक्षा प्रस्तुत की थी। राम विश्वविद्यालय, इटली के हिन्दी विभाग से सम्बद्ध जाजों मिलानेती की कृति 'आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी और अनामदासका पोथा एक विवेचन' भी उल्लेखनीय हैं। रूस में

आधुनिक काल के हिन्दी रचनाकारों पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। इन में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, हरिवंशराज बच्चन, विष्णु प्रभाकर, जयशंकर प्रसाद, अमृतलाल नगर और प्रेमचन्द केनाम उल्लेखनीय हैं। 'इन्दी स्काचा अदनो आतनाथा ड्रामा' (भारतीय एकांकी नाटक) चार अध्यायों में विभाजित - इस पुस्तक में एन.ए. विश्ने सकाया ने भारतेन्दु, जयशंकर प्रसाद और उपेन्द्रनाथ अश्क के एकांकी नाटकों का सुन्दर विवेचन किया है। रूसी विद्वान अलेक्सेय विलोविच वारानिनकोव ने प्रेमचन्द की कहानी 'सौत' का उक्राइनी में अनुवाद किया। ब्लादीमीर अलेक्सान्द्रोविच चेर्निशोव ने 'आधुनिक साहित्यिक हिन्दी में नाम धातुएँ' पर शोध कार्य किया है। उन्होंने फणीश्वरनाथ रेणु की कृतियों का अनुवाद भी रूसी भाषा में किया है। इसके अलावा चीनी, अंग्रेजी भाषाओं में भी हिन्दी साहित्य अनूदित हुआ है। हिन्दी अध्ययन - अध्यापन के लिए भी अनूदित हिन्दी साहित्य की माँग निरन्तर बढ़ रही है। इसी कारण विश्व की सभी भाषाओं में हिन्दी साहित्य विशेषकर हिन्दी के समकालीन साहित्य के अनुवाद की जरूरत अनुभव की जा रही है।

6. विदेशों में हिन्दी पत्रकारिता :-

विदेशों में हिन्दी पत्र कारिता का प्रारम्भ 1885 में लंदन से प्रकाशित 'हिन्दुस्तान' से माना जाता है। इसे काला कांकर के नरेश निकालते थे। मॉरीशस में हिन्दी पत्रकारिता का प्रारम्भ 2 मार्च 1913 को 'हिन्दुस्तानी' के प्रकाशन से हुआ। इसके संपादक डॉ. मणिलाल थे। प्रारम्भ में इसका प्रकाशन अंग्रेजी तथा गुजराती में हुआ जो बाद में अंग्रेजी-हिन्दी में होने लगा। सन 1913 में राम लाल तिवारी के सम्पादन में ओरियंटल गजट नामक पत्र प्रकाशित हुआ जिस में भारतीयों के बारे में महत्त्वपूर्ण सामग्री होती थी। सन् 1920 में, इण्डो-मॉरीशस संघने 'मॉरीशस इण्डियन टाइम्स' एक साथ अंग्रेजी, फारसी, हिन्दी में प्रकाशित किया। इसके हिन्दी खण्ड के सम्पादक पं. राम अवध शर्मा थे। सन् 1924 में मॉरीशस आर्य पत्रिका का प्रकाशन हुआ। 1926 में 'आर्यवीर' नाम साप्ताहिक पत्रिका का भी प्रकाशन हुआ। 'वसंत' का पुनर्प्रकाशन महात्मा गाँधी संस्थान द्वारा अभिमन्यु अनत के सम्पादन में प्रारम्भ हुआ। यह मॉरीशस का लोकप्रिय पत्र है जिस में मॉरीशस के हिन्दी लेखकों की रचनाएँ प्रकाशित होती हैं। मॉरीशस का अन्य साप्ताहिक 'जनता' राजेन्द्र अरुण के सम्पादन में प्रकाशित होता है। मॉरीशस हिन्दी परिषद की त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका 'अनुराग' 1960 से पंडित दौलत राम शर्मा के सम्पादन में निकल रही है। मॉरीशस में हिन्दी पत्रकारिता में 'जागृति' (1949), 'दर्पण' (1979), रणबेरी (1975) आदि पत्र - पत्रिकाओं का उल्लेखनीय योगदान है।

फीजी में भी हिन्दी पत्रकारिता का एक लंबा इतिहास है फीजी में हिन्दी पत्रकारिता का प्रारम्भ 1913 में डॉ. मणिलाल सम्पादित 'इण्डियन सेटलर' के हिन्दी संस्करण से होता है। सन् 1923 में बाबू रामसिंह के सम्पादन में 'फीजी समाचार' का प्रकाशन हुआ। सन् 1939 में फीजी टाइम्स ने पं. गुरुदयाल शर्मा के सम्पादन में शान्तिदूत का प्रकाशन शुरू किय। प्रवासी भारतीयों की रचनाओं के 'शान्तिदूत' में प्रकाशन से यह देशव्यापी मंच ही बन गया है। देश-विदेश खासकर भारत सम्बन्धी प्रामाणिक समाचारों का भी यह माध्यम बन गया। आज 'शान्तिदूत' विदेशी हिन्दी पत्र कारिता का भी द्वीपस्तम्भ बन गया है। सन् 1940 में बी.डी. लक्ष्मण ने किसान, अखिल फीजी कृषक महासंघ ने 'दीनबन्धु', ज्ञानीदास ने ज्ञान और 'तारा'; काशीराम कुमुद ने 'प्रवासिनी'; राम खोलावन ने 'प्रकाश' नामक पत्रों का प्रकाशन किया। इसी क्रम में 'जंजाल', 'सनातन प्रकाश', मजदूर पत्रों से भी फीजी की हिन्दी की पत्रकारिता में अमूल्य योगदान दिया। ज्ञानीदास की सीने पत्रिका 'झंकार' ने भी काफी लोकप्रियता प्राप्त की। पं. कमला प्रसाद मिश्र के सम्पादन में 'जय फीजी' साहित्यिक पत्रिका का प्रकाशन 1960 में प्रारम्भ शर्मा द्वारा प्रकाशित 'सनातन सन्देश' फीजी की हिन्दी पत्रकारिता के अन्य भास्वर स्वर हैं। सूरी नाम से 'आर्य दिवाकर' 1964 में प्रकाशित हुआ जो यहाँ का प्रथम प्रकाशन है। इसी के साथ शिवरतन के सम्पादन में 'सरस्वती' मासिक पत्रिका का प्रकाशन शुरू हुआ। निकेरी के प्रवासी भारतीयों द्वारा 'भारतोदय' का प्रकाशन भी एक उल्लेखनीय घटना है। सन् 1975 में 'धर्मप्रकाश', 'वैदिक सन्देश', 'प्रेम सन्देश' तथा 'शान्ति दूत' के प्रकाशन ने सूरी नाम की हिन्दी पत्रकारिता को आगे बढ़ाया।

गुयाना में हिन्दी पत्रकारिता का प्रारम्भ 'आर्गोसी' के रविवासरीय परिशिष्ट से शुरू हुआ। 'आर्य ज्योति' तथा 'अमर ज्योति' के प्रकाशन से स्वतन्त्र हिन्दी पत्रकारिता को स्थापित होने तथा बढ़ने का अवसर मिला। योगराज शर्मा के सम्पादन में एक उच्चस्तरीय पत्र 'ज्ञानदा' का प्रकाशन भी शुरू हुआ।

त्रिनिडाड- टोबैगो का प्रथम हिन्दी पत्र 'को हेनूर अखवार' है। यहाँ का लोकप्रिय हिन्दी पत्र ज्योति है जो हरिशंकर आदेश के सम्पादन में 1968 से निकल रहा है। यह भारतीय विद्या संस्थान का मुख्य पत्र भी है।

दक्षिण आफ्रिका में हिन्दी पत्रकारिता का प्रारम्भ 1903 में 'इण्डियन सोपीनियन' के हिन्दी संस्करण से हुआ। इसके सम्पादक थे मनसुखलाल। बाद में हर्वड किचन एवं हेनरी एस.एल पोलक ने इसका सम्पादन किया। सन् 1922 में भवानी दयाल सन्यासी के संपादन में 'हिन्दी नामक साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन शुरू हुआ।'

भारत के पडोसी देश नेपाल और बर्मा में हिन्दी पत्रकारिता का उल्लेखनीय स्थान है। बर्मा में 'बर्मा समाचार' से हिन्दी पत्रकारिता का प्रारम्भ हुआ। इसके सम्पादक थे एल.वी. लाठिया। सन् 1934 में श्यामावरण मिश्र के संपादन में 'हिन्दी दैनिक' का प्रकाशन शुरू हुआ जो पहले 'प्राची कलश' मासिक रूप से प्रकाशित होता थ। पश्चात् श्यामाचरण मिश्रने 'प्रवासी' साप्ताहिक पत्र भी शुरूकिया। 1951 में राम प्रकाश शर्मा के सम्पादन में नवजीवन दैनिक पत्र निकला। 1953 में 'ब्रह्मभूमि' मासिक का प्रकाशन हुआ जो आज भीई बर्मा की हिन्दी पत्रकारिता का कीर्तिस्तम्भ है। नेपाल में 1956 में उमाकान्त दासने 'नेपाली' हिन्दी दैनिकका प्रकाशन शुरूकिया। इस पत्र में राजनीतिक समाचारों के हिन्दी विभाग से कृष्णचन्द्र मिश्र के सम्पादन में 1980 से 'साहित्यलोक' का प्रकाशन हो रहा है। कतिपय लघु पत्रिकाएँ 'चर्चा' और 'आरोहण' का हिन्दी पत्र कारिता में महत्वपूर्ण योगदान है।

लंदन से 1885 में हिन्दी पत्रकारिता का आरम्भ हुआ। इसी क्रम में 'अमर दीप' का प्रकाशन प्रवासी भारतीयों में सामाजिक चेतना निर्माण में अमूल्य योगदान है। सन् 1964 में धर्मेन्द्र के सम्पादन में 'प्रवासिनी' का प्रकाशन हुआ जो प्रबुद्ध बुद्धि जीवियों में अत्यन्त लोकप्रिय है। इसी प्रकार लंदन से प्रकाशित 'पुरवाई' का साहित्यक क्षेत्र में अत्यन्त प्रभाव है।

कानडा के टोरदो से 1982 से हरिशंकर आदेश के संपादन में 'जीवन ज्योति' का प्रकाशन हो रहा है। संयुक्त अमेरिका में हिन्दी पत्रकारिता का अच्छा विकास हुआ है। न्यूयार्क में विश्व हिन्दी न्यास की ओर से 'हिन्दी जगत', 'विज्ञान प्रकाश' तथा 'बाल हिन्दी जगत' का प्रकाशन हो रहा है। इस के अलावा भी यहाँ से अनेक पत्र - पत्रिकाएँ निकलती हैं।

7. उपसंहार :-

कुल मिलाकर हिन्दी की लोकप्रियता निरन्तर बढ़ रही है। विदेशों में लोग हिन्दी की संप्रेषणीयता के कायल हैं। उच्चारण की स्पष्टता, व्याकरण की सरलता उन्हें प्रभावित करती हैं। भारतीय संस्कृति को समझने के लिए हिन्दी के अध्ययन की आवश्यकता है। हाल ही में अमेरीकी राष्ट्रपति जार्ज डब्लू. बुशने अमेरीकियों से कहा है कि वे हिन्दी सीखें। हिन्दी को राष्ट्रसंघ की भाषा भी अवश्य बनायी जानी चाहिए। चीनी राष्ट्रसंघ की भाषा है।

हिन्दी का अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व स्वयं सिद्ध है। हिन्दी को राष्ट्रसंघ की भाषा बनाने के लिए विश्व हिन्दी सम्मेलन को एक स्थाई संस्था के रूप में कार्य करना चाहिए।

Lesson Writer : Inampudi Kavitha M.A.

Name of the lesson

सूचना प्रौद्योगिकी और हिन्दी

- डॉ. गिरीश काशिद

प्र.4. 'सूचना प्रौद्योगिकी और हिन्दी' के सम्बन्ध में लेखक डॉ. गिरीश काशिद के विचार प्रस्तुत कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के तीव्र विकास के कारण समूचे विश्व में निरन्तर परिवर्तन हो रहा है। इलेक्ट्रानिक प्रौद्योगिकी ने संचार क्रान्ति उत्पन्न कर सम्पूर्ण विश्व को 'ग्लोबल विलेज' में परिवर्तित कर दिया। तकनीकी क्षेत्र में होनेवाली निरन्तर प्रगति के चलते नई- नई उपलब्धियाँ सामने आ रही हैं। विश्वव्यापी नये सन्देश वाहक संचार प्रौद्योगिकी में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाया है। जनसंचार माध्यम वर्तमान में आवश्यक ही नहीं बल्कि समाज के नियामक बन गये हैं। मानों वे जनता, समाज, राष्ट्र और विश्व के समग्र सजग प्रहरी हैं। इन्हों ने पूरे विश्व को एक परिवार सदृश्य प्रस्तुत किया है। जीवन के हर क्षेत्र में दिन- प्रतिदिन सूचना प्रौद्योगिकी का प्रभाव और हस्तक्षेप बढ़ता जा रहा है। सूचना के मुक्त प्रवाह ने ज्ञान के क्षेत्र में अद्‌भुत उपलब्धियाँ प्रदान की हैं जिससे सारा विश्व चमत्कृत हुआ है। इसने भौगोलिक दूरियों को पार लिया है। मानव सभ्यता का सर्वश्रेष्ठ माध्यम भाषा साहित्य एवं संस्कृति भी इस से अछूती नहीं रही हैं।

2. गतिशील प्रक्रिया :-

'सूचना प्रौद्योगिक' एक निरन्तर गतिशील प्रक्रिया है। इस में प्रगति एवं नये आयाम प्रस्तुत किये गये हैं और तीव्र गति से विज्ञान से भी अधिक मनुष्य समाज प्रभावित किया गया है। संचार व्यवस्था, व्यापर, उत्पादन, मनोरंजन, शिक्षा, संस्कृति, अनुसंधान, राष्ट्रीय रक्षा, चिकित्सा, वाणिज्य, वित्त आदि तमाम क्षेत्रों को प्रभावित कर स्थिरता में चंचलता उत्पन्न हुई है। इसमें नित नये आयाम जुड रहे हैं। भविष्य में इस में कौन - कौन से आयाम जुड जायेंगे यह बताना असंभव हैं। इसकी गति अत्यन्त तीव्र है।''औद्योगिक क्रान्ति को जनमानस के जीवन तक पहुँचने में चारदशक लगे थे। लेकिन, कंप्यूटर और सूचना प्रौद्योगिकी को आम लोगों के जीवन तक पहुँचने में केवल आधा दशक ही लगा। आज यह परिवर्तन छः माह में ही दिखाई देने लगा।'' इसी के चलते कल का औद्योगिक समाज आज सूचना समाज में परिवर्तित हो गया है। मूलतः सूचना एक शक्ति शाली माना जा रहा है। वर्तमान परिप्रेक्ष्यमें

सूचना प्रौद्योगिकी कम्पयूटर, संचार माध्यम और इलेक्ट्रोनिकी का समन्वित रूप है। इसके माध्यम से सूचना प्रणाली के विविध आयाम उजागर हो रहे हैं। इसके अन्दर न केवल जानकारी है अपितु गरीबी, स्वास्थ्य, विषमता, अज्ञान, भ्रष्टाचार को दूर करने की क्षमता है जो ई-प्रशासन साबित कर रहा है।

3. भारत एशिया का बडा नेटवर्क :-

सूचना प्रौद्योगिकी की दृष्टि से भारत एशिया के बडे नेटवर्कों से एक है। इस क्षेत्र में पच्चीस करोड रुपयों सभी अधिक का निवेश हो चुका है। सूचना प्रौद्योगिकी के बहाय में भारत की भूमिका महत्वपूर्ण है। इस क्षेत्र में अनेक सम्भावनाएँ हैं। भारत ने कम्प्यूटर नीति, एलेक्टानिक नीति, सॉफ्टवेयर नीति के तहत इस क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है, बावजूद वह विकसित देशों की तुलना में कम है। मूलभूत अनुसंधान का अभाव और नई संचार प्रौद्योगिकी का महंगा होने भी इसका कारण है। संचार प्रौद्योगिकी के विकास में किसी भी देश को स्पष्ट दृष्टि कोण अपना कर तीव्र गति से प्राथमिकता का निर्धारण करना आवश्यक है। सूचना प्रौद्योगिकी भारत में तीव्र गति से विकसित होनेवाला एक औद्योगिक रूप है जिसने सभी क्षेत्रों को प्रभावित किया है। इण्टरनेट और वरल्ड वाइब वेब संवर्धन भारतीय जीवन और परस्पर संवाद परक व्यवहार में परिवर्तन लाया है। सूचना और संचार के बढ़ते महत्व ने एक जागृति और चेतना का भाव जगा दिया है। एक तरह हम इससे अलग रह भी नहीं सकते। विश्व आर्थिक व्यवस्था में नित नये परिवर्तन हो रहे हैं और जिस से हम स्वयं अलग रख ही नहीं सकते। बैंकिंग क्षेत्र हो या वित्तीय क्षेत्र, चाहे सरकारी क्षेत्र हो या निजी क्षेत्र हो कम्प्यूटर और सूचना तकनीक की अब देखी नहीं हो सकती। उसकी उपेक्षा, उससे पलायन करना अथवा उस से घबराने का अर्थ शेष दुनिया से अपने को अलग रखना है। अत: राजभाषा हिन्दी के माध्यम से इसे जन-जन तक पहुँचाना आज की आश्रयकता है आज सूचना प्रौद्योगिकी से समृद्ध राष्ट्र ही बहुमुखी उन्नति कर रहा है। सम्पूर्ण विश्व में कम्प्यूटर युक्त तकनीक और अन्य संचार साधनों के रूप में संचार प्रौद्योगिकी दैनंदिन व्यवहार में अनिवार्य आवश्यकता के रूप में उभर रही है। इस से स्वयं को अलग रखने का अर्थ है - पिछड जाना। अत: इसको अपने परिवेश के अनुरूप ढ़ालना आवश्यक है।

4. भाषा और सूचना प्रौद्योगिकी का सम्बन्ध :-

भाषा और सूचना प्रौद्योगिकी में गहरा सम्बन्ध है आज सूचना प्रौद्योगिकी भाषा के सवालों के ऊपर उठी है। लेकिन भाषा का अपना महत्त्व एवं अस्तित्व है। सूचना प्रौद्योगिकी पर किसी का कब्जा हो सकता है, लेकिन भाषा पर नहीं। भाषा के माध्यम बिना जनसंचार गूँगे हो जाएंगे। जनसंचार वाचिक

हो या कायिक वह हर हाल में भाषागत होता है। भाषा समाज से अविच्छिन्न है। सूचना प्रौद्योगिकी समाज के लिए है। अत: वह उसे पुष्ट करनेवाली भाषा को बदलेगा। जरूर, साथ ही उसकी विस्तार भी करेगा। सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अंग्रेजी का वर्चस्व है। 90 प्रतिशत से अधिक सूचनाएँ अंग्रेजी में होती हैं। इसका अर्थ यह भी नहीं कि अन्य भाषाओं से उसे परहेज है। जर्मनी, जापान, फ्रांस, चीन आदि देशों ने अपनी राष्ट्रभाषा में इस में तेजी के साथ प्रगति की है। अपनी भाषा में वेबसाइट का निर्माण किया है। प्रौद्योगिकी सहायता से भाषा फल-फूल सकती है। सूचना प्रौद्योगिकी ने नई भाषा गढ़ने को विवश किया। हिन्दी को 'विश्वभाषा' के रूप में स्थापित करेगा। सूचना क्रान्ति से उत्पन्न नई चेतना ने भाषा के क्षेत्र में नए सफल एवं तीव्रगामी आयाम प्रदान किये हैं। वैज्ञानिक एवं साहित्यिक बुद्धि जीवियों के प्रयासों से भारतीय भाषाएँ नई सहस्राब्दि में विदेशी भाषा के समानान्तर प्रगति कर रही हैं। इसमें और प्रयासों की आवश्यकता है। 'सूचना समाज के संप्रेषण रूपों एवं भाषिक संरचना को अक्षुण्ण बनाए रखने सम्बन्धी तथ्य को किसी भी तरह से नजर- अन्दाज नहीं किया जा सकता।' सूचना प्रौद्योगिकी का सम्बन्ध सामाजिक विकास और जनकल्याण के उद्देश्य के साथ जुडा है। अत: भारत के सम्बन्ध में टेक्नोलॉजी का विस्तार सभी को सुलभ करने के लिए भाषा का स्थानिकीकरण आवश्यक है। सूचना प्रौद्योगिकी ने भाषा के सामने अनेक चुनौतियाँ खडी की हैं। हमारे वैज्ञानिकों के प्रयासों ने यह साबित किया है कि हिन्दी में इन चुनौतियों का सामना करने का समार्थ्य है। इसे कारगर बनाने के लिए अनुसंधान के साथ ही मानसिकता में परिवर्तन आवश्यक है। सूचना प्रौद्योगिकी को लेकर भारत के सन्दर्भ में भाषा एक महत्त्वपूर्ण आयाम है। अत: सूचना प्रौद्योगिकी पर विचार एवं भारत में उसके विकास की बात करते समय भाषा को नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता दूसरे भारत में विभिन्न भाषाएँ प्रयुक्त होती हैं। इनकी अपनी अर्थवत्ता भी है। विभिन्न देशों ने कम्प्यूटर के लिए अपनी भाषाएँ विकसित की हैं। मूलत: कम्प्यूटर एक उपकरण है। कोई भी भाषा या लिपि अपनाने में उसे कोई बाधा नहीं। भारतीय भाषाएँ विश्व की अनेक भाषाओं की तुलना में वाक्य विज्ञान, ध्वनि विज्ञान और रैखिक दृष्टि से अधिक सुनियोजित है। इसे देश का आम आदमी समझ सकता है। यदि सूचना प्रौद्योगिकी को आम आदमी तक पहुँचाना है तो वह वर्तमान स्थिति में तो हिन्दी के ही माध्यम से सम्भव है। यदि हम सूचना प्रौद्योगिकी को जडों तक पहुँचाना चाहते हैं तो निरन्तर खोज करनी होगी और जमीन तोडने का काम करना होगा। यदि हिन्दी अंग्रेजी के साथ टिक न सकी तो वह नि: शून्य हो जाएगी।

5. हिन्दी सर्वगुण सम्पन्न भाषा :-

हिन्दी एक सर्वगुण संपन्न भाषा है। सूचना प्रौद्योगिकी के चलते वह विश्वभाषा के रूप में विकसित हो रही है। एक तरह से सूचना प्रौद्योगिकी ने हिन्दी को विकास एवं विस्तार का सुनहरा अवसर ही प्रधान किया है। डॉ. पूरन चंद टण्डन के शब्दों में – ''सूचना एवं सूचना प्रौद्योगिकी का एक बहुत बडा लाभ हिन्दी को प्राप्त हुआ है और वह है अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर हिन्दी का व्यापक स्तर पर अवतरण। इससे पहले वह महत्वपूर्ण कार्य हिन्दी सिनेमा कर रहा था। किन्तु दूरदर्शन, रेडियो, केबल, इण्टरनेट, ई–मेल, पेजर, सैलुलर आदि ने इस दिशा में गम्भीर एवं सकारात्मक भूमिका निभाई हैं।'' इसी के चलते हिन्दी इस क्षेत्र में अहं भूमिका निभा रही है। हिन्दी में काम करने हेतु आज बाजार में अनेक सॉफ्टवेयर उपलब्ध हैं। विभिन्न क्षेत्रों में कम्प्यूटर का सफल प्रवेश हो चुका है। बिल गेट्स द्वारा विंडोज का संस्करण हिन्दी में निकालने की जो पहल हुई उसके पीछे हिन्दी का विशाल बाजार एवं संस्कृत और हिन्दी की वैज्ञानिकता प्रमुख कारक हैं। राजभाषा विभाग ने राजभाषा नीति के तहत महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। मायक्रोसॉफ्टर कम्पनी, सी – डैक तथा ई.आर.एण्ड.डी.सी.आई. नोएडा ने हिन्दी भाषा के परिप्रेक्षय में कम्प्यूटर में दुर्लभ कार्य किया है। सुपर टेक सॉफ्टवेयर एवं हार्डवेयर ने अनुवाद का सॉफ्टवेयर का विकास किया है।

कम्प्यूटर का विकास विदेशी में होने पर भी बाद में इस क्षेत्र में भारतीय कम्प्यूटर शास्त्रियों ने उल्लेखनीय योगदान किया है। विदेश कम्पनियों के लिए सारा ढ़ेर सारा काम भारतीय ही कर रहे हैं। हाल ही में देश के सूचना तन्त्र पर लगातार हो रहे हमले से त्रस्त रक्षा मंत्रालय ने आई.आई.टी. चेन्नई की मदद से संवेदन शील सूचना उपकरणों का देश में निर्माण करने में सफलता प्राप्त की है। सी–डेक पुणे ने तो इस दिशा में क्रान्तिकारी शोध किया है। राजभाषा विभाग,तकनीकी कक्षा, गृहमंत्रलय, नेटकॉम इण्डिया तथा अन्य कम्प्यूटर संस्थानों ने हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा दिया है। वैज्ञानिक तकनीकी शब्दावली आयोग, सूचना, प्रौद्योगिकी विभाग, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, अन्तर्राष्ट्रीय सूचना प्रौद्योगिकी संस्थान, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान आदि इस में सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं। अनेक गैर सरकारी संस्थाएँ हिन्दी सॉफ्टवेयर निर्माण में सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं। अनेक गैर सरकारी संस्थाएँ हिन्दी साफ्टवेयर निर्माण में सक्रिय हैं। इसी के चलते हिन्दी में पेजर, इण्टरनेट, ई–मेल, सर्च, पोर्टल की सुविधा आ गई है।

आज हिन्दी में डॉस, यूनिक्स, और विंडोज वातावरण में शब्द संसाधन का कार्य करने के लिए जिस्ट कार्ड, जिस्ट शैली, एल एल पी, लीप ऑफिस, शब्दरत्न, अक्षर फॉर विंडोज, सुलिपि, सुविंडो,

आकृति, प्रकाशक आदि महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। भारत की प्रमुख संस्थाओं ने डाँस परिवेश के अन्तर्गत शब्द संसाधन पैकेज विकसित किये हैं। हिन्दी में 'डाँस' का आ जाना एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धिक है। सरकारी आर निजी संस्थाओं के प्रयासों ने हिन्दी को सूचना प्रौद्योगिकी की भाषा बना दिया है। इसी कारण हिन्दी सूचना प्रौद्योगिकी के विभिन्न आयामों से जुड रही हैं। प्रिंट-मीडिया तथा श्लैट्रानिक मीडिया में बहुमुखी प्रगति हुई है। आज हिन्दी में शब्द संसाधन, अंक संसाधन,प्रोग्रामिग, नेटवर्किंग और प्रशिक्षण का कार्य सफलता पूर्वक हो रहा है। अब आवश्यकता गहन अनुसंधान एवं प्रौद्योगिकी के विस्तार की है। देश को विकास की ओर अग्रसर करने में सूचना प्रौद्योगिकी अहं भूमिका निमाएगी।

6. 'इंटरनेट' के रूप में सूचना प्रौद्योगिकी :-

'इण्टरनेट' के रूप में सूचना प्रौद्योगिकी का एक विराट रूप सामने आया है। इस से मानों सूचना - तन्त्र मानव की मुट्ठी में आया और पूरा विश्व हथेली यह सक्षम और तेज सूचना संवाहक इलेक्टानिक संचार युग का सर्वाधिक विस्मयकारी रूप हैं इंटरनेट पर अंग्रेजी प्रमुख भाषा है। लेकिन, हिन्दी भी यहाँ प्रयुक्त हो रही है। वेब दुनिया, रीडिफ, राजभाषा जैसे वेबसाइट हिन्दी में विकसित हुए हैं। हिन्दी में 'ई-मेल' की सुविधा भी मुहैया हुई है। इस के माध्यम से हमें अविलंब समाचार, विज्ञापन, शेयर बाजार, मौसम, पर्यटन, साहित्य, संस्कृति आदि विभिन्न क्षेत्र की जानकारी अविलंब उपलब्ध हो रही है। दूसरी ओर इसका गलत प्रयोग भी हो रहा है। हाल ही में गुगल हर देश के महत्त्वपूर्ण नक्षों का उपलब्ध होना विवाद का विषय बन गया है। इण्टरनेट पर अंग्रेजी को अब चीनी, जापानी, स्पेनिश, जर्मन, फ्रेंच, कोरियन और गौर-अंग्रेजी भाषाओं से चुनौती मिलने लगी है।

हिन्दी ने सूचना, मनोरंजन और संचार से जुडे लगभग सभी क्षेत्रों में मजबूती से पैर जमाए हैं। आई टी क्षेत्र की दिग्गज कम्पनियों ने विभिन्न हिन्दी परियोजनाएँ शुरू की हैं। भले ही इस के पीछे व्यावसायिक विवशता हो, मूलतः हिन्दी और भारतीय भाषाओं में अंग्रेजी को पीछे छोडने की क्षमता है। अंग्रेजी आधारित उत्पादों का बाजार धीरे- धीरे ठहराव पर पहुँच रहा है, तो गैर अंग्रेजी भाषाओं की आर्थिक स्थिति सुधर रही है। बावजुद इसके वैश्विक परिदृश्य में हिन्दी का सूचना प्रौद्योगिकी में सन्तोष जनक नहीं है। यह क्षेत्र और गहरे अनुसंधान की माँग कर रहा है। दूसरी ओर इसका विस्तार याने इसे सर्व सुलभ बनाना भी आवश्यक है। ''भले ही कम्प्यूटर के इस क्षेत्र में हिन्दी के प्रयोग में सांख्यिकी प्रगति तो हमने बहुत ही करली है, परन्तु वास्तविकता कुछ और ही है। यदि हम भारत में कम्प्यूटर पर हिन्दी शीघ्र न ला पाए, तो हिन्दी एक सर्वाधिक औपचारिकता ही रह जाएगी।'' फ्रांस, रूस, जापान,

चीन आदि देशों ने अपनी भाषा के महत्त्व को जान कर समस्त कार्य-व्यवहार अपनी भाषा में विकसित किया है। हमारे यहाँ सरकारी कार्यालयों में कम्प्यूटर तो है, लेकिन हिन्दी में कार्य का अभाव है। भारत में वैश्वीकरण, आर्थिक उदारी करण और निजीकरण के परिप्रेक्ष्य में आम लोगों को सूचना प्रौद्योगिकी का लाभ पहुँचना है, तो माध्यम के रूप में हिन्दी या भारतीय भाषाओं का प्रयोग आवश्यक है। ''आज भी हम हिन्दी आईटी के विकास में उस लंबी व कठिन प्रक्रिया से गुजर रहे है जो देश के कम्प्यूटरों के प्रसार, सस्ते दामों पर इण्टरनेट की उपलब्धता, संचार साधनों की पहुँच बढ़ने, गाँव कस्बों में आई टी आधारित शिक्षा पहुँचाने और आई टी की जरूरत को लेकर जागरूकता बढ़ने जैसे बिन्दुओं पर निर्भर है।'' बदलते परिवेश पर गौर करते हुए हमें इस क्षेत्र में प्रगति करने की आवश्यकता है। वरना हम विश्व की दौड से बाहर हो जाएंगे और अपनी भाषा भी नहीं बचा पायेंगे।

यदि हम विभिन्न क्षेत्र में सूचना प्रौद्योगिकी के प्रवेश को रोकेंगे तो वह हमारे लिए हानिकारक हो सकता है। वह अंग्रेजी के माध्यम से पैर फैलाने के पहले ही उसे हिन्दी से जोडना होगा। व्यापार को बढ़ाने की दृष्टि से हिन्दी का माध्यम का प्रसार आवश्यक है। भारत में हिन्दी के अभाव में उद्योग धन्धे व्यापक आधार नहीं ले पाएँगे। सूचना प्रौद्योगिकी को व्यापक स्तर पर अपनी भाषा के साथ जोडे बगैर उन्नति और विकास से बहुत्तर जनसंख्या लाभान्वित नहीं हो पाएगी। बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ इस तथ्य से भलीभाँति परिचित हैं। इसी कारण विभिन्न जनसंचार माध्यम हिन्दी को प्रयुक्त कर रहे हैं और इससे हिन्दी के संपर्क भाषा रूप की पुष्टि हो गई है।

7. चुनौतियाँ :-

सूचना प्रौद्योगिकी के चलते जहाँ ज्ञान के विभिन्न क्षेत्र सुलभ हुए हैं वहाँ दूसरी ओर कई चुनौतियाँ खडी हुई हैं। उसके चलते आज सांस्कृतिक परिदृश्य खतरे से गुजर रहा है। हमारी भाषाएँ संकट से गुजर रही हैं। मानक रूप अर्जित करने की होड में हिन्दी जनपदीय जड से दूर जा रही है। भाषा तथ्यात्मक, सूचनात्मक, संवेदनाशून्य और कृत्रिम बनती जा रही है। वह अंग्रेजी की भूमण्डलीय छवि से आतंकित है। युवा पीढ़ी में विदेश आकर्षण बढ़कर उनमें लाचार मानसिकता बढ़ रही है। निरन्तर परिवर्तन से जीवन अस्थिर बन गया है। हम अपनी अस्तिमता और आत्म-सजगता खोते जा रहे हैं। हम एक तरह से अपनी भाषा में जीना भूलते जा रहे हैं। एक कृत्रिम वर्तमान जीवी भाषा पनप रही है जो मानवी संवेदना को जगाने में असमर्थ है। वह केवल काम चलाऊ अर्थ ढ़ोने को मज़बूर है। भाषा को आधुनिकता यंत्रों के हवाले कर हमने एक खतरा मोल लिया है, भले ही इससे हमें बडी ही सुविधा प्राप्त हुई हो, लेकिन इस से भाषा निरन्तर कृत्रिम और यांत्रिक होती जा रही है। यह चिन्तन का विषय अवश्य है। हिन्दी का संवेदनात्मक रूप खतरे में है, अंग्रेजी के मिश्रण से वह विकृत होती जा रही है। भाषा उपभोक्ताव ही संस्कृति का हिस्सा बनती जा रही है, इसे नकारा नहीं जा सकता।

8. उपसंहार :-

वास्तव में सूचना प्रौद्योगिकी विश्व के आर्थिक और सामाजिक वातावरण में स्वस्थ प्रगति का एक प्रेरणास्रोत है। बस आवश्यकता है, इसे सर्व सुलभ बनाने की सार्थक भाषा की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। अत: हमें अपनी भाषा में उसे टालना होगा। विभिन्न संस्थाएँ हिन्दी भाषा का अनुप्रयोग कर रही हैं। इसे विस्तार देकर हिन्दी का वर्चस्व बढ़ाना होगा। दुनिया के साथ कदम मिलाना है तो हमें भाषाई अस्मिता की रक्षा करते हुए उसे सूचना प्रौद्योगिकी से जोडना होगा। भाषा में आवश्यक परिवर्तन स्वीकार कर चुनौतियों का सामना करना होगा। भारत में प्रौद्योगिकी के ज्ञान-विज्ञान के प्रभावी संप्रेषण की अपार संभावनाएँ हैं।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

Name of the Lesson :

'सम्मेलनों की अंतर्धारा' - लल्लन प्रसाद व्यास

प्र.5 'सम्मेलनों की अंतर्धारा' में लेखक श्री लल्लन प्रसाद व्यास के विचार प्रस्तुत कीजिए।

'सम्मेलनों की अन्तर्धारा' लेखक श्री लल्लन प्रसाद व्यासजी के विचार उन के वचनों में इस प्रकार है। :-

प्रस्तावना :-

विश्व हिन्दी सम्मेलन, न्यूयार्क 2007 में श्री ललन प्रसाद व्यास जी ने सम्मेलनों की अंतर्धारा के बारे में अपने विचार इस प्रकार प्रस्तुत किए। विश्व हिन्दी सम्मेलन के रूप में हिन्दी का विश्वव्यापी विराट रूप आकाश में धूमकेतु के समान एक तेजोमय प्रकाश पुंज की भांति प्रकट हुआ जो भारत के सांस्कृतिक जीवन में एक अद्वितीय घटना रह गया। इस अद्वितीय ऐतिहासिक घटना का क्रम इतनी तेजी से चला कि देखते ही देखते कुछ महीनों में एक स्वप्न की तरह से निकल गया। सहसा विश्वास नहीं हुआ कि नागपुर में 4 दिनों तक सारे और शेष जगत का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने वाला यह सम्मेलन कैसे संभव हो सका।

प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन के साथ – साथ उसके प्रमुख सूत्रधार श्री अनंत गोपाल रोवड़े भी अमर हो गए। कुछ मास में उगते हुए और पुष्पित पल्लवित होते हुए वृक्ष को तो सभी ने देखा किन्तु इसके बीज को ढूँढने के लिए मेरे सामने उससे ठीक 4 साल पहले का वह चित्र आ जाता है जब मैं फरवरी 1971 में एक बारात के सिलसिले में नागपुर गया था। रोवडेजी से परिचय तो कुछ पहले से ही था ही, अतएव एक दिन सायंकाल उनके 'नागपुर टाइम्स' कार्यालय में पहुँच गया। बात चली तो थी साधारण बिन्दु से, किन्तु पहुँच गई असाधारण पर और चर्चा- चिंता का विषय बन गया कि देश में सांस्कृतिक पुनर्जागरण की भूमिका कैसे बने ? उस समय मध्यावधि चुनाव की तेजी वातावरण में भी जिसका दूरदराज का संबंध भी हम लेखकों और पत्रकारों से नहीं था बल्कि राष्ट्र के वायुमंडल में अत्यधिक राजनीति की निरर्थकता के विरूद्ध एक सांस्कृतिक शक्ति के अभ्युदय की आवश्यकता अधिक प्रतीत हो रही थी।

चर्चा और चिंता का निष्कर्ष यह निकल रहा था कि राजनीति की सत्ता और प्रादुर्भाव से अलग देश में एक ऐसी सांस्कृतिक शक्ति का निर्माण हो जो सत्ता के मोह और आकर्षण से अलग अपनी

कल्याणकारी दलबंदी से न हो और यह सभी को समान रूप से मान्य हो तभी राष्ट्रीय एकता भी परिपुष्ट हो सकेगी और सांस्कृतिक पुनर्जागरण की भूमिका भी तैयार हो सकेगी। इन निष्कर्षों में सबसे बड़ी आस्था निहित थी कि अन्त: सलिला के समान भारत की एक अपनी अन्तरनिहित शक्ति है जिसका प्रवाह युगों से चला आ रहा है और युगों तक चलता रहेगा। इसी प्रवाह ने भारत को हर विपरीत परिस्थितियों में टूटने और समाप्त होने से बचाया है। इसमें अपना कुछ दैवी विधान भी निहित हो सकता है। इसीलिए हमारा यह अटूट विश्वास है कि विश्व के क्षितिज पर अभी भी उगते हुए सूर्य की तरह अपनी तेजस्वी भूमिका निभानी है।

2. विश्व - रंगमंच पर भारत की प्रतिष्ठा :-

हमारा यह विश्वास रहा कि भारत के राजनीतिक नेतृत्व को भी संसार ने अपना तेजस्वी रूप प्रकट करना है। जिससे विश्व रंगमंच पर भारत की प्रतिष्ठा आजादी के प्रारंभिक वर्षों की तरह पुनर्स्थापित हो सके। हमारा यह विश्वास उसी वर्षा के अंत में पाकिस्तान के विरुद्ध संघर्ष में औ बंगलादेश के निर्माण के रूप में फलीभूत हुआ। इससे हमारी भावना और आस्था को बल मिला और यह आशा दृढ़ हुई कि हमारी अन्य सात्विक कामना भी पूर्ण होगी। नागपुर के उसी सायंकालीन अंतरंग मिलन और चर्चा के बाद एक चिंतनधारा अपने किसी भावी कर्म–लक्ष्य की ओर अग्रसर हो चुकी थी। एक वर्ष के अन्तराल में यह सारा कुछ गठित हो चुका था। रोवडेजी प्राय: नागपुर से दिल्ली आते थे और सदैव हम दोनों का पारस्परिक विचार–विमर्श घंटों उसी पूर्व विषय पर चलता रहता। कभी–कभी तो समय और प्रहर का भी ध्यान नहीं रहा जाता। बाद में जब उठते तो विनोद में यह व्यक्त होता 'काजी क्यों दूबले, शहर के अंदेरों से।'

जनवरी 1974 में रोवडेजी ने दिल्ली आकर मुझे एक अत्यन्त सुखद सूचना दी कि विनोबा जी और इंदिरा जी की भेंट की फलश्रुति विश्व हिन्दी सम्मेलन की योजना के रूप में सामने आ रही है जिस पर प्रधानमंत्री जी ने सहानुभूतिपूर्वक विचार करना स्वीकार कर लिया है। इस योजना में हमें भारत की सांस्कृतिक पुनर्जागरण के बीज स्पष्ट दिखाई पड़ रहे थे। ऐसे सम्मेलन की चर्चा इसके पहले भी मेरे सामने आ चुकी थी और कुछ वर्ष पूर्व कुछेक उत्साही हिन्दी कार्यकर्ताओं ने थोड़ा– बहुत लिखा– पढ़ी भी शुरू कर दी थी। उस समय मैंने इन कार्यकर्त्ताओं को निरुत्साहित किया था किन्तु जब यह योजना रोवड़जी के माध्यम से मेरे सामने आई तो मुझे ऐसा लगा कि जैसे हिन्दी संसार का चिर संचित स्वप्न साकार होते जा रहा है। उस समय इतना जरूर निश्चय हुआ था कि जब तक इस योजना को पूरी तरह से भारत सरकार की हरी झंडी नहीं मिलती तब तक इसकी सार्वजनिक चर्चा हितकर न होगी। इस

प्रक्रिया में 6 माह लग गए और जब भारत सरकार ने योजना को राष्ट्रीय एकता और भाषागत सद्‌भाव के हित में स्वीकार किया तब हम और आत्मविश्वास के साथ अपनी मंजिल की ओर उन्मुख हो गए। रोवड़े जी की असाधारण योग्यता और अनुकरणीय संगठन कुशलता का जीवन रूप मुझे यहीं से देखने को मिला।

मुझे सबसे अधिक संतोष इस बात का था कि शेवड़ेजी की मातृभषा हिन्दी नहीं बल्कि मराठी थी और वे हिन्दी और अंग्रेजी के सशक्त लेखक है। अत एवं हिन्दी के कार्य में अग्रणी ऐसे ही व्यक्ति को होना चाहिए। मैंने उनसे स्पष्ट कहा है कि विश्व हिन्दी सम्मेलन के कार्य में मैं आपको अपना नेता, कैप्टन मानता हूँ और यही आशा मैं अन्य हिन्दी भाषियों से भी करता हूँ क्योंकि हमारी यह मान्यता है कि जिस प्रकार आजादी से पहले अहिन्दी- भाषा नेताओं ने ही हिन्दी को राष्ट्रभाषा का स्वरूप प्रदान किया। उसी प्रकार आजादी के बाद भी हिन्दी को राष्ट्रभाषा अथवा अखिल भारतीय राज-भाषा का पूर्ण पद अहिन्दी भाषियों के प्रयास से ही संभव है। तभी वास्तव में सच्ची राष्ट्रीय एकता होगी और भाषाओं के क्षेत्र में सद्‌भाव के नए युग का सूत्रपात होगा।

3. विश्वहिन्दी सम्मेलन की घोषणा :-

विश्व हिन्दी सम्मेलन की घोषण होते ही सारे हिन्दी जगत की आशाएँ और आकांक्षाएँ जागृत हो गई और उनके साथ ही न जाने कितने व्यक्तियों की यह कामना भी जागृत हो गई कि सम्मेलन के कार्यक्रमों में उनसे विचार- विमर्श हो और उन्हें समुचित महत्व प्रदान किया जाए। हिन्दी के कार्य में बहुत दिनों से चली आ रही यथास्थिति के कारण न सभी के पास जाना संभव था और न सभी को अपेक्षित महत्व प्रदान किया जाना ही परिणामस्वरूप सम्मेलन को लेकर हिन्दी के कुछ क्षेत्रों या व्यक्तियों में ही तरह-तरह की आकांक्षाएँ व्यक्त की जाने लगीं। ऐसे क्षण बड़े उतार-चढ़ाव संघर्ष और आशा- निराशा के थे। विशेष परेशानी इसलिए था कि ऐसी समस्याएँ स्वयं हिन्दी क्षेत्र की थी। बस, सबसे बड़ा संतोष तो यही थी कि हिन्दी के उन लक्षावधि प्रेमियों ने जिनका कोई हित स्वार्थ अथवा आकांक्षाएं नहीं थी बल्कि हिन्दी भाषा का हित मात्र ही जिन्हें अभीष्ट था, वे बल्कि हिन्दी भाषा का हित मात्र ही जिन्हें अभीष्ट था, वे मुक्त हृदय से सम्मेलन की भावना का स्वागत कर रहे थे और यथाशक्ति सहयोग दे रहे थे।

एक बार का तो मुझे स्मरण है कि कुछ मित्रों ने मुझे यह सूचना दी कि हिन्दी के कुछ साहित्याकार जो ऐसा अनुभव करते हैं कि उनसे सम्मेलन के कार्यक्रमों के बारे में विचार-विमर्श नहीं किया गया है और उन्हें विश्वास में नहीं लिया गया है वे लोग इसके विरुद्ध वक्तव्य प्रसारित करने वाले

हैं। उन दिनों शेवड़े जी से सम्मेलन संबंधी सभी विषयों पर प्राय: रोजाना ही प्रत्यक्ष अथवा नागपुर से फोन पर विचार- विमर्श होता था, अतएव इस अप्रिय और अनपेक्षित संभावना की भी चर्चा होनी स्वाभाविक थी। जब शेवड़े जी ने यह सुना तो मुझे उसकी सात्विक रोषपूर्ण प्रतिक्रिया का स्मरण है जब उन्होंने कहा था कि अग्नि परीक्षा केवल मेरी और आपकी ही नहीं, केवल सम्मेलन के कार्यकर्ताओं की ही नहीं बल्कि सारे हिन्दी जगत की है। हमें इसकी कोई चिंता नहीं। यदि कुछ लोगों ने नादानी में ऐसे करने का साहस किया तो सम्मेलन तो उसके बावजूद भी सफलतापूर्वक सम्पन्न होगा क्योंकि हम इसे भगवान का कार्य मानते हैं। किन्तु इतिहास उन लोगों को भी कभी क्षमा न करेगा। संतोष की बात थी कि ऐसी कोई अप्रिय घटना नहीं होने पायी।

मुझे स्मरण है शेवडेजी ने किसी और ऐसे ही प्रसंग में यह विश्वासपूर्वक कहा था कि देखिएगा सम्मेलन का सारा वातावरण अभिमंत्रित जैसा होगा। विश्व हिन्दी सम्मेलन में जिन लोगों ने भाग लिया, उन्होंने स्वयं देखा कि चार दिन का वह कार्यक्रम ऐसा सुव्यवस्थित, अनुशासित और सार्थक था जिसे देखकर बरबस ही कुछ अभिव्यक्तियाँ हुई थीं 'न भूतों न भविष्यति'। मैंने इस पर कहा था कि भविष्य की बात की बात नहीं करनी चाहिए। भारत की जो अंदर निहित शक्ति है उसका जब विस्फोट होता है तो केवल देश ही नहीं संसार चकित और चमत्कृत रह जाना है। सम्मेलन के संबंध में काफी कुछ कहा जा चुका है। मैं इतना ही कह सकता हूँ कि यह विराट और अद्वितीय आयोजन आस्था और आत्मविश्वास की सबसे बड़ी विजय थी 'जिसकी घुरी थे शेवड़ेजी। आस्थावानों ने इसमें किसी दैवी शक्ति के साक्षात दर्शन किए।'

4. राष्ट्रीय - एकता और हिन्दी :-

सबसे अधिक महत्व की बात तो यह थी कि स्वतंत्रता पूर्व की राष्ट्रभाषा और स्वतंत्र देश की राजभाषा हिन्दी जो सम्मेलन पूर्व एक दशक से राजनीति निहित स्वार्थों से उत्पन्न विभिन्न असत्य आरोपों और अनावश्यक भ्रमों के जाल में फसकर निराशा और कुंठा से ग्रस्त हो गई थी, उसका विश्व हिन्दी सम्मेलन के माध्यम से विराट स्वरूप दर्शन कराकर उसमें नवीन आत्मविश्वास और असाधारण सामर्थ्य की अनुभूति कराई गई जिससे वह संविधान में अपेक्षित भारत की सामाजिक संस्कृति की अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में अपनी ऐतिहासिक राष्ट्रीय भूमिका अदा कर सके। जिस हिन्दी को राष्ट्रीय एकता के लिए 'बाधक' तक बताया जाने लगा था, उसी के विश्व-मंच पर सभी भारतीय भाषाओं के शीर्षस्थ और श्रेष्ठ विद्वानों के सम्मान से उसकी वह ऐतिहासिक भूमिका स्वयं सिद्ध हुई। विश्व हिन्दी सम्मेलन के आयोजन को जिस प्रकार हिन्दीत्तर भाषी प्रदेशों ने सहयोग प्रदान किया। उससे राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने के हिन्दी के दायित्व और गौरव को भी सर्वस्वीकृति मिली।

फिर यह भी महत्वपूर्ण था कि आजादी के लगभग तीन दशकों में जब आपसी समस्याओं के कारण हिन्दी के नाम पर विधिवत् एक अखिल भारतीय सम्मेलन भी न हो सका, तो एक हिन्दीत्तर प्रदेश महाराष्ट्र ने एक सफल और सार्थक विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजित करके तथा हिन्दीत्तर प्रदेशों का सहयोग लेकर देश में भाषायी एकता के क्षेत्र में अपना ऐतिहासिक योगदान किया। हर्ष की बात थी कि आजादी के पूर्व हिन्दीत्तर भाषीयों के सद प्रयासों से हिन्दी की राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मान्यता के नए द्वार खुल रहे थे।

वस्तुत: इस सम्मेलन का भारत के राष्ट्रीय जीवन के लिए सबसे बड़ा योगदान रहा कि इसने भाषागत सद्भाव-सहयोग के नये युग का प्रारंभ किया। जिसमें हिन्दी की अपेक्षित भूमिका स्पष्ट हुई कि वह अन्य भारतीय भाषाओं के सद्भाव और सहयोग से अपने ऐतिहासिक दायित्व को पूरा करे। दुर्भाग्य से भाषा का जो प्रश्न राज नीति से जुड़ गया था, इस सम्मेलन ने उसे पुन: राष्ट्र की सांस्कृतिक धरोहर और सांस्कृतिक मूल्यों से जोड़ने का विनम्र प्रयास किया। यह कार्य विशेष महत्व का इसलिए है कि राजनीति हमेशा क्षणिक हानि-लाभ को देख और समझ पाती है, जबकि सांस्कृतिक मूल्य चिरंतन होते हैं। राष्ट्र की भाषा का प्रश्न राष्ट्र के चिरंतन मूल्यों से ही संबद्ध होना चाहिए।

केवल भारत के हिन्दी प्रेमी ही नहीं बल्कि जगत का जनमानस इस बात के लिए हर्षित था कि हिन्दी के अंतर्राष्ट्रीय मंच पर हिन्दी को राष्ट्र संघ की एक मान्य भाषा बनाने की मांग की गई है। इसका विशेष महत्व यह है कि यह माँग भारत ने नहीं, बल्कि मॉरीशस, फिजी, रूस, चेकोस्लाविया, जर्मनी आदि दर्जनों महत्वपूर्ण देशों के प्रतिनिधियों ने की, जिस गोष्ठी में इस आशय का प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित हुआ उसकी अध्यक्षता स्वयं मॉरीशस के प्रधानमंत्री डॉ.शिवसागर रामगुलाम कर रहे थे और उसमें भारत के तत्कालीन विदेश मंत्री श्री यशवन्तराव चव्हाण भी उपस्थित थे। राष्ट्र संघ में विश्व की तीसरी बड़ी भाषा के रूप में हिंदी का स्थान कब तक प्रतीक्षा करता रहेगा, क्या दोनों स्थितियाँ एक साथ नहीं बन सकती? आखिर हिंदी को उसका न्यायोचित राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्थान दिलाने के लिए कब तक शर्ते लगाई जाती रहेगी? दोनों प्रश्न अलग-अलग है। यद्यपि दोनों का संबंध अवश्य है; तथापि अन्योन्याश्रित भी नहीं है। विश्व हिन्दी सम्मेलन में राष्ट्र संघ में स्थान संबंधी प्रस्ताव हिंदी के उज्जवल भविष्य का द्योतक तो है ही, साथ ही हिंदी के विश्वव्यापी स्वरूप को भी स्वीकार करता है।

विश्व हिंदी सम्मेलन के द्वारा एक अत्यंत महत्वपूर्ण तथा अभूतपूर्व कार्य यह हुआ है कि पहली बार हिंदी के माध्यम से दुनिया भर में फैले हुए लाखों प्रवासी भारतीयों से भारत का संबंध स्थापित हुआ। इस सम्मेलन में मॉरिशस, फिजी, सूरीनाम, त्रिनिडाड, गुयाना आदि भारतवंशी देशों से बड़ी

संख्या में प्रतिनिधियों ने भाग लिया और उन्होंने स्पष्ट विचार व्यक्त किए कि भारत से उनका संबंध हिन्दी के कारण है। उन्होंने अपनी सांस्कृतिक परंपराओं और विशिष्टताओं को हिंदी के माध्यम से सुरक्षित रखा है। सम्मेलन ने इस दिशा में भी ऐतिहासिक कार्य संपन्न किया है।

सच तो यह है कि विश्व हिंदी सम्मेल का कभी यह दावा नहीं रहा कि वह आज़ादी से पहले और आजादी के बाद के अरसे में उत्पन्न हुई हिंदी की समस्याओं का हल प्रस्तुत कर देगा। हिंदी की समस्याएँ अनेक हैं। जो किसी एक-दो सम्मेलन से हल नहीं हो सकती। हाँ, इस सम्मेलन ने हिंदी के पक्ष में एक अद्वितीय राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय वातावरण अवश्य बना दिया है। जिसके सहारे हिंदी एक के बाद एक अपनी समस्याओं को सुलझाने के लिए तत्पर हो सकती है।

नागपुर में प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन आयोजित भी नहीं हो पाया था कि द्वितीय विश्व हिंदी सम्मेलन की संभावनाओं की चर्चा शुरू हो गयी थी। इस चर्चा ने उस समय और भी जोर पकड़ा जब विभिन्न देशों के प्रतिनिधि मण्डल नागपुर पहुँचने लगे। उस समय दो देशों के नाम मुख्य रूप से उभर सामने आये-फिजी और मॉरीशस। सिनेटर विवेकानन्द शर्मा ने यह घोषणा कर दी कि दूसरा सम्मेलन फिजी में हो सकता है किंतु व्यवहार में यह संभावना उतनी ही दूर थी जितनी की फिजी देश। वैसे उचित यह लग रहा था कि दूसरा सम्मेलन मॉरीशस में हो क्योंकि इसी देश का प्रतिनिधि मण्डल भारत के अतिरिक्त सबसे बड़ा था जिसका नेतृत्व स्वयं प्रधानमंत्री डॉ.शिवसागर रामगुलाम कर रहे थे। इसके अतिरिक्त वहाँ हिन्दी भाषी बहुल सरकार होने तथा देश में हिंदी के लिए अपेक्षाकृत अधिक अनुकूलता होने के कारण द्वितीय विश्व हिंदी सम्मेलन के लिए भी इसी देश में अधिक अनुकूलता दिखाई पड़ रही थी। किंतु फिजी संबंधी समाचार प्रकाशित हो जाने के कारण स्वाभाविक ही मॉरिशस को संकोच हो चला था और इसीलिए जब पत्रकारों ने मॉरीशस के प्रधानमंत्री से भविष्य में विश्व हिंदी सम्मेलन के आयोजन की संभावना की चर्चा की तो उन्होंने कहा कि तीसरा विश्व हिंदी सम्मेलन मॉरिशस में होगा।

कुछ ही समय बाद यह स्पष्ट हो गया की फिजी में अनेक कारणों से द्वितीय सम्मेलन का आयोजन संभव नहीं हो सकता। तब मृरिशस के कुछ उत्साही हिंदी प्रेमी नेताओं में द्वितीय सम्मेलन के आयोजन की इच्छा बलवती होने लगी और इस संबंध में मॉरिशस के मंत्री श्री दयानन्दलाल बसन्तराय ने मुझसे अपनी बाद की भारत यात्रा में विचार-विमर्श भी कि। मॉरीशस के प्रधानमंत्री रामगुलाम भी एक वर्ष के बाद नागपुर पुन: पधारे। नगर महापालिका द्वारा उनके नाम पर उस सडक का नामकरण करने के समारोह के अवसर पर जो प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन के स्थल से लगी हुई है। इसी समय शेवड़ेजी और मुझे 12 मार्च, 1976 की अपनी स्वतंत्रता की वर्षगांठ के समारोह में राजकीय

अतिथि के रूप में आमन्त्रित किया और सभी पारस्परिक विचार-विमर्श के बाद अगस्त 1976 में द्वितीय विश्व हिंदी सम्मेलन के आयोजन का निर्णय कर लिया। हमें कभी आशा नहीं थी कि हिन्दी का दूसरा विश्व सम्मेलन भारत की धरती से हजार दूर इतनी जल्दी आयोजित हो सकेगा। जब इस निर्णय की घोषणा हुई तो हिंदी संसार में हर्ष की लहर पुनः दौड गयी।

मॉरिशस में द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के आयोजन का स्वागत संपूर्ण हिन्दी जगत में अपार उत्साह के साथ हुआ और सभी देशों में फैले हिन्दी प्रेमी इस भाषा की गौरव वृद्धि के साथ-साथ अपना गौरव भी अनुभव करने लगे किंतु भारत में तो और अधिक उत्साह था। भारत के बहुसंख्यक हिन्दी प्रेमियों को इस बात के लिए विशेष हर्ष था कि उनकी राष्ट्रभाषा समुद्रपार के किसी देश में विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजित करके अपने को सही अर्थ में विश्व भाषा के रूप में प्रतिष्ठित कर रही है। ऐसे दुर्लभ अवसरों पर देशवासियों में अपनी भाषा और संस्कृति का जो गौरव - बोध होता है वही इस समय भी हो रहा था। सबसे अधिक महत्व की बात यह थी कि विभिन्न भाषाओं बोले इस देश में जहाँ प्राय: कोई न कोई छोटा-मोटा विवाद चलता ही रहता है, वही दोनों विश्व हिन्दी सम्मेलनों के अवसर पर भारत के किसी भाग में किसी ने इसके विरोध में एक भी स्वर व्यक्त नहीं किया। इसका सबसे बड़ा कारण था भाषा के प्रश्न को राजनीति से अलग रखते हुए उसकी रचनात्मक समन्वयकारी और लोकसंग्रही भूमिका की प्रस्तुति, हिन्दी प्रेम, सद्भाव, मैत्री और शांति की भाषा है, यह भलीभांति व्यक्त हो गया था।

मॉरिशस के विश्व हिन्दी सम्मेलन ने जहाँ हिन्दी के अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप को भलीभांति प्रकट किया था, वहाँ यह भी व्यक्त किया था कि विश्व की अन्य भाषाओं अंग्रजी, फ्रेंच, चीन, स्पेनिश आदि के समकक्ष उसका क्या स्थान है ? जहाँ नागपुर के विश्व हिन्दी सम्मेलन ने समस्त भारतीय भाषाओं के बीच हिन्दी की समन्वयकारिणी भगिनी रूप को प्रकट किया वहाँ मॉरीशस के विश्व हिन्दी सम्मेलन ने विश्व हिन्दी भाषाओं के प्रति हिन्दी के प्रेम और सहअस्तित्व की आकांक्षिणी सहचरी-रूप को उजागर किया। इस सम्मेलन ने उस भविष्य की ओर स्पष्ट संकेत किया जब हिन्दी विश्व के रंगमंच पर अन्य विश्व-भाषाओं के साथ अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगी। नागपुर सम्मेलन में विभिन्न भारतीय भाषाओं के श्रेष्ठ एवं ज्येष्ठ साहित्यकारों का सम्मान करके हिन्दी की ओर से उन भाषाओं के प्रति अपना प्रेम और आदर व्यक्त किया गया था और मॉरीशस सम्मेलन में यही भावना फ्रेंच, अंग्रेजी, चीनी आदि भाषाओं के प्रति व्यक्त हुई। इस संबंध में यह उपलब्धि महत्वपूर्ण है कि मॉरीशस सम्मेलन में विश्व हिन्दी की उस धारा को भी पर्याप्त बल मिला जिसमें लगभग 30 देशों के 100 से

अधिक विश्वविद्यालयों में हिन्दी के अध्ययन – अध्यापन के रूप में व्यवस्था है। इस धारा में संबंधित हिन्दी प्रेमियों को भारत से बाहर हिन्दी के विश्व रूप का दर्शन होना सर्वथा नई बात थी।

5. उपसंहार :

द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन की शायद सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि यह थी कि इसका आयोजन भारतवंशी बहुत देश में हुआ। प्रथम सम्मेलन में पहली बार हिन्दी के माध्यम से प्रवासी भारतीय एवं भारतवासियों से भावात्मक एवं रचनात्मक सूत्र जुड़ा था, अतएव द्वितीय सम्मेलन ने इस सूत्र को सदा के लिए सुदृढ़ता प्रदान कर दी। भारत और हिन्दी प्रेमियों के लिए यह अनन्त महत्वपूर्ण बात थी ही, उन भारतवंशियों के लिए विशेष रूप से भी जो भारत को अपने पूर्वजों की मातृभूमि और अपनी प्रेरणा भूमि मानते हैं तथा हिन्दी उनके लिए अस्मिता और अस्तित्व का सबसे बड़ा संबल रहा है। इस भाषा के साथ उनके जीवन में सांस्कृतिक निष्ठा की सबसे बड़ा संबल रहा है। इस भाषा के साथ उनके जीवन में सांस्कृतिक निष्ठा की सबसे बड़ी भावना जुड़ी रही है और इसकी रक्षा के लिए उन्होंने न जाने कितने संघर्ष, त्याग और बलिदान किये। अतएव विश्व हिन्दी सम्मेलन करके मॉरीशस तथा उसके साथ अन्य अनेक भारतवंशी बहुल देशों फिजी, सूरीनाम, त्रिनिडाड तथा गुयाना आदि में आत्मगौरव की अनुभूति की।

Lesson Writer

Inampudi Kavitha M.A.

Name of the lesson

भूमण्डलीकरण और राजभाषा

- वीरेन्द्र यादव

प्र.6. वीरेन्द्र यादव कृत 'भमण्डलीकरण और राजभाषा' का सारांश लिखिए।

1. प्रस्तावना :

भारत का उदात्त एवं प्राचीन दर्शन 'वसुधैव कुटुम्बकम' सम्पूर्ण विश्व को एक परिवार, एक इकाई के रूप में देखने - समझाने व जीने की प्रेरणा देता है। सब मिलकर रहें, और इस समाज को सब अस्तित्व के साथ शान्ति मय जीवन बिताएँ। स्पष्टत: कल्याणकारी दर्शन समूची मानव जाति को सहज व स्वभाविक रूप से पूरी दुनिया से जुडने जोडने का सन्देश देता है। लेकिन जिस भूमण्डलीकरण जिसका नवनीतम घटनाक्रम विश्व व्यापार संगठन है, की अवधारणा उक्त भावना से नितान्त रूप से भिन्न है। इस अवधारणा का किसी प्रकार की कल्याणकारी मानवीय भावना से कुछ लेना - देना नही है। विश्व व्यापार संगठन के इस दौर में अति भौतिकता और समृद्धि की इस अंधी दौड में आपस में सुख-दु:ख बाँटने की उदात्त भावना का नितान्त अभाव है। सोच इस पर केन्द्रित और सीमित है कि हम अपने व्यापार में कैसे सफल हो सकते है। अधिकाधिक लाभ कैसे कमा सकते है।

2. भूमण्डलीकरण - दूरियों का मिटाना:

भूमण्डलीकरण ने भौतिक जगत की दूरियों को मिटाया है। वैज्ञानिक उन्नति, औद्योगिक विकास, कम्प्यूटर, फैक्स, इण्टरनेट और ई-मेल के इस युग ने हमारे सोच विचार और विकास के सारे मानदंड बदल दिए है। आज पिछडा हुआ वह नहीं है। जिसके पास ज्ञान और प्राकृतिक संसाधनों का अभाव है। बल्कि पिछडा हुआ वह है जिसके पास भले ही ज्ञान व संसाधनों का भण्डार है परन्तु आधुनिकतम ढ़ंग से उपयोग करने का अभाव है।

3. वैश्वीकरण और भाषा :

वैश्वीकरण को ले्कर भाषा के परिप्रेक्ष्य में भी यह बात हैं। इतिहास, साहित्य और संस्कृति की उज्ज्वल परंपरा की भाषा सब से समृद्ध है। विश्व व्यापार संगठन के इस युग में सभ्यता और संस्कृति की उज्ज्वल परंपरा की ओर प्राचीनतम भाषा संस्कृत विरासतवाली विश्व में सर्वाधिक लोगों द्वारा बोली जानेवाली, विश्व के सब से बडे लोकतंत्र की राजभाषा हिन्दी का क्या अर्थ है। विश्व व्यापार संगठन की प्रक्रिया भूमण्डलीकरण से क्या हिन्दी का दुनिया में अधिकाधिक प्रसार होगा?

4. भूमण्डलीकरण और अर्थव्यवस्थाः

हिन्दी भाषा का भूमण्डलीकरण की दृष्टि से विचार करने के लिए भारत का विश्व की अन्य अर्थ व्यवस्थाओं से तुलनात्मक अध्ययन करना विश्व के सन्दर्भ में भारत की विश्व अर्थ व्यवस्थाओं के साथ तुलनात्मक व्यवस्था करने पर सुस्थापित सकारात्मक तथ्य हमारे सामने आते हैं। आज भारत विश्व का सब से बडा लोकतंत्र हैं। यह विश्व में आर्थिक शक्ति के रूप में उभरती अर्थव्यवस्थाओं में से एक है। देश में अप्रयुक्त प्राकृतिक संसाधनों की भारी मात्रा में उसकी विपुल खनिज संपदा कृषि क्षेत्र में आत्मनिर्भरता और निर्माण की विशाल क्षमता तों है ही, प्रौद्योगिक की क्षेत्र में वर्तमान की उपलब्धियाँ, इसकी कुशल जनशक्ति, इसका फैलता उपभोक्ता बाजार और उदारीकृत आर्थिक परिवेश में भी उसने प्रतिस्पर्धी बढ़त हासिल है। इन सभी ने भारत के उद्योग, व्यापार और सेवाओं का संवर्धन प्रोत्साहन एवं इनका उन्नयन किया है।

आज भारत विश्व में काँटन और काँटन यार्न का उत्पादन करनेवाला तीसरा देश है। भारत की समृद्ध वस्त्र विरासत, विस्तृत दस्तकारी और पारंपरिक फौब्रिक्स तथा डिजाइन की समृद्धि, भारतीय फैशन उद्योग द्वारा प्रदर्शित की गई है जिसने अपनी अमिट छाप अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर छोडी है।

भारत को देश में ही जिरेरिक औषधियों द्वारा टीकों की व्यापक रूप में उपलब्धता के कारण अपेक्षकृत कृत कम लागत वाली स्वास्थ्य प्रणाली का लाभ प्राप्त है। भारत मात्रा की दृष्टि से चौथे और मूल्य की दृष्टि से तेरहवें वैश्विक स्थान के साथ विश्व में औषधियों के सब से बडे उत्पादक देश के रूप में उभरा है।

आज भारत के सार्वजनिक क्षेत्र के वाणिज्यिक बैंकों के पास 48,000 से अधिक शाखाओं का देशव्यापी नेटवर्क है और कुल बैंकिंग करोबार में इनका हिस्सा 80% से अधिक है।

5. भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि :-

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार है। इसका सकल देशी उत्पाद में लगभग 25% का एवं कुल निर्यात में लगभग 20% का योगदान है। आज विज्ञान कृषि क्षेत्र और दूध; काजू; नारियल, आम तथा केले का सब से बडा उत्पादक और फलों एवं सब्जियों, चावल, गेहूँ, मूँगफली का दूसरा सब से बडा उत्पादक होने के कारण भारतीय कृषि की अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में अग्रगण्य होने की प्रबल संभावना है।

भारत अब एक वैश्विक महाजैविक वैविध्य केन्द्र है और भारत ने जैव प्रौद्योगिनिकी के प्रयोग के माध्यम से अपनी प्राकृतिक संपदा के संरक्षण, विशिष्टीकरण तथा सतत उपयोग की दिशा में यथेष्ट प्रयास करते हुए इस क्षेत्र में लंबी और ऊँची छलांग लगायी है। भारत संख्या में उत्कृष्ट तथा विशेष गुणवत्तावाले रसयनों का भी उत्पादन करता है। जिनका विशिष्ट उपयोग होता है।

6. भारत की अर्थव्यवस्था तथा पेट्रोलियम :-

भारत में पेट्रोलियम क्षेत्र भारत की अर्थव्यवस्था का महत्त्वपूर्ण कारण है। देश में 18 तेल शोधक कारखाने हैं। उनमें जामनागर में 27 बिलियन टन की रिलायंस रिफइनरी का भारत की तेलशोधन क्षमता में 24% हिस्सा है। यह विश्व की सब से बडी ग्रास रूट रिफइनरी है।

आज भारत विश्व में सीमेंट का दूसरा सब से बडा उत्पादक देश है। भारत विश्व में इस्पात का आठवाँ सब से बडा उत्पादक देश है। प्रौद्योगिकी के मामले में यह सर्व विदित सत्य है कि भारत में कुशल ज्ञान कार्मिकों के एक प्रचुर उच्च्य गुणवत्ता और लागत किफायती पूल की उपलब्धता है।

भारत विश्व में एक आर्थिक शक्ति के रूप में तेजी से उभर रहा है। भूमण्डलीकरण के इस चुनैती भरे युग में विज्ञापनों के माध्यम से अपने-अपने उत्पादों को बेचने की क्षेत्रों में निर्यात की भारी समानताएँ निहित है; वहीं दुसरी ओर इसका उपयोगिता बाजार भी बडी तेजी से बढ़ रहा है। बहु देशीय कम्पनियों को इस विशाल देश में अपने उत्पादों को बेचने की प्रबल योजनाएँ है। इन निहित सम्भावनाओं के चलते अब इन बहुदेशीय कंपनियों को भारतीय भाषाओं में भले ही कोई लगाव न हो, तो भी बाजार की शक्ति द्वारा इन बहुदेशीय कम्पनीयों का भविष्य इन भषाओं पर टिका है। ऐसे में वे अपने विज्ञापन हिन्दी या अन्य भारतीय भाषाओं में देकर कामयाबी हासिल कर रही हैं। विश्व व्यापार में अपने व्यापार करनेवाली ये बहुदेशीय कम्पनियाँ यह भी ठीक जानती है कि भारत में उपभोक्ता बाजार महानगर और शहरी आबादी से निकल कर छोटे शहरों, कस्बों और ग्रामीणों अंचलों में भी फैलता जा रहा है और इन विज्ञापनों में, इसी अनुपात में भारतीय भाषाओं का महत्त्व भी बढ़ता जा रहा है।

भूमण्डलीकरण के इस दौर में वैश्विक धरातल पर आर्थिक और प्रौद्योगिक में उन्नति का विशेष महत्त्व है। भारत के आर्थिक उत्थान का सब से महत्वपूर्ण कारक प्रौद्योगिकी विकास ही है। वर्तमान परिवेश में एक आर्थिक दृष्टि से विकसित होने के लिए भारत को गतिशील सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों की महती आवश्यक है। अब तक भारत एक सास्कृतिक व आध्यात्मिक तेवरवाला

सामाजिक ढाँचे में विकसित होता देश रहा है। वस्तुत: किसी देश का विकास उसकी आर्थिक प्रगति पर निर्भर करता है और आर्थिक प्रगति विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर आधारित होती है तो ऐसी स्थिति में भारत केलिए यह और भी जरूरी है कि वह व्यापक स्तर पर और विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्रगति करें। निश्चय ही किसी भी देश में सामाजिक जागृति और आर्थिक परिवर्तन किसी भी विदेशी भाषा के माध्यम से नहीं किया जा सकता।

जहाँ तक हिन्दी भाषा या रचनात्मक साहित्य की बात है, वह गुणवत्ता एवं मात्रा की दृष्टि से विश्व स्तरीय और समृद्ध है। किन्तु विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में इन सभी भारतीय भाषाओं की उपलब्धि बहुत उल्लेखनीय नहीं कही जा सकती। बावजूद इसके कि भारत सरकार तथा तकनीकी शब्दावली आयोग ने लगभग 8 लाख शब्दों को पारिभाषिक शब्दों के रूप में जुटाया है। भारत को अपनी इतनी अधिक संख्या में तथा अनेक दृष्टियों से समृद्ध भाषाओं के वरदान का कोई उल्लेखनीय लाभ नहीं प्राप्त है। समस्त दर्शनों, शास्त्रों और अनुशासनों में विज्ञान और प्रौद्योगिकी का सर्वोपरी स्थान है। शीघ्र परिवर्तन होते हुए संसार के सामाजिक और सांस्कृतिक स्वरूप तथा परस्पर आदान – पदान के फल स्वरूप काफी गहराई तक प्रभावित हो रही भरतीय संस्कृति के समस्त तत्त्वों की अभिव्यक्ति हेतु हिन्दू भाषा में विज्ञान औ प्रौद्योगिकी से सम्बन्धित विषयों की अभिव्यक्ति आज अनिवार्य हो गई है।

7. हिन्दी विश्व - भाषी :-

यूनेस्को की एक रिपोर्ट के अनुसार संपत्ति विश्व के लगभग 137 देशों में हिन्दी भाषा विद्यमान है। हिन्दी भाषियों की कुल संख्या अनुमानत: सौ करोड है। भारत के प्रतिवेशी राष्ट्रों यथा नेपाल, चीन, सिंगापुर, बर्मा, थाईलैंड, मलेशिया, तिब्बत, भूटान, इण्डोनेशिया, पाकिस्तान, बंगलादेश, मालदीव आदि ऐसे देश है, जिनमें से अनेक देश बृहतर भारत के अंग थे, यहाँ हिन्दी भाषी परिवार पीढ़ी दर पीढ़ी निवास कर रहे हैं। नेपाल की भाषाएँ हिन्दी की विभाषाएँ ही हैं। बर्मा और भूटान की स्थिति भी कुछ ऐसी ही है। पाकिस्थान और बंगलादेश में जो उर्दू और बंगला प्रचलित हैं उन्हे देवनागरी में लिख दिया जाए तो वे हिन्दी से भिन्न नहीं प्रतीत होंगी। जावा, सुमत्रा और इण्डोनेशिया में जो उर्दू बोली जाती है, उसे देवनागरी में लिख दिया जाए तो वह हिन्दी ही है। दुबई की अधिकांश जनता न केवल हिन्दी समझती है, अपितु बोलती भी है।

8. हिन्दी भाषी का दूसरा वर्ग :-

भारत के मूल के अप्रवासी भारतवंशी बहुत राष्ट्र जिन्हें भारत का 'उपमहाद्वीप' कहा जा सकता है। इन में प्रमुख हैं मॉरीशिस, सूरीनाम, फाजी, त्रिनिहाड, गुयाना और दक्षिण आफ्रिका, इन देशों में लगभग डेढ़ सौ वर्षों से हिन्दी विद्यमान है। भाषा और संस्कृति की दृष्टि से ये देश एक लघु भारत ही हैं। इन देशों में पर्याप्त मात्रा में रचनात्मक साहित्य का सृजन हो रहा है। यहाँ के क्षेत्रीय हिन्दी भाषी रचनाकारों ने हिन्दी साहित्य का संवर्धन किया है। इस दृष्टि से इन देशों में हिन्दी के राजभाषाई स्वरूप के विकसित होने की अपार संभावनाएँ निहित हैं।

9. तीसरा वर्ग :-

तीसरा वर्ग, समुन्नत राष्ट्रों के हिन्दी प्रवासी संप्रति हिन्दी भाषा समाज यूरोप, अमेरिका और आस्ट्रेलिया के विभिन्न विकसित राष्ट्रों में फैला हुआ है। ब्रिटन में भारतीयों की नई कॉलोनियाँ हैं। अमेरिका, कनाडा, फ्राँस, इटली, रूस, स्वीडन, नार्वे, हॉलैंड, पौलैंड, जर्मनी, सऊदी अरब आदि देशों में पर्याप्त मात्रा में हिन्दी भाषी जन निवास कर रहे हैं। हिन्दी से इन देशों का सम्बन्ध कई वर्षों से है।

10. उपसंहार :-

विदेशी में भारतीय मूल के डॉक्टर, इंजीनियर और स्वदेशी इंजीनियरों, डॉक्टरों की अपेक्षाकृत अधिक सफलता है। भारतीय कुशल श्रामिकों की भी इन देशों में भारी माँग है। खाडी-देशों में तो ऐसे कुशल श्रामिकों की पूर्ति भारतीयों द्वारा ही हो रही है। निश्चय ही यह हिन्दी के अधिकाधिक प्रयोग का एक शुभलक्ष्य तो है ही, भाषा के प्रयोग वे विकास की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वस्तुत: हिन्दी भाषा की संरचना, स्वरूप व चिन्तन में एक विशिष्ट प्रकार की संक्रमणशील संवेदना है। जो सुन कर लोग सम्मोहित हो जाएँगे। यहाँ की हिन्दी धीरे-धीरे जन भाषा का रूप ले रही है जिस से हिन्दी भाषा के वांछित संवर्धन, विकास व प्रसार होगा।

इसके अतिरिक्त उपर्युक्त देशों के साथ हमारे वर्धित सांस्कृतिक एवं आर्थिक संबन्ध विकसित हो रहे हैं। इनके चलते नित्य कामकाज तथा मीडिया व मनोरंजन के क्षेत्र में निस्सन्देह हिन्दी के प्रयोग व विकास की असीम संभावनाएँ निहित हैं।

Lesson Writer : InamPudi Kavitha M.A.

❋ ❋ ❋

Laser Type setted :
Bapuji Hindi Vidyalayam & Tankan Vidyalayam
Bapuji Graphics, Sharoff Bazar, TENALI.
Mobile : 98480 80491, 92905 73017